"केवल मैं ही तुम्हारा एक ऐसा दोस्त हूँ जो तुम्हें कभी भी धोखा नहीं देगा।"

"क्योंकि मैं तुमसे प्रेम करता हूँ, इसलिये तुम्हारे पास, तुम्हारे अंदर प्रेम का एक छोटा सा तालाब है। जब तुम बहुत दुखी होते हो, जब तुम अपनी कमज़ोरियों के वश में हो जाते हो, उस समय मेरे प्रेम के उस तालाब में डुबकी लगाओ। तुम्हारे अंदर स्थित, मेरे प्रेम के उस तालाब में डुबकी लगाकर, अपने आपको तरोताज़ा करो। यह तालाब तुम्हारे अंदर हमेशा रहता है। अगर तुम अपनी कमज़ोरियों को इसमें रोज़ भी साफ़ करते हो, तब भी यह (प्रेम का तालाब) साफ़ और निर्मल रहेगा। चिन्ता न करो, बाबा तुमसे प्रेम करते हैं और वास्तव में यही बात महत्वपूर्ण है।

चिन्ता न करो, प्रसन्न रहो, मैं तुम्हारी मदद करूँगा।"

अवतार मेहेर बाबा

(संदर्भ—लॉर्ड मेहेर, भाग ६, पृष्ठ २१२०, दी टर्निंग ऑफ दी की, पृष्ठ ३१५, लार्ड मेहेर, भाग ६, ७, पृष्ठ २१४१)

रुस्तम फ़लाहाटी ने, जो व्यवसाय से समुद्रीय अभियन्ता (Marine Engineer) थे, अवतार मेहेरबाबा की मंडली के साथ रहने और उनके साथ काम करने का अवसर मिलने के कारण, अपनी नौकरी छोड़ दी। वह उनके साथ १९८६ से २००० तक रहे।

इस पुस्तक में लेखक ने अपने इस अनुभव का वर्णन किया है कि उन्होंने मंडली के संदेशों का अपने जीवन में किस प्रकार प्रयोग किया और इससे उन्हें बाबा की याद को अपने दैनिक जीवन का एक सम्पूर्ण और महत्वपूर्ण हिस्सा बनाने में किस प्रकार सहायता मिली।

असली ख़ज़ाना

रुस्तम फ़लाहाटी कृत अंग्रेज़ी पुस्तक
"The Real Treasure"
का अनुवाद

एक अन्तेवासी का अवतार मेहेरबाबा की मंडली के साथ जीवन



अनुवाद : श्री सतीश चन्द्र श्रीवास्तव

संपादक : डा. (श्रीमती) मेहेर ज्योति कुलश्रेष्ठ

अवतार मेहेरबाबा कॉस्मिक फ़ाउन्डेशन

असली ख़ज़ाना

रुस्तम फ़लाहाटी कृत अंग्रेज़ी पुस्तक

“The Real Treasure”
का अनुवाद

एक अन्तेवासी का अवतार
मेहेरबाबा की मंडली के साथ जीवन

अनुवाद
श्री सतीश चन्द्र श्रीवास्तव
एम.एससी., एम.ए.

संपादन
डा. (श्रीमती) मेहेर ज्योति कुलश्रेष्ठ
एम.एससी. पीएच.डी.

नवम्बर–२००८

प्रकाशक :
अवतार मेहेरबाबा कॉस्मिक फ़ाउन्डेशन
१६८–ए, बिशप रॉकी स्ट्रीट,
फ़ैज़ाबाद रोड, लखनऊ
फ़ोन : ०५२२–२३२७४७७
०५२२–२३५०२१४, ०११–४६०७५६२१
मोबाइल : ०६८७१६०८६१५, ६४१५०८०२१७

मुद्रक
शिवम् आर्ट्स, २११, पाँचवीं गली, निशातगंज, लखनऊ
फोन : ०५२२–२७८२३४८, २७८२१७२

समर्पण

मैं इस पुस्तक को प्रियतम अवतार मेहेरबाबा की मंडली को समर्पित करता हूँ जिसे मैं विश्व का आठवाँ आश्चर्य मानता हूँ। केवल अपना यह जीवन ही नहीं बल्कि मैं अपने सारे जन्मों को उनके चरणों की सेवा में सहर्ष अर्पित कर दूँगा।

vkHkkj

सन् २००० में, मेरा स्वास्थ्य पूरी तरह से नष्ट हो गया और बिना किसी की मदद के, मैं छोटे छोटे काम भी नहीं कर पाता था। इसके पहले बहुत ही सक्रिय जीवन व्यतीत करने के बाद, मैं कोई भी लाभदायक काम करने में असमर्थ होने के कारण, लगभग एक वर्ष तक संघर्ष करता रहा। इसी समय मेरे मित्रों, साइरस और सौम्या खम्बाटा ने सलाह दी कि मैं मेहेराबाद में रहकर बाबा का कार्य करने वाले प्रेमी (Resident) के रूप में, मेहेरबाबा के निकट शिष्यों के साथ, जिन्हें मंडली कहते हैं, अपने संपर्क के, अपनी ज़िन्दगी के अनुभव लिखूँ। जब मैंने इस पुस्तक को लिखना शुरू किया, उस समय मेरा मुख्य उद्देश्य अपने खाली समय को बिताना, अपनी गहरी उदासी (depression) से लड़ना और अपने मित्रों के साथ अपने अन्तेवासी के जीवन की कहानियों को बाँटना था।

सर्वप्रथम एवं सर्वोपरि, इस पुस्तक के लिए मैं प्रियतम अवतार मेहेरबाबा की मंडली, विशेष रूप से चेयरमैन भाऊ कलचुरी, के प्रति कृतज्ञ हूँ जिन्होंने ज़ोर देते हुए मुझसे आग्रह किया कि मेहेराबाद में रहकर बाबा का काम करने वाले प्रेमियों को, मंडली अपने शब्दों रूपी ''हथौड़े'' से कैसे गढ़ती थी, इन कहानियों को मैं लोगों में बाँटूँ। दूसरे मित्रों, विशेष रूप से ज़ेड और मिस्टी शंकर द्वारा और अधिक उत्साहित किये जाने पर, और दूसरा कोई काम करने में असमर्थ होने के कारण, मैंने इस पुस्तक को लिखना शुरू किया।

मैं अपनी पत्नी, मेहेर देसाई, को धन्यवाद देता हूँ जिसने सन् २००२ में मुझसे शादी की और जो मेरी सभी योजनाओं में मेरे लिये एक निरंतर सहारा और उत्साह का स्रोत है। इस पुस्तक का संपादन करने और इसे वर्तमान रूप देने के लिये मैं स्टीव क्लाइन को धन्यवाद देता हूँ। मैं जोश ली को ग़ल्तियाँ सुधारने और पुस्तक को अन्तिम रूप देने के लिये धन्यवाद देता हूँ। मैं बर्नार्ड रॉड्रिगो को कम्प्यूटर के काम और छपाई के लिये धन्यवाद देता हूँ। मेरे काम में, जो बहुत ही धीमी गति से चल रहा था,

निरंतर सहायता करने के लिये, मैं क्रैग रफ़ को धन्यवाद देता हूँ। मेरे काम की, चाहे वह कितना ही छोटा हो, क्रैग हमेशा तारीफ़ करता था। मैं अपने परिवार एवं मित्रों को धन्यवाद देता हूँ जिन्होंने मेरी बीमारी के दौरान मेरा साथ दिया और अभी भी दे रहे हैं। मैं मेहेरबाबा के आश्रम में मेहेराबाद निवासी अपने सभी भाइयों और बहनों को धन्यवाद देता हूँ जिन्होंने हमेशा मेरी सहायता की। मेहेरबाबा के प्रति प्रेम में अपना सब कुछ उन्हें (बाबा को) समर्पित करने और उनकी सेवा करने के लिए, मेहेराबाद में रहकर जीवन बिताने के लिये, मैं उन्हें प्रणाम करता हूँ।

सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण यह है कि मैं हर चीज़ के लिये, मेरी सहायता करने के लिये इतने अच्छे लोगों को मेरे जीवन में भेजने और मुझे वे सभी, सुखद और कुछ ज़्यादा सुखद नहीं, अनुभवों को देने के लिये, जो मेरे आध्यात्मिक विकास के लिये ज़रूरी थे, मेहेरबाबा का ऋणी हूँ। मैं हर बात और हर चीज़ के लिये उन्हें धन्यवाद देता हूँ।

• • •

iLrkouk

प्रिय पाठको,

बाबा के प्रेम में मेरे सभी भाइयों और बहनों को, जो इस हिन्दी अनुवाद को पढ़ रहे हैं, मेरी हार्दिक, प्रेमपूर्ण जय बाबा। सबसे पहले मैं यह कहना चाहता हूँ कि हालाँकि मैंने यह पुस्तक लिखी है लेकिन इसके असली लेखक प्रियतम मेहेरबाबा हैं और कहानियाँ मंडली द्वारा सुनाई गई हैं। बाबा के इस कार्य को आप सबके सामने प्रस्तुत करने का माध्यम बनने का मुझे सौभाग्य मिला। अगर इस पुस्तक में कोई ऐसी बात है जिससे आप सहमत नहीं हैं अथवा आपको अच्छी नहीं लगी, तो कृपया इसे मेरी कमज़ोरी समझकर छोड़ दीजिये। लेकिन, अगर इसमें ऐसी कोई बात है जो आपको अच्छी लगती है तो इसे अपने प्रतिदिन के जीवन में अभ्यास में लाकर, अपने जीवन का एक हिस्सा बनाने की कोशिश कीजिये क्योंकि इससे बाबा प्रसन्न होंगे। मैंने स्वयं इस पुस्तक को कई बार पढ़ा है और मैं अभी भी इसको पढ़ता हूँ क्योंकि मुझे मंडली द्वारा सुनाई गई कहानियों में बहुत आनन्द आता है। इन्हें पढ़ते समय अक्सर मैं मंडली के संदेशों की गहराई और गहनता पर चकित हो जाता हूँ। इन संदेशों की सादगी का वर्णन कैसे किया जाये। मुझे यह सोचकर अक्सर आश्चर्य होता है कि मैंने ऐसी पुस्तक कैसे लिख डाली क्योंकि मैंने इसके पहले बाबा की कोई भी किताब नहीं लिखी। मुझे विश्वास है कि यह पुस्तक बाबा ने लिखी है। उन्होंने मुझे कलम (पेन) की तरह इस्तेमाल करके, यह पुस्तक लिखी है। मैं उनके हाथों में सिर्फ़ एक कलम था।

मुझे आशा है कि यह पुस्तक सभी पाठकों की, बाबा की याद करने और उन पर अपना ध्यान केन्द्रित करने में, मदद करेगी जो ''सभी आत्माओं की आत्मा'' हैं।

रुस्तम फ़लाहाटी

eMyh dk lan'k

इस छोटी सी आनन्ददायक पुस्तक में, लेखक रुस्तम फ़लाहाटी ने, प्रियतम अवतार मेहेरबाबा की कृपा से, बहुत थोड़े से शब्दों में, बाबा की मंडली के समीप रहकर जीवन व्यतीत करने की सुगंध को बहुत चतुराई से गिरफ़्तार किया है।

रुस्तम को कभी कभी मंडली का बाहरी रूप से व्यवहार विलक्षण और सहानुभूति रहित प्रतीत होता था। लेकिन इसके साथ ही उसने यह भी अनुभव किया कि वे लोग हृदय को धैर्य और अत्यधिक सान्त्वना देने की क्षमता रखते थे। उसने उन लोगों के (मंडली) माध्यम से, उनके अनजाने में, बाबा के प्रेम और दया को प्रवाहित होते हुए अनुभव किया। वे लोग (मंडली) प्रियतम बाबा के कार्य के लिये, निर्लिप्त, निःस्वार्थ सेवा और आत्म–बलिदान की रीति से उसका (रुस्तम) मार्गदर्शन कर रहे थे। इससे रुस्तम को अपरोक्ष रूप से यह अनुभव हुआ कि मंडली ने प्रियतम बाबा की प्रेमपूर्ण उपस्थिति में रहने पर कैसा अनुभव किया होगा।

सभी सच्चे बाबा प्रेमी इस छोटी सी पुस्तक को, अपने में पूर्णरूप से लीन करने वाली और आनन्ददायक पायेंगे।

मेहेराज़ाद
१० अक्टूबर, २००८

ह. मेहेरवान
(मेहेरवान बी. जसावाला)

ân; dk mnxkj

मैं श्री रुस्तम बी. फ़लाहाटी का अत्यंत आभारी हूँ जिन्होंने अपनी अंग्रेज़ी पुस्तक "The Real Treasure" का हिन्दी में अनुवाद करने की मुझे अनुमति दी। मैं अवतार मेहेरबाबा कॉस्मिक फ़ाउन्डेशन का भी अत्यंत आभारी हूँ जिसने इस पुस्तक के प्रकाशन की ज़िम्मेदारी ली।

मैं श्री सी.एल. श्रीवास्तव, कु. रीता सिन्हा, कु. आकांक्षा श्रीवास्तव, कु. सीमा यादव, श्री राम अचल यादव, श्री बाबूराम यादव, श्री शम्भूनाथ श्रीवास्तव, श्री साहिल श्रीवास्तव, श्री के.डी. निगम, श्रीमती चन्द्रा श्रीवास्तव एवं श्रीमती चन्द्रा यादव का भी अत्यंत आभारी हूँ जिन्होंने विभिन्न कार्यों में, अपनी इच्छा से, प्रसन्नतापूर्वक सहायता की।

मैं शिवम् आर्ट्स के श्री पीयूष द्विवेदी और उनके कर्मचारियों को भी धन्यवाद देता हूँ जिनकी मेहनत और परिश्रम से यह पुस्तक अपने आकर्षक रूप में पाठकों तक पहुँच रही है।

मैं अपने प्रियतम अवतार मेहेरबाबा का भी अत्यंत आभारी हूँ जिनकी कृपा से यह कार्य, मेरे माध्यम से पूरा हुआ। आशा है यह पुस्तक, अपने अन्दर छिपे हुये असली खज़ाने को प्राप्त करने में पाठकों की सहायता करेगी।

जय बाबा !

लखनऊ — **सतीश चन्द्र श्रीवास्तव**

अक्टूबर, २००८ — एम.एससी., एम.ए.

fo"k; lwph

• • •

असली ख़ज़ाना

रुस्तम फ़लाहाटी कृत अंग्रेज़ी पुस्तक

“The Real Treasure”

का अनुवाद

एक अन्तेवासी का अवतार
मेहेरबाबा की मंडली के साथ जीवन

अनुवाद
श्री सतीश चन्द्र श्रीवास्तव
एम.एससी., एम.ए.

संपादन
डा. (श्रीमती) मेहेर ज्योति कुलश्रेष्ठ
एम.एससी. पीएच.डी.

नवम्बर—२००८

प्रकाशक :
अवतार मेहेरबाबा कॉस्मिक फ़ाउन्डेशन
१६८–ए, बिशप रॉकी स्ट्रीट,
फ़ैज़ाबाद रोड, लखनऊ
फ़ोन : ०५२२–२३२७४७७
०५२२–२३५०२१४, ०११–४६०७५६२१
मोबाइल : ०६८७१६०८६१५, ६४१५०८०२१७

मुद्रक
शिवम् आर्ट्स, २११, पाँचवीं गली, निशातगंज, लखनऊ
फ़ोन : ०५२२–२७८२३४८, २७८२१७२

समर्पण

मैं इस पुस्तक को प्रियतम अवतार मेहेरबाबा की मंडली को समर्पित करता हूँ जिसे मैं विश्व का आठवाँ आश्चर्य मानता हूँ। केवल अपना यह जीवन ही नहीं बल्कि मैं अपने सारे जन्मों को उनके चरणों की सेवा में सहर्ष अर्पित कर दूँगा।

vkHkkj

सन् २००० में, मेरा स्वास्थ्य पूरी तरह से नष्ट हो गया और बिना किसी की मदद के, मैं छोटे छोटे काम भी नहीं कर पाता था। इसके पहले बहुत ही सक्रिय जीवन व्यतीत करने के बाद, मैं कोई भी लाभदायक काम करने में असमर्थ होने के कारण, लगभग एक वर्ष तक संघर्ष करता रहा। इसी समय मेरे मित्रों, साइरस और सौम्या खम्बाटा ने सलाह दी कि मैं मेहेराबाद में रहकर बाबा का कार्य करने वाले प्रेमी (Resident) के रूप में, मेहेरबाबा के निकट शिष्यों के साथ, जिन्हें मंडली कहते हैं, अपने संपर्क के, अपनी ज़िन्दगी के अनुभव लिखूँ। जब मैंने इस पुस्तक को लिखना शुरू किया, उस समय मेरा मुख्य उद्देश्य अपने खाली समय को बिताना, अपनी गहरी उदासी (depression) से लड़ना और अपने मित्रों के साथ अपने अन्तेवासी के जीवन की कहानियों को बाँटना था।

सर्वप्रथम एवं सर्वोपरि, इस पुस्तक के लिए मैं प्रियतम अवतार मेहेरबाबा की मंडली, विशेष रूप से चेयरमैन भाऊ कलचुरी, के प्रति कृतज्ञ हूँ जिन्होंने ज़ोर देते हुए मुझसे आग्रह किया कि मेहेराबाद में रहकर बाबा का काम करने वाले प्रेमियों को, मंडली अपने शब्दों रूपी ''हथौड़े'' से कैसे गढ़ती थी, इन कहानियों को मैं लोगों में बाँटूँ। दूसरे मित्रों, विशेष रूप से ज़ेड और मिस्टी शंकर द्वारा और अधिक उत्साहित किये जाने पर, और दूसरा कोई काम करने में असमर्थ होने के कारण, मैंने इस पुस्तक को लिखना शुरू किया।

मैं अपनी पत्नी, मेहेर देसाई, को धन्यवाद देता हूँ जिसने सन् २००२ में मुझसे शादी की और जो मेरी सभी योजनाओं में मेरे लिये एक निरंतर सहारा और उत्साह का स्रोत है। इस पुस्तक का संपादन करने और इसे वर्तमान रूप देने के लिये मैं स्टीव क्लाइन को धन्यवाद देता हूँ। मैं जोश ली को ग़ल्तियाँ सुधारने और पुस्तक को अन्तिम रूप देने के लिये धन्यवाद देता हूँ। मैं बर्नार्ड रॉड्रिगो को कम्प्यूटर के काम और छपाई के लिये धन्यवाद देता हूँ। मेरे काम में, जो बहुत ही धीमी गति से चल रहा था,

निरंतर सहायता करने के लिये, मैं क्रैग रफ़ को धन्यवाद देता हूँ। मेरे काम की, चाहे वह कितना ही छोटा हो, क्रैग हमेशा तारीफ़ करता था। मैं अपने परिवार एवं मित्रों को धन्यवाद देता हूँ जिन्होंने मेरी बीमारी के दौरान मेरा साथ दिया और अभी भी दे रहे हैं। मैं मेहेरबाबा के आश्रम में मेहेराबाद निवासी अपने सभी भाइयों और बहनों को धन्यवाद देता हूँ जिन्होंने हमेशा मेरी सहायता की। मेहेरबाबा के प्रति प्रेम में अपना सब कुछ उन्हें (बाबा को) समर्पित करने और उनकी सेवा करने के लिए, मेहेराबाद में रहकर जीवन बिताने के लिये, मैं उन्हें प्रणाम करता हूँ।

सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण यह है कि मैं हर चीज़ के लिये, मेरी सहायता करने के लिये इतने अच्छे लोगों को मेरे जीवन में भेजने और मुझे वे सभी, सुखद और कुछ ज़्यादा सुखद नहीं, अनुभवों को देने के लिये, जो मेरे आध्यात्मिक विकास के लिये ज़रूरी थे, मेहेरबाबा का ऋणी हूँ। मैं हर बात और हर चीज़ के लिये उन्हें धन्यवाद देता हूँ।

• • •

iLrkouk

प्रिय पाठको,

बाबा के प्रेम में मेरे सभी भाइयों और बहनों को, जो इस हिन्दी अनुवाद को पढ़ रहे हैं, मेरी हार्दिक, प्रेमपूर्ण जय बाबा। सबसे पहले मैं यह कहना चाहता हूँ कि हालाँकि मैंने यह पुस्तक लिखी है लेकिन इसके असली लेखक प्रियतम मेहेरबाबा हैं और कहानियाँ मंडली द्वारा सुनाई गई हैं। बाबा के इस कार्य को आप सबके सामने प्रस्तुत करने का माध्यम बनने का मुझे सौभाग्य मिला। अगर इस पुस्तक में कोई ऐसी बात है जिससे आप सहमत नहीं हैं अथवा आपको अच्छी नहीं लगी, तो कृपया इसे मेरी कमज़ोरी समझकर छोड़ दीजिये। लेकिन, अगर इसमें ऐसी कोई बात है जो आपको अच्छी लगती है तो इसे अपने प्रतिदिन के जीवन में अभ्यास में लाकर, अपने जीवन का एक हिस्सा बनाने की कोशिश कीजिये क्योंकि इससे बाबा प्रसन्न होंगे। मैंने स्वयं इस पुस्तक को कई बार पढ़ा है और मैं अभी भी इसको पढ़ता हूँ क्योंकि मुझे मंडली द्वारा सुनाई गई कहानियों में बहुत आनन्द आता है। इन्हें पढ़ते समय अक्सर मैं मंडली के संदेशों की गहराई और गहनता पर चकित हो जाता हूँ। इन संदेशों की सादगी का वर्णन कैसे किया जाये। मुझे यह सोचकर अक्सर आश्चर्य होता है कि मैंने ऐसी पुस्तक कैसे लिख डाली क्योंकि मैंने इसके पहले बाबा की कोई भी किताब नहीं लिखी। मुझे विश्वास है कि यह पुस्तक बाबा ने लिखी है। उन्होंने मुझे कलम (पेन) की तरह इस्तेमाल करके, यह पुस्तक लिखी है। मैं उनके हाथों में सिर्फ़ एक कलम था।

मुझे आशा है कि यह पुस्तक सभी पाठकों की, बाबा की याद करने और उन पर अपना ध्यान केन्द्रित करने में, मदद करेगी जो ''सभी आत्माओं की आत्मा'' हैं।

रुस्तम फ़लाहाटी

eMyh dk lan'k

इस छोटी सी आनन्ददायक पुस्तक में, लेखक रुस्तम फ़लाहाटी ने, प्रियतम अवतार मेहेरबाबा की कृपा से, बहुत थोड़े से शब्दों में, बाबा की मंडली के समीप रहकर जीवन व्यतीत करने की सुगंध को बहुत चतुराई से गिरफ़्तार किया है।

रुस्तम को कभी कभी मंडली का बाहरी रूप से व्यवहार विलक्षण और सहानुभूति रहित प्रतीत होता था। लेकिन इसके साथ ही उसने यह भी अनुभव किया कि वे लोग हृदय को धैर्य और अत्यधिक सान्त्वना देने की क्षमता रखते थे। उसने उन लोगों के (मंडली) माध्यम से, उनके अनजाने में, बाबा के प्रेम और दया को प्रवाहित होते हुए अनुभव किया। वे लोग (मंडली) प्रियतम बाबा के कार्य के लिये, निर्लिप्त, निःस्वार्थ सेवा और आत्म–बलिदान की रीति से उसका (रुस्तम) मार्गदर्शन कर रहे थे। इससे रुस्तम को अपरोक्ष रूप से यह अनुभव हुआ कि मंडली ने प्रियतम बाबा की प्रेमपूर्ण उपस्थिति में रहने पर कैसा अनुभव किया होगा।

सभी सच्चे बाबा प्रेमी इस छोटी सी पुस्तक को, अपने में पूर्णरूप से लीन करने वाली और आनन्ददायक पायेंगे।

मेहेराज़ाद
१० अक्टूबर, २००८

ह. मेहेरवान
(मेहेरवान बी. जसावाला)

ân; dk mnxkj

मैं श्री रुस्तम बी. फ़लाहाटी का अत्यंत आभारी हूँ जिन्होंने अपनी अंग्रेज़ी पुस्तक "The Real Treasure" का हिन्दी में अनुवाद करने की मुझे अनुमति दी। मैं अवतार मेहेरबाबा कॉस्मिक फ़ाउन्डेशन का भी अत्यंत आभारी हूँ जिसने इस पुस्तक के प्रकाशन की ज़िम्मेदारी ली।

मैं श्री सी.एल. श्रीवास्तव, कु. रीता सिन्हा, कु. आकांक्षा श्रीवास्तव, कु. सीमा यादव, श्री राम अचल यादव, श्री बाबूराम यादव, श्री शम्भूनाथ श्रीवास्तव, श्री साहिल श्रीवास्तव, श्री के.डी. निगम, श्रीमती चन्द्रा श्रीवास्तव एवं श्रीमती चन्द्रा यादव का भी अत्यंत आभारी हूँ जिन्होंने विभिन्न कार्यों में, अपनी इच्छा से, प्रसन्नतापूर्वक सहायता की।

मैं शिवम् आर्ट्स के श्री पीयूष द्विवेदी और उनके कर्मचारियों को भी धन्यवाद देता हूँ जिनकी मेहनत और परिश्रम से यह पुस्तक अपने आकर्षक रूप में पाठकों तक पहुँच रही है।

मैं अपने प्रियतम अवतार मेहेरबाबा का भी अत्यंत आभारी हूँ जिनकी कृपा से यह कार्य, मेरे माध्यम से पूरा हुआ। आशा है यह पुस्तक, अपने अन्दर छिपे हुये असली खज़ाने को प्राप्त करने में पाठकों की सहायता करेगी।

जय बाबा !

लखनऊ — **सतीश चन्द्र श्रीवास्तव**
अक्टूबर, २००८ — एम.एससी., एम.ए.

fo"k; lwph

• • •

,d vUrokl h dk vorkj
egjckck dh eMyh d lkFk thou
Hkfedk

अवतार मेहेरबाबा ने स्वयं को युग का अवतार होने का दावा किया और संसार में फैले उनके करोड़ों अनुयायी इसे सच मानते हैं। अवतार मेहेरबाबा के अनुसार—संसार के थके हारे लोगों को सत्य और प्रेम का संदेश देने के लिए अवतार का जन्म समय समय पर होता है। हमारे इतिहास में वह जुरथस्त्र, राम, कृष्ण, बुद्ध, ईसा और मुहम्मद के रूप में जन्मा।

अवतार मेहेरबाबा ने अपने जीवन काल (१८६४—१६६६) में पूरे भारत और संसार में भरपूर भ्रमण करते हुए आध्यात्मिक कार्य किया। उन्नीसवीं सदी के दूसरे दशक के प्रारम्भ (१६२०) में उन्होंने भारत के महाराष्ट्र प्रदेश में स्थित अहमद नगर के उत्तर में छः मील दूर, आरन गाँव, नामक स्थान में अपने क्रियाकलापों का आधार शिविर बनाया। यह स्थान मेहेराबाद के नाम से जाना जाता है और यहीं मेहेरबाबा की समाधि स्थित है। इसे अब 'मेहेर पिलग्रिम सेन्टर', 'धर्मशाला', 'होस्टलों का स्थान' भी कहा जाने लगा है, जहाँ प्रतिवर्ष सैकड़ों तीर्थयात्री, जो मेहेरबाबा की समाधि पर माथा टेकने आते हैं, रहते हैं।

यहीं पर वे स्टाफ़—क्वार्टर भी बनाये गये हैं जिनमें अवतार मेहेरबाबा परपेचुअल पब्लिक चेरीटेबुल ट्रस्ट के तत्वावधान में कार्य करने और यहीं रहने के उद्देश्य से आये हुये लोग रहते हैं। इन लोगों को प्रायः "अन्ते वासी" (रेज़िडेन्ट) कहा जाता है। ट्रस्ट का कार्यालय अहमद नगर शहर में, ट्रस्ट परिसर में है।

मेहेरबाबा के जीवन काल में उनके अति निकटस्थ व्यक्ति, जिन्होंने अपना जीवन उन्हें समर्पित कर दिया था, वे उनके साथ ही रहते थे और उन्हें "मंडली" के जन कहा जाता है। मंडली के कुछ सदस्य, जैसे 'पादरी' और 'मनसारी', उस समय मेहेराबाद में ही रहते थे, जब मेहेरबाबा ने सन् १६६६ में शरीर छोड़ा। मंडली के अधिकांश लोग मेहेरबाबा के साथ

सितम्बर, १६४८ से उनके द्वारा स्थापित मेहेराज़ाद नामक स्थान में रहते थे जो अहमद नगर के दक्षिण में, शहर के केन्द्र से लगभग १५ कि.मी. दूर, पिम्पल गाँव के पास स्थित है।

अपने अनुयायियों द्वारा मेहेरबाबा को केवल 'बाबा' कहकर संबोधित किया जाता हैं। सन् १६६६ के बाद संसार के कोने–कोने से किसी अनिवार्य आकर्षण से खिचें तीर्थयात्रियों का, जिन्हें "बाबा प्रेमी" भी कहा जाता है, बाबा की समाधि पर माथा टेकने, मंडली जनों से मिलने, उनसे बातचीत करने के लिये मेहेराबाद और मेहेराज़ाद आना प्रारम्भ हो गया। इन स्थानों में बाबा की उपस्थिति से सुगंधित वातावरण तथा मंडली जनों के व्यक्तित्व का आर्कषण इतना प्रबल था कि बहुत से लोगों ने वहीं रहने का निर्णय किया और समय व्यतीत होते–होते उनमें से कुछ लोगों को, मेहेरबाबा ट्रस्ट द्वारा आयोजित आध्यात्मिक प्रशिक्षण कार्यक्रम के अन्तर्गत, वहाँ अन्तेवासी के रूप में रहते हुए काम करने की अनुमति मिली। मुझे समय–समय पर तीनों स्थानों, मेहेराबाद, मेहेराज़ाद और ट्रस्ट आफ़िस में रहने और कार्य करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ जिससे मुझे अधिकांश मंडली जनों से नियमित सम्पर्क का अवसर मिला। इस पुस्तक में अन्तेवासी के रूप में मेरे जीवन की कहानी है।

मेहेरबाबा के बारे में मैंने सबसे पहले १६८१ में किसी से सुना जिससे मैं मुम्बई में मिला था। उस समय मैं व्यापारिक समुद्रीय सेवा में था और नास्तिक था। मुझे अपने धर्म–भीरू मित्रों से ऐसे प्रश्न पूछने में, जिनका वे उत्तर न दे सकें, मज़ा आता था। जैसे कि, यदि ईश्वर हमारा दैवी पिता और सर्वशक्तिमान है तो वह एक बच्चे को अपाहिज रूप में और दूसरे को पूर्ण स्वस्थ रूप में जन्म लेने की अनुमति क्यों देता है। भला कौन सा पिता अपने बच्चों के साथ ऐसा व्यवहार करेगा?

आप कह सकते हैं कि मैं तत्व ज्ञान की खोज कर रहा था लेकिन मैं ईश्वर में आस्था रखने वालों को विचलित और तंग करके ऐसा कर रहा था। बाबा की फ़ोटो देखकर मेरी पहली प्रतिक्रिया थी, ''एक और बाबा, जैसे कि हिन्दुस्तान में बाबाओं की कमी हो।'' चूँकि मैंने इस विशेष बाबा के बारे में पहले कभी नहीं सुना था, अतः मैंने निश्चय किया कि यह महत्वपूर्ण नहीं हो सकते।

इस पर भी संयोग दर संयोगों की ऐसी श्रृंखला घटी (बाबा द्वारा नियोजित) कि अन्ततः मैं "डिस्कोर्सेज" (बाबा के उपदेशों) का अध्ययन करने लगा। मैं जैसे प्रश्न ईश्वर पर आस्था रखने वाले लोगों से पूछ कर उन्हें तंग किया करता था, उन्हीं प्रश्नों के बाबा द्वारा तर्क पूर्ण एवं विश्वसनीय ढँग से दिये गये उत्तरों से मैं बहुत प्रभावित हुआ। मैं अनुभव करने लगा कि हो न हो, इस बाबा की, जिसने इन गूढ़ प्रश्नों का अधिकार पूर्वक उत्तर दिया है, कुछ आध्यात्मिक स्थिति अवश्य होगी। परन्तु दूसरी ओर, जब मैं उनका जीवन–चरित्र पढ़ने लगा, तो पुनः असमंजस में पड़ गया।

बाबा का जीवन चरित्र ऐसा कदापि नहीं था जैसी कल्पना मैंने एक आध्यात्मिक गुरु का जीवन होने की थी। वह सर्वज्ञ होने का दावा करते थे, और उनके डिस्कोर्सेज़ पढ़ने के बाद उनके दावे को स्वीकार करने का मेरा मन बन गया था, इस पर भी लगता था जैसे वे स्वयं अपने ही मस्तिष्क के क्रिया कलापों से अनभिज्ञ हों। उदाहरणार्थ, वे घोषणा करते रहे कि वे अपना मौन अमुक तिथि को तोड़ेंगे जिससे सम्पूर्ण मानवता की आध्यात्मिक स्थिति में अभूतपूर्व उथल–पुथल होगी (मेहेरबाबा ने १० जुलाई १६२५ से बोलना बंद कर दिया था और जीवन भर मौन ही रहे थे), परन्तु निर्धारित तिथि आती थी और बीत जाती थी फिर भी कुछ घटित नहीं होता था। मौन खोलने की कोई अगली तिथि रखकर वे मौन ज़ारी रखते थे। उनके जीवन के केवल एक इसी पक्ष ने मुझे सर्वाधिक उलझन में डाल रखा था। उनकी जीवनी और ज़्यादा पढ़ने पर मुझे उनके बारे में कुछ और बातें पता चलीं, जिन्हें समझना मेरे लिये कठिन था और यह विरोधपूर्ण समस्या मुझसे हल नहीं हो रही थी। उनकी लिखी हुई बातें इतनी सशक्त थीं कि उन्होंने मेरे भावी जीवन का आधार गढ़ना प्रारम्भ कर दिया था। मैं बाबा को फ़रेबी अथवा आत्म मुग्ध सनकी कहकर उनकी अवहेलना करने की स्थिति में भी नहीं था। समझ में नहीं आता था कि मैं इससे क्या निष्कर्ष निकालूँ। मैं समुद्र में जाता रहा और मुम्बई लौटने पर अवतार मेहेरबाबा केन्द्र में जाने लगा। अजीब बात है कि उस समय मुझे किसी ने यह कभी नहीं बताया कि बाबा की मंडली के कुछ लोग अभी भी जीवित थे और पास में अहमद नगर में रहते थे। हो सकता है उन्होंने समझा हो कि मुझे इस बात की

जानकारी होगी। परन्तु पहली बार मैं मंडली के एक व्यक्ति से उस समय मिला जब १६८५ में भाऊ जी पश्चिमी देशों की यात्रा पर जाते समय मुम्बई केन्द्र में वार्ता देने के लिये आये।

जब भाऊ जी से मेरा परिचय कराया गया और मैंने सुना कि उन्होंने अपना वयस्क जीवन बाबा के साथ बिताया था और वहाँ रात्रि में चौकीदार की भूमिका निभाई थी, तो जैसे मेरे पूरे शरीर में बिजली की धारा प्रवाहित हो गई। व्याख्यान के बाद, मैं भाऊ जी के पास कुछ प्रश्नों को, जो मेरे मस्तिष्क में पिछले चार वर्षों से घुमड़ रहे थे, पूछने गया। भाऊ जी ने मुझे अगले दिन हवोवी दादाचाँजी के घर (इसी महिला ने सर्वप्रथम मुझे १६८१ में बाबा के बारे में बताया था) आकर मिलने को कहा।

अगले दिन भाऊ जी से मिलने का समय जैसे–जैसे निकट आता जा रहा था, किसी कारण वश, भेंट करने जाने के प्रति मेरे मन में उदासीनता समाती जा रही थी। भेंट का समय रद्द करने के इरादे से मैंने भाऊ जी को टेलीफ़ोन किया परन्तु, मेरे ऐसा कुछ कहने से पहले, भाऊ जी ने मुझसे तुरंत आने को कहा। उन्होंने कहा, "मैं तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहा हूँ।" और टेलीफ़ोन रख दिया।

भाऊ जी से मीटिंग निरस्त करने की अपनी असमर्थता से खिन्न होकर जब मैं शहर के रास्ते पार कर रहा था तो मैंने निश्चय किया कि मैं भाऊ जी से बौद्धिक बहस करके उन्हें निरूत्तर कर दूँगा और या तो अपने सभी प्रश्नों का उत्तर पा लूँगा अथवा उन्हें यह मानने के लिये विवश कर दूँगा कि उन्हें मेरे प्रश्नों के उत्तर नहीं मालूम थे। हमने लगभग एक घंटा बातचीत की। भाऊ जी ने सभी प्रश्नों के इतने गम्भीर और दिल को छू लेने वाले उत्तर दिये कि मैं गद्‌गद् हो उठा और अचानक बाबा के सभी असंगत कार्यों और व्यवहार का अर्थ मेरे समक्ष स्पष्ट हो उठा। और उसी समय मुझे यह पूरा विश्वास हो गया कि मुझे अहमद नगर में जाकर मंडली के शेष सदस्यों से मिलना ही होगा जिससे विगत चार वर्षों से मस्तिष्क में चल रहे विचारों के झंझावात से कुछ तो सुकून मिले।

तदनुसार उस मौसम में जैसे ही पिलग्रिम सेन्टर खुला (यह अत्यधिक गर्मी के महीनों में बंद रहता है), मैं मेहेराबाद गया। मुझे तत्काल

घर लौट आने जैसी अनुभूति हुई और लगा कि मैं यहीं पर रहना चाहता था।

जब मैं मेहेराज़ाद में मंडली से मिला, मुझे उन सबमें कोई चीज़ बहुत परिचित लगी। यद्यपि मैं उन सबसे पहली बार मिल रहा था, फिर भी मैंने अनुभव किया कि हम पहले भी मिल चुके थे। नहीं, इससे भी कुछ अधिक अन्तरंगता की तीव्र अनुभूति हुई–लगा जैसे वे सब मेरे बहुत–बहुत पुराने मित्र हों और हम एक दूसरे से पूर्व परिचित रहे हों।

मुझे कुछ ऐसी अनुभूति हुई कि मैं यहीं का हूँ और मुझे यहीं रहना चाहिए था। मुझे लगा कि मेरा यहाँ पहुँच पाना, मेरे जीवन में अब तक झेले गये समस्त भ्रमों, संघर्षो–पीड़ाओं का सुखद प्रतिफल है और वे सारे कष्ट सार्थक हो गये हैं। यही वह स्थान है जिसकी मैं अनजाने में खोज कर रहा था।

यह अनुभूति परिचित प्रदेश में भ्रमण की सहज अनुभूति मात्र नहीं थी क्योंकि तब मैंने अपनी यात्रा का आनंद लिया होता। मैंने अनुभव किया जैसे जीवन में प्रथम बार मेरी आत्मा को पौष्टिक खाना मिल रहा हो।

इस बात का वर्णन इस ढँग से करना जो या तो पुराना अथवा अति नाटकीय न लगे, बहुत कठिन है। दूसरी ओर मेरे वहाँ रहने के अनुभवों का आभास कराने के उद्देश्य से, उनका वर्णन करना महत्वपूर्ण हैं अन्यथा आगे का वर्णन व्यर्थ होगा और उससे कोई फ़ायदा न होगा।

जब मैं मंडली से मिला और धीरे–धीरे उनसे खोद–खोद कर प्रश्न करने लगा तो पता चला, उन सभी के पास सब प्रश्नों के उत्तर थे। उनमें से प्रत्येक मेरे हर प्रश्न का संतोषप्रद उत्तर दे सकता था, इस पर भी, प्रत्येक ने भिन्न–भिन्न उत्तर दिये। अब मुझे ज्ञान होने लगा कि वास्तव में मेरा बौद्धिक भ्रम और संदेह तो भाव जगत में चल रहे भयंकर झंझावात की, जिसके बीच मैं फँसा हुआ था, सम्पूर्ण पीड़ा का एक छोटा सा अंश मात्र था। मुझे बोध हुआ कि यद्यपि मैं उन्नतिशील और सम्पन्न जीवनयापन कर रहा था, तथापि मेरे अन्तर में गहन असंतोष व्याप्त था जिससे मैं अब तक अनजान था। मैंने जैसे–जैसे मंडली जनों से बात की, मेरे सामने यह स्पष्ट होने लगा कि मेरे प्रश्न व्यवहारिकता की दृष्टि से कितने असंगत थे।

उनके उत्तरों से मुझे इसलिए संतोष नहीं मिलता था कि वे मेरे मन को शान्त कर देते थे, बल्कि इसलिए कि वे (उत्तर) मेरे हृदय को स्पर्श करते थे।

इस तरह मनसारी चेतना के स्तरों (भूमिकाओं) के बारे में पूछने पर विनोदपूर्वक पूछतीं थीं कि मैं एयर इण्डिया के बारे में बात कर रहा था अथवा टी.डबल्यू.ए. के., जब कि एरच से पूछने पर वे विषय की सूक्ष्म विवेचना में जा सकते थे, और एरच और मनसारी, दोनों के उत्तर मुझे इसलिए संतुष्ट करते थे क्योंकि उन उत्तरों से मुझे बिना शर्त के, बिना किसी रोक टोक के उनका प्रेमपात्र होने का बोध होता था। मंडली जनों से इस तरह का सहज प्रेम, बिना प्रयास के, रस की तरह निकलता रहता था। जैसे सूर्य अपना प्रकाश और गर्मी चारों ओर बिखेर देता है, उसी तरह मंडली की उपस्थिति, मौन ही सही, किसी को भी प्रेम में भिगोकर सराबोर कर देती थी।

और इसी प्रेम के प्रकाश में, मुझे दृष्टि की वह स्पष्टता प्राप्त हुई जो पहले मुझमें नहीं थी। प्रियतम बाबा के परस्पर विरोधी आध्यात्मिक कथन, मानसिक भ्रम, अब मेरे लिये ऐसी समस्या नहीं थे जिसका समाधान न हो सके। वास्तव में आध्यात्मिकता अब 'समझने' का विषय न होकर, प्रेम से जीवन जीने का मार्ग लगने लगा। इतनी सीधी और इतनी सरल सी बात। और मेहेराबाद तथा मेहेराज़ाद के वातावरण में मंडली की उपस्थिति में, मैंने तीव्रता से अनुभव किया कि यही तो जीवन है जो मैं जी सकता हूँ; सचमुच केवल ऐसा ही जीवन जीने के योग्य है।

वहाँ से लौटने पर जब मैं अपने काम पर लौटा और अपनी पुरानी दिनचर्या में संलग्न हुआ तो फिर भ्रमित हो गया और मेरी समझ में नहीं आता था कि आध्यात्मिकता के सिद्धान्तों को व्यवहार में कैसे लाऊँ। जो बातें पहले स्पष्ट रूप से समझ में आ गई लगतीं थीं, वे पुनः अस्पष्ट और धुँधली होने लगीं। मैं अपने व्यवहार को मंडली जनों की तरह बनाने का प्रयास करता, परन्तु पता नहीं क्यों, प्रेम और सहयोग का वह वातावरण न बना पाता जो मंडली जनों के आसपास रहता था। इसलिए अगला अवसर मिलते ही मैं मेहेराबाद/मेहेराज़ाद लौटता था और वहाँ के वातावरण तथा मंडली से सम्पर्क द्वारा मेरी समझ में पुनः स्पष्टता आने

लगती। आशा करता हूँ कि निम्नलिखित छोटी–छोटी आकर्षक कहानियों से आप समझ सकेंगे कि मेरे लिए इन भेंटों के अनुभव कैसे रहे। इनमें से बहुत सी कहानियाँ कष्ट से संबंधित हैं। संभवतः ऐसा इसलिये है क्योंकि संसार में लोगों द्वारा सबसे ज़्यादा पूछे जाने वाले सामान्य प्रश्नों में से एक प्रश्न यह होता है कि, "अगर ईश्वर प्रेम करता है तो संसार में इतना अधिक कष्ट क्यों है ?" ईश्वर पर विश्वास करने में, बहुत से लोगों के मार्ग में यह बहुत बड़ी रुकावट है। जिन लोगों को ईश्वर पर विश्वास है और जो, कम से कम बौद्धिक रूप से, कष्ट के विचार को स्वीकार कर सकते हैं, मैंने व्यक्तिगत अनुभव से जाना है कि, जब आपको कष्ट होता है, यही प्रश्न मन में आता है, "मुझे ही कष्ट क्यों है ?" यह प्रश्न मैंने स्वयं कई बार पूछा है और मंडली ने मुझे जो उत्तर दिया, आपको उसे जानने में अवश्य रुचि होगी।

मेरे विचार से अगला, सबसे अधिक सामान्य प्रश्न, वास्तव में प्रश्नों की एक कड़ी है, और उस कड़ी के सारे प्रश्नों का प्रारंभ इस तरह होता है, "कैसे ? मैं यह और वह काम कैसे कर सकता हूँ ? मैं इससे कैसे बच सकता हूँ ? मैं उसे कैसे प्राप्त कर सकता हूँ ?" इन सारे प्रश्नों में से अधिकांश के उत्तरों का सार है, "उनकी (बाबा की) याद करो", और इसीलिये कुछ छोटी २ कहानियाँ याद से संबंधित हैं।

जब मैं मंडली से हुई अपनी उन छोटी २ भेंटों पर विचार करता हूँ तो मुझे अनुभव होता है कि मंडली द्वारा सहज रूप से दिये गये उत्तरों में भरे हुये ज्ञान और गंभीरता से, अब मैं नये सिरे से और अधिक मात्रा में प्रभावित होता हूँ। इतना प्रभावित मैं उस समय नहीं हुआ था जब वे उत्तर मुझे दिये गये थे। फिर भी, मैं जानता हूँ कि बहुत से पाठक इन प्रसंगों को पढ़कर, इनका विवेकपूर्ण मंथन करेंगे और सोचेंगे, "तो क्या हुआ ?" अथवा, "यह तो सभी जानते हैं।" मैं इस पुस्तक के माध्यम से आप तक जो कुछ पहुँचाना चाहता हूँ वे केवल शब्द मात्र नहीं हैं बल्कि वह प्रेमपूर्ण अधिकार भरी मिठास है जिससे वे शब्द कहे गये। अगर एक बच्चा सड़क पर चलते हुये गिर जाता है और चोट लगने से, उसके घुटनों के छिल जाने से वह रोने लगता है, तो राह चलता हुआ व्यक्ति, रुककर उस बच्चे को शांत करते हुये कह सकता है, "चिन्ता न करो, यह चोट बिल्कुल ठीक

हो जायेगी। ज़्यादा चोट नहीं लगी है।” और अधिकांश घटनाओं में बच्चा रोता रहेगा। लेकिन, अगर बच्चे के माता पिता आकर, बच्चे को अपनी बाँहों में ले लेते हैं, तो बच्चा उनके प्रेम की गहराई और चिन्ता का अनुभव करता है। इस समय जब वह बच्चे से कहते हैं, “चिन्ता न करो” तो इसका असर बिल्कुल भिन्न होता है। बच्चा माता–पिता की बात पर विश्वास करता है। वह जानता है कि माता–पिता उसकी चिन्ता करते हैं और इसलिये जब माता–पिता उससे कहते हैं कि वह ठीक हो जायेगा, तो उसे विश्वास हो जाता है।

यह मंडली की आध्यात्मिक ऊँचाई की मात्रा है जिसे उनके वार्तालापों को बार २ दोहराने से भी समझा नहीं जा सकता है। जिस प्रभुत्व के साथ वे बोलते हैं, जो प्रेम उनसे प्रवाहित होता है, वह इतना हृदयस्पर्शी होता है कि उनसे कुछ सुनना ऐसा लगता है जैसे आप अपने प्रिय माता–पिता से सुन रहे हों। मंडली की बातों पर लोगों को तुरंत अक्षरशः विश्वास हो जाता है और उनके शब्दों में ऐसी शक्ति होती है कि वे लोगों के हृदयों को रूपान्तरित कर देते हैं। यह शक्ति उनके द्वारा इस्तेमाल किये गये शब्दों की क्षमता से परे प्रतीत होती है।

आप लोगों में से जिन लोगों ने मंडली के साथ समय बिताया है, ये कहानियाँ उन लोगों के दिलों में मंडली के साथ बिताये गये अपने समय की यादें ताज़ा करेंगीं। मुझे आशा है कि जो लोग मंडली से नहीं मिले हैं, उनको इन कहानियों के माध्यम से मंडली के प्रेम की सुगंध का कम से कम एक छोटा सा झोंका मिलेगा और फ़िर आप लोग कल्पना कर सकेंगे कि मंडली के साथ रहने का अनुभव कैसा होगा। आप सोच सकते हैं कि बाबा के प्रति उनका (मंडली) प्रेम और उनके प्रति बाबा का प्रेम कितना गहरा रहा होगा क्योंकि आप उस प्रेम से अपने हृदय को पोषण प्राप्त करते हुये, अभी भी अनुभव कर सकते हैं।

• • •

ikFkuk;

सन् १९८० के दशक के उत्तरार्ध में, लगभग सभी लोग ट्रस्ट की बस से मेहेराज़ाद जाते थे। यह बस पिलग्रिम सेन्टर से जाती थी और शहर में ट्रस्ट आफ़िस के पास थोड़ी देर रुकती थी ताकि जिन लोगों को ट्रस्ट आफ़िस में काम है, वे उसे कर लें और वहाँ मौज़ूद लोग, जो मेहेराज़ाद जाना चाहें, उस बस में बैठ सकें। इसके बाद बस मेहेराज़ाद जाती थी।

कभी २ तीर्थयात्रियों के लिये दो बसें होतीं थीं। प्रायः बसों से उतरने के बाद तीर्थयात्री मंडली का अभिवादन करने के लिये एक पंक्ति में खड़े हो जाते थे। ऐसा हमेशा नहीं होता था लेकिन तीर्थयात्रियों की बढ़ती हुई संख्या और मंडली की संख्या में कमी के कारण, अन्ततः मनी और एरच के पास बहुत अधिक भीड़ होने लगी। क्योंकि मंडली जन इस बात का हमेशा बहुत ध्यान रखते थे कि कोई व्यक्ति अपने आपको उपेक्षित न समझे, इसलिये वे सबसे मिलने की पूरी कोशिश करते थे। अतः तीर्थयात्रियों को एक पंक्ति में आने की आदत पड़ गई जिससे सब लोगों को मंडली जनों से मिलने का अवसर प्राप्त हो जाता था।

मैं बाबा की बहन मनी ईरानी से मिलने के लिये पंक्ति में खड़ा था। मनी के बारे में बाबा ने कहा था कि जब वह कृष्ण थे, वह उनकी बहन, सुभद्रा थीं। हालांकि मनी के लिये यह थका देने वाला काम रहा होगा, परन्तु वह पंक्ति में खड़े हर तीर्थयात्री का अभिनंदन प्रेमपूर्ण आलिंगन के साथ करतीं थीं। मनी का स्वभाव था कि वह आलिंगन के बाद, उस तीर्थयात्री से एक, दो मिनट बातचीत या कोई मज़ाक करने अथवा कोई मनोरंजक कहानी सुनाने में बितातीं थीं।

जब मेरी बारी आई, मनी ने मेरा आलिंगन किया और फिर मेरी ओर देखते हुये गंभीरतापूर्वक कहा, “इस साल बरसात न होने से पानी की बहुत कमी है। रुस्तम, हमारी ओर से बाबा से प्रार्थना करो कि वह हमारे लिये पानी बरसायें।”

मुझे मनी की प्रार्थना पर आश्चर्य हुआ और मैंने कहा, “मनी, आप बाबा की बहिन हैं और अगर वह आपकी प्रार्थना नहीं सुनते हैं तो फिर वह मेरी प्रार्थना क्यों सुनेंगे ?”

मनी ने कहा, "प्रार्थनाओं के बारे में यह सच नहीं है। मैं तुम्हें एक कहानी सुनाती हूँ जिससे तुम्हें प्रार्थनाओं का महत्व समझने में मदद मिलेगी।

"एक बड़े हाल में दावत हो रही थी। एक मेज पर स्वादिष्ट व्यंजन रखे हुये थे। पूरी दुनियाँ से स्वादिष्ट व्यंजन मँगाये गये थे। जो लोग वहाँ इकट्ठा हुये थे, उन्हें शाही दावत दी जा रही थी। फिर भी, दावत में आने वाले सभी लोगों के लिये एक शर्त थी। हर व्यक्ति का एक हाथ पीछे उसकी पीठ पर बँधा हुआ था और दूसरे हाथ में एक लम्बा चम्मच बँधा हुआ था। इस शर्त का पालन करते हुये, वे भरपेट भोजन करने के लिये स्वतंत्र थे।

"कोई व्यक्ति सोचेगा कि वह दावत का आनंद ले रहे होंगे। लेकिन ऐसा नहीं था। लोग खुश नहीं थे। लम्बे चम्मच के कारण उनके लिये कुछ भी खाना असंभव था। बहुत लम्बा होने के कारण, चम्मच उनके मुँह तक नहीं पहुँच पा रहा था और सारा खाना फ़र्श पर बिखर रहा था। लोग बहुत अधिक अप्रसन्न थे क्योंकि जहाँ तक उनकी नज़र जाती थी, मेज़ पर स्वादिष्ट व्यंजन रखे हुये थे, परन्तु कोई भी व्यक्ति एक कौर भी नहीं खा सका।

"उसी समय, एक दूसरे कमरे में ऐसी ही दावत हो रही थी। एक शाही दावत का आयोजन था और पूरी दुनियाँ से स्वादिष्ट व्यंजन मँगाये गये थे। वहाँ इकट्ठा हुये लोगों के लिये भी वही शर्त थी। हर व्यक्ति का एक हाथ पीछे उसकी पीठ पर बँधा हुआ था और दूसरे हाथ में एक लम्बा चम्मच बँधा हुआ था। लेकिन इस दावत में एक अंतर था। हर व्यक्ति स्वादिष्ट खाने का आनंद ले रहा था। वह किस तरह खा रहे थे ? हर व्यक्ति चम्मच से खाना उठाकर, अपने सामने बैठे हुये व्यक्ति को खिला रहा था। इस तरह सब लोग खुश थे और खाने का आनंद ले रहे थे।"

मनी ने अन्त में कहा, "प्रार्थनायें भी ऐसी ही होती हैं। जब तुम किसी दूसरे के लिये प्रार्थना करते हो, उनका उत्तर ज़रूर मिलता है।"

• • •

dioy b'k&Lej.k egRoi.k g

बाबा के पुराने शिष्य, बालनातू मेहेराज़ाद में रहते थे। वह मेहेराज़ाद में रहने वाले दूसरे मंडली जनों की तरह बाबा के साथ नहीं रहे। बाबा ने उन्हें नौकरी ढूँढ़कर, संसार में रहने का निर्देश दिया। इसलिये वह कई साल तक कुरडूवाड़ी में एक स्कूल टीचर के पद पर काम करते रहे। बाबा ने उन्हें काम न होने पर, कभी भी आकर उनके साथ (बाबा के) छुट्टियाँ मनाने का अनोखा भाग्य दिया। यह एक ऐसा प्रस्ताव था जिसका बाल ने तीस सालों तक, हर अवसर पर फ़ायदा उठाया।

मैं बाल की ओर इसलिये आकर्षित हुआ क्योंकि वह उन्हीं बीमारियों से पीड़ित थे जिनसे मैं था लेकिन, फिर भी, मेरे विपरीत वह हमेशा प्रसन्न रहते थे और उनका खराब स्वास्थ्य उनके द्वारा की गई बाबा की याद में कभी बाधक नहीं था।

वास्तव में, बहुत से तीर्थयात्रियों को कभी यह पता भी नहीं चलता था कि वह बीमार थे। लेकिन, स्वयं अपच का पुराना रोगी होने के कारण, मैं जानता था कि रोग के तीव्र होने पर मरीज़ को कितना कष्ट होता था। हर बार खाना खाने पर पेट दर्द होता है और दस्त जीवन का हिस्सा बन जाते हैं। पूरे दिन निरंतर बेचैनी महसूस होती है और जब मर्ज़ बढ़ता है, आपको इतने अधिक कष्ट और बेचैनी का अनुभव होता है कि आपका मस्तिष्क धुँधला हो जाता है और किसी भी बात के बारे में सोचना लगभग असंभव हो जाता है।

१९३० के दशक में गंभीर क्षय रोग (टी.बी.) होने के बाद से बाल का स्वास्थ्य बहुत नाज़ुक हो गया था। इन सबसे ऊपर, कई दशक तक उन्हें अपच की समस्यायें रहीं और अब वह अमीबा से पीड़ित थे जिससे समस्यायें और बिगड़ गई थीं।

यह सब जानने के बाद, मैंने बाल से पूछा, "आप बाबा के घनिष्ठ प्रेमियों में से एक हैं, इसलिये अपने स्वास्थ्य के बारे में आप क्या कहते हैं? बाबा ने आपको इस हालत में क्यों रखा है ?"

बाल ने कहा, "कोई भी चीज़, भले ही वह तुम्हारे लिये कितनी ही कष्टदायक और असुविधाजनक हो, अगर वह बाबा को याद करने में तुम्हारी मदद करती है, तो वह तुम्हारे लिये अच्छी है। इसके विपरीत, कोई भी चीज़, सांसारिक दृष्टि से वह कितनी ही अच्छी अथवा उत्कृष्ट हो, अगर वह बाबा को याद करने में रुकावट डालती है, तो वह आध्यात्मिक दृष्टि से बुरी है।"

बाल ने आगे कहा, "बाबा के साथ मेरे वार्तालापों में से एक में (बाल ने प्रियतम बाबा के साथ अपने आन्तरिक वार्तालापों की तीन किताबें लिखी हैं जिनमें से हर एक के शीर्षक में 'वार्तालाप' (Conversations है) मैं बाबा से अपने ख़राब स्वास्थ्य के बारे में शिकायत कर रहा था और बाबा ने कहा, 'क्या तुम्हें वह समय याद है जब तुम्हारा स्वास्थ्य ख़राब नहीं था? मुझे बताओ, क्या तुम उस समय हृदय की इतनी अधिक गहराई के साथ, मेरी याद करते थे ?' मैंने यह बात स्वीकार की कि जब मैं स्वस्थ था उस समय मैं उनकी याद कम करता था क्योंकि उस समय मैं उन पर इतना निर्भर नहीं था। तब बाबा ने कहा, 'इसलिये ख़राब स्वास्थ्य में तुम ज़्यादा अच्छे हो।'"

बाल ने हँसकर कहा, "वह हमेशा सोचते रहते हैं कि तुम्हारी भलाई किसमें है। इसलिये चिन्ता क्यों करते हो, सबकुछ उनके ऊपर छोड़ दो।" फिर उन्होंने आगे कहा, "लोग योग, ध्यान और दूसरे काम कर सकते हैं जिनसे मन को आनन्द और उत्कृष्टता का अनुभव होता है। लेकिन, अक्सर इससे अहंकार बढ़ जाता है और वह व्यक्ति कहता है, 'देखो, मैं कितना बड़ा योगी हूँ अथवा मैं सामान्य लोगों से ऊँचा हूँ क्योंकि मैं ध्यान करता हूँ।' इसलिये, जैसा कि इस उदाहरण में है, कोई अच्छी चीज़ भी आध्यात्मिक रूप से हानिकारक हो सकती है क्योंकि यह और अधिक बंधन पैदा करती है।"

• • •

d"V&ge txku d fy; yxkb xb vkokt

भाऊ कलचुरी बाबा के निकट मंडली जनों में से एक हैं। बाबा ने उनके बारे में कहा था कि जब वह ईसामसीह थे, उस समय भाऊ जॉन थे। मैं भाऊ जी के पास था जब एक तीर्थयात्री ने उनसे पूछा, "बाबा ईश्वर हैं, वह अपने प्रेमियों का कष्ट दूर क्यों नहीं करते ?"

भाऊ जी ने उत्तर दिया, "सारा जीवन भ्रम है, एक सपना है। वह सब, जो हम अनुभव करते हैं, चाहे वह खुशी हो या कष्ट हो, सबकुछ एक सपना है। यह यथार्थ नहीं है। सुख एक अच्छा सपना है, जो आनन्द देता है जबकि कष्ट एक बुरा सपना है जो सुखद नहीं है।

"अगर बाबा चाहें तो वह कष्ट को दूर करके, इसकी जगह हमें सुख दे सकते हैं; लेकिन यह बुरे सपने की जगह अच्छा सपना देना मात्र होगा। यह बाबा का असली काम नहीं है। उनका असली काम तुम्हें, तुम्हारे सपने से जगाना है और अक्सर बुरे सपने से जगाने का उद्देश्य जल्दी पूरा होता है। यही कारण है कि हर जगह उनके प्रेमी दूसरों की अपेक्षा अधिक कष्ट में हैं।

"जब तुम उनके हो जाते हो तो भ्रम के युगों पुराने स्वप्न से तुम्हें जगाना उनका कर्तव्य हो जाता है। जिसे तुम कष्ट कहते हो वह वास्तव में तुम्हें जगाने के लिये लगाई गई उनकी आवाज़ है।"

भाऊ जी के उत्तर से मुझे हेलेन स्टाइनर राइस की एक कविता याद आ रही है जो किसी ने मुझे सुनाई थी जिसका हिन्दी अनुवाद है–

हमें बनाने वाला हमारा भला हमसे ज़्यादा जानता है,
तो शिकायत क्यों ?
हम चाहते हैं कि सदैव धूप खिली रहे
परन्तु वह
बरसात भी ज़रूरी समझता है;
हमें हँसी खुशी का शोर प्रिय है

प्रिय है उल्लास आमोद
पर हृदय की कोमलता नहीं रहेगी
यदि आँखों से न बही आँसू की बूँद;
हमारा पिता परीक्षा लेता रहता है हमारी
दुखों कष्टों से पल पल
यह परीक्षा दंड नहीं है, तैयारी है हमारी
कि हम झेल सकें आने वाला कल;
क्योंकि वृक्ष की जड़ें सीधा खड़ा रहने के लिये पुष्ट होती हैं
झेलकर तूफ़ान को
और छेनी हथौड़ी की निर्मम चोट पत्थर पर
देती है आकार रूप को;
ईश्वर बिना वज़ह नहीं सताता
और न हमारी पीड़ा जाती है व्यर्थ
क्योंकि हर हानि के पीछे छिपा होता है
भारी लाभ का अर्थ;
और जब हम उसके द्वारा दिये गये वरदानों की
करते हैं गिनती
तो शिकायत का कारण नहीं सूझता
न ही मिलता है वक्त;
असंगत जान पड़ती है शिकायतों की गिनती
पिता को बच्चे सदा प्यारे होते हैं,
अतः उसके पास है एक ही विकल्प;
वह नहीं देता है अस्थाई खुशी
जब कष्ट ही कर सकता है आत्मा का कायाकल्प।
इसलिये जब कभी हम होते हैं परेशान,
और जब सब कुछ होता है ग़लत
ईश्वर कर रहा होता है काम हमारे अंदर,
हमारी आत्माओं को बनाने के लिये ताक़तवर।

• • •

nloh eth

बाबा एरच जसावाला से अपना संबंध अपनी 'माँ' कहकर बताते थे क्योंकि एरच बाबा की व्यक्तिगत ज़रूरतों का ध्यान रखते थे। बाबा उन्हें अपना दोस्त भी कहते थे और कहते थे कि जब वह ईसामसीह थे, उस समय एरच पीटर थे। एक तीर्थयात्री ने एरच से पूछा, "अगर सबकुछ ईश्वर की मर्ज़ी से होता है, तब कत्ल, बलात्कार और चोरी के बारे में आप क्या कहेंगे ? क्या वह भी ईश्वर की मर्ज़ी है ?"

एरच ने उत्तर दिया, "सबकुछ ईश्वर की मर्ज़ी से होता है; यहाँ तक कि उसकी मर्ज़ी के बिना एक पत्ता भी नहीं हिल सकता, लेकिन उसकी मर्ज़ी क्या है ? सबसे पहले हमें यहीं समझना है। उसकी मर्ज़ी कर्म का विधान (कानून) है जिसका अर्थ है 'तुम जो कुछ करते हो, वही तुम्हें कर्म फल के रूप में वापस मिलता है।'

"कर्म के विधान को तोड़ा नहीं जा सकता है, इसका उल्लंघन नहीं किया जा सकता है और न ही इसका कोई अपवाद है। यह उसकी मर्ज़ी है और पूरी सृष्टि इसके अधीन है। पूरी सृष्टि पर उसकी मर्ज़ी का शासन है। जिन लोगों की हत्या होती है, लूटे जाते हैं, बलात्कार किया जाता है, उन्होंने अपने पिछले जन्मों में यह सब काम किये होंगे, इसलिये ईश्वर की मर्ज़ी से, कर्म के विधान के अधीन होने के कारण, वर्तमान जीवन में, अपने पिछले जन्मों के इन्हीं कार्यों के कारण उनके साथ यह सब होता है।"

एरच ने थोड़ा रुककर आगे कहा, "इसे मैं तुम्हें एक कहानी द्वारा समझाता हूँ। एक राजा अपने राज्य में शासन करता है और अपने राज्य में कानूनों के द्वारा सामंजस्य स्थापित करता है। ये कानून उसके मंत्रियों की सभा द्वारा राजा के सिपाहियों की मदद से लागू किये जाते हैं। अब, राज्य का कानून है कि चोरी की सज़ा कारावास और हत्या की सज़ा फाँसी है।

"एक गाँव में एक आदमी चोरी करता है। उस पर मुकदमा चलने से वह दोषी पाया जाता है और उसे जेल में बंद कर दिया जाता है। दूसरा आदमी हत्या करता है। मंत्रियों की सभा द्वारा उस पर भी मुक़दमा चलाया

जाता है और उसे फाँसी दे दी जाती है। जिस समय यह सब हो रहा होता है, राजा को इन सबका पता भी नहीं होता क्योंकि मंत्री और सिपाही सब बातों का ध्यान रखते हैं, और फिर भी, यह राजा की मर्ज़ी से होता है।

"वह (राजा) कुछ नहीं करता है, लेकिन उसकी मर्ज़ी, उसके कानून के द्वारा, राज्य पर शासन करती है। ईश्वर की मर्ज़ी में भी ऐसा ही होता है। ईश्वर कुछ नहीं करता है, और फिर भी पत्ते का ज़रा सा हिलना भी उसकी मर्ज़ी के बिना नहीं होता।"

• • •

de vkj Ñik

कर्म के बारे में बहस होने पर ये प्रश्न स्वाभाविक रूप से होते हैं कि क्या व्यक्ति के कर्म को बदला जा सकता है। एक बार ऐसी ही एक बहस के प्रत्युत्तर में बाल नातू ने मुझे निम्नलिखित कहानी सुनाई।

"मान लीजिये, एक व्यक्ति बैंक जाता है जहाँ पर उसका खाता है और वह मैनेजर से कहता है कि वह तीर्थयात्रा पर जाना चाहता है इसलिये उसे १५०० रु. की ज़रूरत है। मैनेज़र उस व्यक्ति से इन्तज़ार करने के लिये कहता है क्योंकि उसे उस व्यक्ति के खाते की जाँच करनी है। जाँच करने के बाद, मैनेजर कहता है, 'मुझे अफ़सोस है, तुम अपने खाते में से केवल १००० रु. निकाल सकते हो क्योंकि उसमें केवल इतने ही रुपये हैं।'

"कर्म भी वैसा ही होता है। तुम्हें केवल वही मिलता है जो तुम्हारे खाते में जमा होता है जिसका निर्णय तुम्हारे अच्छे और बुरे कार्यों द्वारा होता है। ये अच्छे और बुरे कार्य तुम्हारे खाते में संस्कारों के रूप में जमा हो जाते हैं। तुम इसे भाग्य कह सकते हो।

"अब अगर मैनेजर का बेटा उसके पास जाकर यही प्रार्थना करता और तीर्थयात्रा पर जाने के लिये १५०० रु. माँगता तो मैनेज़र की प्रतिक्रिया

दूसरे ढँग से होती। वह अपने बेटे से २००० रु. ले जाने के लिये कहता और इसके बाद भी उसे चिंता होती कि शायद यह रु. भी यात्रा के लिये कम न पड़ें।

"बाबा की कृपा अपने बेटे के लिये मैनेजर के प्रेम की तरह है। वह अपने बेटे के खाते की जाँच करने की ज़िद नहीं करता। अपने बेटे के लिये प्रेम के कारण, वह उसकी सहायता करना चाहता है। बाबा की कृपा ऐसी ही होती है। पिछले जन्मों से तुम्हारे कर्म तुम्हारे साथ हैं लेकिन उनकी (बाबा) कृपा कर्मों के प्रभाव को कम कर देती है। उनकी कृपा प्राप्त करने के लिये, हमें उनकी निरंतर याद करना और उन्हें पुकारते रहना होगा।"

बाल ने हँसते हुये आगे कहा, "हम लोग उस बेवकूफ़ बेटे की तरह हैं जो अपने मैनेज़र पिता से कहता है, 'पिताजी, मैं आपसे २००० रु. नहीं ले सकता क्योंकि मेरे खाते में केवल १५०० रु. बचे हैं।' बेटा अपने पिता के प्रेम और चिन्ता को नहीं समझ पाता।

"इसी तरह, अगर हम बाबा की प्रेमपूर्ण कृपा को स्वीकार करने के बजाय, अपने कर्मों के मार्ग से जाने की जिद करते हैं तो बाबा कहते हैं, 'ठीक है, यदि तुम अपने इकट्ठा हुये कर्मों के फल के अधीन रहना चाहते हो तो ऐसा ही सही; मैं तो अपनी कृपा के द्वारा तुम्हें उससे ज़्यादा देना चाहता था, लेकिन तुम अपने कर्मफल के अधीन रहना चाहते हो तो यह भी ठीक है।'"

इससे मुझे याद आता है कि बाल नातू निम्नलिखित पंक्तियों को उद्धृत करते हुये अक्सर हँसते थे–

"अगर न अभी, तो फिर कभी, हम मस्त बनेंगे कभी न कभी।"

''अर्थात् अगर अभी नहीं तो बाद में कभी, हम ईश्वर के प्रेम में उन्मत्त आत्मा, मस्त बन जायेंगे।''

• • •

lR; thou esa mRlkg vkSj [kq'kh ykrk gS

बाबा की महिला मंडली महीने में एक बार बाबा की समाधि पर माथा टेकने आती थी। उनके आने के समय की सूचना पहले से दे दी जाती थी और अक्सर उनका अभिवादन करने के लिये तीर्थयात्रियों और मेहेराबाद में रहकर बाबा का काम करने वाले प्रेमियों की (Residents) अच्छी खासी भीड़ हो जाती थी।

यह दिन एक ख़ास अवसर की तरह लगता था और उसमें भाग लेने के कारण मैं अपने आपको बहुत भाग्यशाली समझता था। जब महिलायें आरती करतीं थीं तो समाधि के चारों ओर का वातावरण प्रेम और भक्ति से सराबोर हो जाता था।

बाबा की समाधि पर हार चढ़ाने और आरती तथा प्रार्थनायें करने के बाद, महिला मंडली, मेहेरा की समाधि और फिर स्ट्रेचर (जिस पर शरीर छोड़ने के बाद बाबा को मेहेराबाद लाया गया था) तथा बाबा के केबिन में लगी हुई बाबा की फ़ोटो पर हार चढ़ातीं थीं।

इसके बाद महिला मंडली टिन शेड (बड़ा सा बरामदा, जिसके ऊपर टिन की छत है) में जाकर बाबा की गद्दी अथवा सिंहासन पर हार चढ़ाती थी। प्रायः महिला मंडली वहाँ पर थोड़ी देर बैठती थी और वहाँ एकत्र हुये सभी लोगों का अभिवादन करती थी। मनी बाबा की कुछ कहानियाँ अथवा चुटकुले सुनातीं थीं और जो भी बाबा प्रेमी मनी के पास जाता था उसे मनी प्रेम से गले लगातीं थीं।

एक बार दिल्ली की एक महिला मनी के पास पहुँची और उनसे गले मिली। मनी ने उससे उसका नाम, पता पूछा। महिला ने बताया और फिर मनी को याद दिलाने की कोशिश की कि वह अपनी मेहेराबाद की पिछली यात्रा में (लगभग तीन साल पहले) किस तरह उनसे मिली थी।

मनी के चेहरे पर कुछ क्षण तक कोई भाव नहीं आया और फिर वह अपने चेहरे पर ज़ोरदार मुस्कुराहट लाते हुये बोलीं, "तुम्हारे साथ मुलाक़ात

मुझे अच्छी तरह याद है।" वह महिला स्वाभाविक रूप से बहुत उत्साहित हुई कि मनी को उसकी याद थी और वह प्रसन्नतापूर्वक चली गई।

जैसे ही मनी मुड़कर, किसी और प्रेमी का अभिवादन करने के लिये चलने लगीं, मैंने धीरे से गुजराती (अपने देश की भाषा) में कहा, "यह सफेद झूठ था, था न ? आपके चेहरे के भाव से, ऐसा नहीं लगता था कि आपको उसकी याद थी।"

मनी ने मुस्कुराते हुये मेरी ओर देखा और मेरा हाथ पकड़कर कहा, "उस समय तुमने उसके हृदय की खुशी देखी थी जब मैंने उस महिला से कहा कि मुझे उसकी याद थी। कोई भी बात, जिससे किसी का हृदय प्रसन्न होता है, झूठ कैसे हो सकती है ? बाबा की नज़रों में यह सत्य है। बाबा ने यहाँ तक कहा है कि एक मुस्कुराहट, जो किसी निराश हृदय को खुशी देती है, एक शब्द, जो निराशा के समय आशा और खुशी देता है, बड़े से बड़े त्याग और साहसिक आत्म निषेध के समान एक बहुत बड़ी सेवा मानी जाती है। सत्य वह है जो किसी व्यक्ति को भावनात्मक रूप से उत्साह और सहारा देकर, प्रसन्नता का वातावरण पैदा करता है।"

• • •

rkt egy

एक बार मनी ने सच बोलने पर चर्चा की। उन्होंने बताया, "बाबा चाहते थे कि हम लोग हमेशा सच बोलें लेकिन हमें सब कुछ कहना ज़रूरी नहीं था।"

एक बार एक बाबा प्रेमी महिला पहली बार मेहेराज़ाद आ रही थी। बाबा के घर की सुंदरता और वातावरण से वह बहुत प्रभावित हुई। जब उसके जाने का समय आया तो वह उदास लग रही थी।

मनी ने उसे रोते देखकर, चुप कराने की कोशिश की। उसने मनी से कहा, "मनी, मैं जाने के कारण नहीं बल्कि किसी और वज़ह से रो रही हूँ।"

मनी ने कहा, "मुझे बताओ क्या बात है और हो सकता है मैं तुम्हारी कोई मदद कर सकूँ।"

उसने मनी को अपनी कहानी सुनाई।

"मेरी भारत यात्रा का सारा ख़र्च मेरी दादी ने इस शर्त पर दिया था कि मैं ताजमहल जाऊँ और फिर उन्हें इसके बारे में बताऊँ। उनकी हमेशा ताजमहल देखने की बहुत इच्छा थी, पर वह नहीं देख पाईं; इसलिये वह चाहतीं थीं कि मैं उनके लिये ताजमहल जाऊँ। मैं कुछ दिन मेहेराबाद और मेहेराज़ाद में रहकर, फिर ताजमहल देखने जाना चाहती थी। लेकिन यहाँ पर सबकुछ इतना सुंदर था कि मैं जा नहीं सकी। क्योंकि अब अमरीका जाने का समय आ गया है इसलिये मैं स्वयं को अपराधी महसूस करके दुखी हूँ क्योंकि मैंने दादी से किया गया अपना वादा नहीं निभाया। मैं उनके सामने जाने से डर रही हूँ।''

मनी ने कहा, ''बस यही बात है ? मैं तुम्हें बता सकती हूँ कि तुम क्या करो।''

महिला ने पूछा, ''क्या आप चाहती हैं कि मैं झूठ बोलूँ ? दूसरों ने यही सलाह दी है लेकिन मैं अपनी दादी से झूठ नहीं बोल सकती।''

''तुम्हें झूठ बोलने की बिल्कुल ज़रूरत नहीं है। जब तुम बम्बई जाओ तो होटल ताजमहल ज़रूर जाना। फिर, जब तुम्हारी दादी तुमसे पूछें तो कहना कि तुम ताजमहल गई थीं। और यह बहुत सुंदर था। यह बात झूठ नहीं होगी।'' वह महिला खुश हो गई। घर जाने के बाद उसने मनी को पत्र लिखा जिसमें उसने ताजमहल होटल की अपनी यात्रा और अपनी दादी से भेंट के बारे में लिखा था जो ताज की उसकी यात्रा के बारे में सुनकर बहुत खुश हुईं थीं। उसने मनी को उनकी सलाह के लिये धन्यवाद भी दिया।

• • •

Ip dgus esa 0;ogkj d'kyrk dk i;kx

एरच अक्सर सत्य बोलने के बारे में बात करते थे। वह प्रायः दृढ़तापूर्वक यह स्वीकार करते थे कि ''सत्य वह है जो किसी व्यक्ति को उत्साह और भावनात्मक सहारा देता है,'' और उन्होंने मंडली हाल में कई बार यह कहानी सुनाई थी कि बाबा ने यह बात उनको किस प्रकार समझाई।

एक दिन उन्होंने इस विषय को विस्तार से बताते हुये कहा, ''तुम किसी सच्चाई का वर्णन कर सकते हो, लेकिन ऐसा करते समय अगर तुम किसी को नीचा दिखाते हो तो यह सच नहीं है।

''एक बार एक तीर्थयात्री ने मुझसे कहा, 'अगर मैं किसी व्यक्ति के स्वभाव के बारे में सच कहता हूँ तो लोगों को अच्छा नहीं लगता है।' यह इस बात पर निर्भर करता है कि आप इसे कैसे कहते हैं। तुम जो कुछ कहते हो और जिस ढँग से कहते हो, उसके बारे में सावधान रहना होगा। अगर तुम्हारी बात से किसी को भावनात्मक चोट पहुँचती है तो वह सच नहीं है। क्योंकि सच व्यक्ति को भावनात्मक रूप से उत्साहित करता है।

''मान लो तुम किसी बदसूरत औरत को देखते हो और उसे बताते हो कि वह बदसूरत है। तुमने एक सच्चाई का वर्णन किया है लेकिन यह सत्य नहीं है क्योंकि तुमने उसके दिल को तोड़ दिया है। लेकिन अगर तुम यह कहकर उसकी प्रशंसा करते कि उसका हृदय सरल और चेहरा मित्रतापूर्ण है, तो यह सच होता।

''अगर तुम्हें यह पता चलता है कि कोई बाबा प्रेमी कोई ग़लत कार्य कर रहा है अथवा उससे कोई ग़ल्ती हो गई है तो तुम्हें उससे यह बात बहुत सावधानीपूर्वक कहनी होगी। अगर तुम बिना सोचे समझे उसे उसकी ग़लती बताते हो तो उसे गुस्सा आयेगा। वह यह समझेगा कि तुम उस पर आक्रमण कर रहे हो, जबकि ऐसा नहीं है। वह अपना बचाव करेगा और तुम पर आक्रमण करेगा। किसी भी व्यक्ति पर आक्रमण करने पर वह यही करेगा।

''इसलिये किसी व्यक्ति की ग़लती किस तरह बताओ, इस बारे में तुम्हें बहुत सावधान रहना होगा। तुम्हें प्रेमपूर्ण और व्यवहारकुशल होना होगा। सबसे पहले, तुम्हें प्रेम से उस व्यक्ति का विश्वास जीतना होगा। पहले उसके बाबा के कार्य और कोशिशों की तारीफ़ करो। उसके किसी अच्छे काम की तारीफ़ करो। फिर उससे पूछो कि वह इस समय क्या कर रहा है। जब वह अपने काम के बारे में बताते हुये उस जगह आता है जहाँ पर उसकी ग़लती को सुधारने की ज़रूरत है, उस समय उसे सावधानी से सही ढँग से काम करने की सलाह दो। उसे यह बताये बिना कि वह ग़लत है, काम को करने के एक दूसरे ढँग को सलाह के रूप में बताओ। यह सब ऐसा लगना चाहिये कि यह उस व्यक्ति का प्रस्ताव है तुम्हारा नहीं।

''यह एक कला है, एक दैवी कला। बाबा के साथ ऐसा ही होता था। बहुत ही साधारण बात भी बहुत मुश्किल हो जाती थी। आध्यात्मिक प्रशिक्षण इसी सबके बारे में है।''

इस विषय पर मनी के सबसे प्रिय उद्धरणों (Quotes) में से एक था:

करो तो ऐसा कि खुदा भी खुश हो और शैतान भी नाराज़ न हो।

अर्थात् इस तरह व्यवहार करो कि ईश्वर भी प्रसन्न हो जाये और शैतान भी नाराज़ न हों।

एरच ने एक बार कहा, ''कई बार बाबा हमें ऐसी आज्ञायें देते थे कि उनका पालन करना बहुत मुश्किल होता था। उनका पालन करने के लिये, हमें व्यवहार कुशल होना पड़ता था। उदाहरण के लिये, जब हम बाबा के साथ यात्रा करते थे, वह हमें आज्ञा देते थे कि हम उनका परिचय किसी को न दें।

''अगर कोई व्यक्ति बाबा की ओर इशारा करके हमसे पूछता था कि 'वह कौन हैं ?' तो उस समय हम क्या करते ? बाबा की आज्ञा थी कि हम झूठ न बोलें और इस घटना में हम सच भी नहीं बता सकते थे; तो मैं क्या करता ?

''मैं दिखावा करता था कि मैंने उस व्यक्ति की बात नहीं सुनी और उससे कहता था, 'श्रीमान्, क्षमा कीजिये, ज़रा ज़ोर से बोलिये।' मैंने बिना झूठ बोले ऐसा नाटक किया जैसे कि मुझे कम सुनाई देता था।

''वह व्यक्ति ज़ोर से प्रश्न दोहराता था, 'क्या वहाँ बैठा हुआ व्यक्ति मेहेरबाबा हैं ?'

''मैं फिर से दिखावा करता था जैसे कि मैंने ठीक से नहीं सुना। 'आपने क्या कहा, कौन से बाबा ? कृपया फिर से कहिये।'

''मेहेरबाबा का नाम कई बार दोहराने के बाद, उस व्यक्ति को यह विश्वास हो जाता था कि क्योंकि मैं मेहेरबाबा के नाम से परिचित नहीं था इसलिये मेहेरबाबा, जो हमारे ग्रुप के लीडर थे, मेहेरबाबा नहीं हो सकते।

''इसी बीच ग्रुप के लोग आगे चले जाते थे और मैं माफ़ी माँगकर दौड़कर चला जाता था। बाबा के साथ ऐसा ही होता था। तुम यह नहीं कह सकते थे, 'नहीं, वह मेहेरबाबा नहीं हैं।' वह झूठ होता और बाबा यह पसंद नहीं करते।

''क्या तुमने वह कहानी सुनी है जब बाबा ने आधी रात में मुझे धनियाँ की पत्तियाँ लाने की आज्ञा दी ? पूरा बाज़ार बंद था और हर व्यक्ति गहरी नींद में था आधी रात में बाबा ने मुझसे अपने लिये थोड़ी सी धनियाँ की पत्तियाँ लाने को कहा।

''संयोगवश मैं सब्जी बेचने वाले का घर जानता था। मेरे लिये कठिन समस्या यह थी कि दिन में उससे मेरी बहुत ज़ोर से लड़ाई हो गई थी क्योंकि वह गंदे पानी से सब्जियाँ धो रहा था या ऐसी ही कोई बात थी। मैं उससे बहुत नाराज हुआ था कि यह बिल्कुल ग़लत था। अब मुझे इसी व्यक्ति को आधी रात में जगाकर धनियाँ की पत्तियाँ माँगना था।

''मैंने उसके घर जाकर दरवाज़ा खटखटाकर उसको जगाया। वह मुझे पहचान गया और बहुत परेशान हुआ। उसने गुस्से से पूछा, 'तुम क्या चाहते हो ?' मैं जानता था कि सामान्य परिस्थितियों में वह मुझे किसी भी तरह धनियाँ नहीं देगा, इसलिये मैंने दुख भरी आवाज़ में प्रार्थना की, 'कृपया मेरी सहायता करो। मेरे बड़े भाई की अन्तिम इच्छा हरी धनियाँ खाने की है।'

''इस तरह, बिना झूठ बोले, मैंने ऐसा प्रकट किया कि मेरे बड़े भाई मरने वाले थे। बाबा ने हमसे कहा था कि हम उन्हें 'अपना बड़ा भाई' कह सकते थे और जब उन्होंने मुझे बुलाया, उनकी अन्तिम इच्छा थोड़ी सी धनियाँ खाने की थी। इसलिये यह झूठ बोलना नहीं था। यह सच था।

''सब्जी बेचने वाले ने सोचा कि कोई मरने वाला था इसलिये उसने अपनी दुकान खोलकर, मुझे थोड़ी सी धनियाँ दी जो मैंने लाकर बाबा को दे दी।''

• • •

jke uke jVu okyk rkrk

बाल नातू अपनी आदत के अनुरूप तीर्थयात्रियों की भीड़ से बचने के लिए अपने कमरे में बैठे थे। लेकिन तीर्थयात्री उन्हें खोजकर उनसे बाबा की कहानियाँ सुनने के लिये, कमरे में फर्श पर जा बैठते थे। उस दिन बाल नातू की पुस्तक 'जागृतिकार से वार्तालाप' पर चर्चा चल रही थी।

एक तीर्थयात्री ने टिप्पणी की कि उसे पुस्तक बहुत सशक्त लगी थी। लेकिन उसे संदेह था कि बाल वास्तव में पुस्तक में लिखी बातें व्यवहार में लाते भी होंगे। उसने कहा कि वह और अधिकांश तीर्थयात्री बाबा की शिक्षाओं को अमल में लाना कठिन समझते हैं।

बाल ने कहा, "दूसरों की बात तो मैं नहीं जानता लेकिन मेरी क्या स्थिति है इसे स्पष्ट करने के लिए मैं तुम्हें एक कहानी सुनाता हूँ।

"एक व्यक्ति ने अपने तोते को ईश्वर का नाम लेना सिखाया। सुबह से रात तक तोता ईश्वर का नाम रटता रहता था। अगर कोई मेहमान आता था तो तोता ज़ोरों से 'राम, राम, राम, राम" रटना प्रारम्भ कर देता था।'

"जल्द ही तोते की ख्याति चारों ओर फैल गई और लोग आदर तथा सम्मान से उसकी चर्चा करने लगे। एक दिन घर में आग लग गई और तोता उसमें फँस गया। जैसे ही आग की गर्मी तोते के पिंजरे तक पहुँची तो वह 'राम, राम, राम, राम' रटने के बजाय 'टें, टें, टें, टें' करने लगा।

"मुसीबत की घड़ी में तोता ईश्वर का नाम भूल अपने निजी आचरण में लौट आया। मैं उसी तोते की भाँति हूँ।"

बाल की कथा सुनकर हम सब खूब हँसे। एक यात्री ने कहा, "बाल, हम सबकी संभवतः यही स्थिति है।" बाल ने हँसते हुए कहा, "सबकी बात मैं नहीं जानता परन्तु मैं तो ऐसा ही हूँ।"

• • •

ckck viuk dke vdsys djrs gS

हम सब मंडली हाल में बैठे हुये थे जब अचानक एरच ने मेरी ओर मुड़कर, मुझसे बाबा के सम्पर्क में आने की मेरी कहानी सुनाने के लिए कहा।

मैंने संक्षेप में बताया कि मैं एक नास्तिक था। मैं इंजीनियरिंग कालेज में पढ़ रहा था। और मैंने अपने दोस्त, रयोमन दादाचाँजी से कुछ किताबें पढ़ने के लिए लीं थीं। जब मैं किताबें लौटाने के लिये उसके घर गया तो मेरी मुलाक़ात उसकी माँ, हवोवी से हुई। वह ऐसी महिला थीं जो बाबा के बारे में बात नहीं करतीं थीं लेकिन सरलतापूर्वक उन्हें आपके ऊपर ढकेल देतीं थीं और यही उन्होंने मेरे साथ किया।

उन्होंने मुझे बाबा की कई छोटी छोटी किताबें और फ़ोटो देकर कहा, ''बाबा को अपने साथ ले जाओ। वह तुम्हारी सारी समस्याओं को हल कर देंगे।''

बाबा की फ़ोटो देखते ही मेरी पहली प्रतिक्रिया थी, ''एक और बाबा, जैसे कि अभी पर्याप्त बाबा नहीं हैं।'' हवोवी मुझे जो कुछ दे रही थीं, मुझे उसमें कोई रुचि नहीं थी लेकिन उनका व्यक्तित्व ऐसा था कि मैंने सब कुछ चुपचाप ले लिया। सामान्य रूप से मैं अपने विश्वास को कि ईश्वर नहीं है, लोगों को दृढ़तापूर्वक बताता था। यह बाबा के सम्पर्क में आने की मेरी यात्रा का प्रारम्भ था।

जब मैंने अपनी कहानी ख़त्म की, एरच ने कमरे में चारों ओर देखते हुये पूछा, ''अगर हवोवी ने रुस्तम को बाबा से परिचित नहीं कराया होता तो रुस्तम पर क्या बीती होती ? आज रुस्तम कहाँ होता ?''

एरच रुके और हाल में बैठे हुये लोगों में से किसी ने भी अंदाज़ लगाने की कोशिश नहीं की। एरच ने हँसकर कहा, ''रुस्तम अभी भी हमारे साथ यहाँ पर बैठा होता। रुस्तम को यहाँ पर बाबा लाये हैं, हवोवी नहीं। वह मात्र एक माध्यम थी। अगर तुम्हें किसी को धन्यवाद देना है तो वह मेहेरबाबा हैं। तुम्हारे जीवन में सभी चीज़ों को वही लाते हैं।

''जब कोई तुम्हारी मदद करता है, उस व्यक्ति को नहीं बल्कि मेहेरबाबा को धन्यवाद दो। वह व्यक्ति केवल एक माध्यम है। हम उस व्यक्ति को, माध्यम को धन्यवाद देते हैं और बाबा को धन्यवाद देना भूल जाते हैं। ऐसा ही होता है, हर चीज़ के लिये सृष्टि को रचने वाले को धन्यवाद देने के बजाय, हम सृष्टि के बारे में सोचते हैं– यह सब भ्रम के कारण होता है।''

एक तीर्थयात्री ने दृढ़तापूर्वक विरोध किया, ''एरच, हमें उस व्यक्ति की भूमिका के लिये, उसे भी धन्यवाद देना चाहिये।''

एरच ने उत्तर दिया, ''अगर एक डाकिया आकर तुम्हें १०,००० रु. का मनीआर्डर देता है तो तुम डाकिया को धन्यवाद दोगे या फिर उस व्यक्ति को जिसने मनीआर्डर भेजा ?''

एरच ने आगे कहा, ''अगर तुम चाहो तो दोनों को धन्यवाद दे सकते हो, लेकिन बाबा को पहले धन्यवाद दो।''

• • •

eu dk thruk

मनसारी मेहेराबाद में रहने वाली मंडली में से एक थीं। वह वहाँ पर सन् १९३८ से थीं। जिस समय वह बाबा के पास आईं, उनकी एकमात्र इच्छा बाबा के साथ रहने की थी। लेकिन बाबा की आज्ञा से उन्होंने अपने जीवन का अधिकांश समय मेहेराबाद पहाड़ी पर रहकर बिताया। वह बाबा से केवल कभी कभी मिल पाती थीं।

बीमार होने पर शहर जाने अथवा बाबा से मिलने जाने के अलावा, उनको रेलवे लाइन पार करके निचले मेहेराबाद में जाने की बाबा की आज्ञा

नहीं थी। एक बार उन्होंने बताया कि उन्हें दो काम बिल्कुल अच्छे नहीं लगते थे : और वे थे खाना बनाना और कपड़े सिलना। अब वह इन्हीं कामों में अपना समय व्यतीत करती थीं। हालांकि वह मेहेराबाद पहाड़ी पर अकेली, सन्यासी की तरह जीवन व्यतीत कर रहीं थीं, फिर भी वह जीवन से भरपूर और लोगों की भीड़ में खुश रहने वाली थीं। मेहेराबाद आने वाले तीर्थयात्रियों के साथ वह हँसी मज़ाक करतीं थीं और उन्हें आराम पहुँचाने के लिये वह कुछ भी कर सकतीं थीं।

वह लगभग ४ फुट, ४ इंच लम्बी थीं और प्रसन्नतापूर्वक बतातीं थीं कि वह धीरे–धीरे और छोटी होती जा रही थीं। वह कहा करती थीं कि वह इतना छोटा होने का इन्तज़ार कर रही थीं ताकि वह बाबा की जेब में आ जायें। उनकी लम्बाई और उनके गुस्सैल स्वभाव के कारण बाबा ने उनका नाम चिली (Chilli, मिर्च) रखा था।

मनसारी ने मुझे निम्नलिखित कहानी सुनाई।

''एक दास काम की तलाश में घूम रहा था। उसे काम पर रखने वाले लोगों से वह कहता था कि वह बिना किसी वेतन के काम करेगा लेकिन उन लोगों को उसे हर समय व्यस्त रखना होगा। अगर उसका होने वाला मालिक उसे हर समय व्यस्त नहीं रख पायेगा तो वह उसे खा लेगा।

''दास ने बहुत से मालिक़ों के साथ काम किया और सबको खा गया क्योंकि मालिक़ के पास दास के लिये, देर सबेर काम ख़त्म हो जाता था।

''कोई नहीं जानता था कि इस दास को किस तरह नियंत्रण में रखा जाये और जिन मालिक़ों ने कोशिश की, वे सभी असफल रहे और दास ने उन्हें खा लिया। फिर एक चतुर मालिक आया। उसने दास के बारे में सुना और उसे काम पर रख लिया। उसने दास की सभी शर्तों को मान लिया। उसने दास से एक सीढ़ी लाकर, दीवार के सहारे खड़ा करने के लिए कहा।

''फिर मालिक़ ने दास को घर में कुछ काम बताया और कहा कि काम ख़त्म होते ही वह सीढ़ियों पर चढ़े उतरे। यह उसका अगला काम था।

''दास ने अपना काम पूरा किया। वह खुश था कि अब वह मालिक को खायेगा तभी उसे अचानक याद आया कि मालिक़ ने उसे सीढ़ियों पर चढ़ने उतरने का अगला काम बताया था। इसलिये दास सीढ़ियों पर तब तक, चढ़ता उतरता रहा जब तक मालिक ने आकर उसे दूसरा काम नहीं बता दिया। लेकिन उसने दास से फिर कहा, 'जैसे ही तुम्हारा यह काम ख़त्म हो, तुम्हारा अगला काम सीढ़ियों पर चढ़ना, उतरना है।' यह महीनों तक चलता रहा और अन्त में दास मर गया।''

मैंने मनसारी से कहा कि मुझे कहानी समझ में नहीं आई थी, इसलिये उन्होंने मुझे समझाया। उन्होंने कहा, ''हमारा मन दास है। जिन मालिकों को दास ने खाया वे साधारण मनुष्य हैं। चतुर मालिक सद्‌गुरु हैं। सीढ़ियों पर चढ़ने उतरने का अर्थ है ईश्वर का नाम जपना।

''अधिकांश साधारण मनुष्य अपने मन को व्यस्त नहीं रख पाते हैं। इसीलिये वे इसको नियंत्रित नहीं कर पाते हैं और यह उनको अपने वश में कर लेता है। फिर भी, सद्‌गुरु के पथ प्रदर्शन में, अपने सांसारिक कर्त्तव्यों को पूरा करते हुये, निरंतर ईश्वर का नाम जपने से; मन नियंत्रित हो जाता है और अन्त में शान्त हो जाता है।

• • •

dkf'k'k djuk NkMk vkj ;kn djuk 'k: djk

नाना खेर बाबा के प्रारंभिक शिष्यों में से एक थे जो बाद में, मेहेराबाद में रहने के लिये आये। वह निचले मेहेराबाद में रहते थे लेकिन वह रोज़ पहाड़ी पर आकर समाधि के बाहर बैठते थे और तीर्थयात्रियों के जाने से पहले उन्हें प्रसाद देते थे। बाल की तरह, वह भी बाबा के साथ लगातार नहीं रहे लेकिन गर्मियों में बाबा के गुरु प्रसाद में रहने के दौरान, वह बाबा के दर्शन के लिये आते थे और गुरु प्रसाद में बाबा के साथ कुछ समय रहते थे।

बहुत से तीर्थयात्रियों को समाधि में पहुँचने पर, नाना का प्रेम के साथ गले मिलना और मुस्कुराते हुये, ''वेलकम होम'' (Welcome home, आपका अपने घर में स्वागत है) कहकर अभिवादन करना याद होगा। आपसे एक बार परिचित होने के बाद, वह पूछते थे, ''क्या तुम दिन भर बाबा की याद करते हो ?''

अधिकांश लोग इस आशय का जबाव देते थे, ''मैं कोशिश करता हूँ।''

तब नाना प्यार से समझाते थे, ''कोशिश मत करो। कोशिश करना पर्याप्त नहीं है। तुम्हें उनकी याद करना चाहिये। बाबा ने कहा है, 'मेरी याद करो।' उन्होंने यह नहीं कहा, 'मुझे याद करने की कोशिश करो।'

मुझे यह तर्कसंगत नहीं लगा और मैंने नाना से इस विषय पर बहस की। उन्होंने मुझसे कहा कि मैं बाबा के डिसकोर्सेज़ (उपदेश) लाकर ऐसी कोई जगह दिखाऊँ जहाँ बाबा ने कहा हो, ''मुझे याद करने की कोशिश करो।'' इसलिये मैं अगले कुछ दिनों तक डिसकोर्सेज़ की छानबीन करता रहा लेकिन मुझे इस विषय से संबंधित बाबा का कोई कथन नहीं मिला। अन्त में मुझे एलन कोहेन द्वारा लिखित मास्टरी ऑफ कान्शसनेस (mastery of Consciousness, चेतना का अधिकार) में एक उद्धरण (Quote) मिला जिसमें बाबा ने try (कोशिश करो) शब्द का इस्तेमाल किया है।

जब मैंने नाना को यह दिखाया तो वह सिर्फ हँसे और आग्रहपूर्वक कहा कि मैं यही उद्धरण बाबा के उपदेशों में दिखाऊँ वरना वह अपनी बात दृढ़तापूर्वक कहते रहेंगे कि बाबा ने हमेशा कहा है, ''मुझे याद करो'' और यह कभी नहीं कहा कि ''मुझे याद करने की कोशिश करो।''

मैंने नम्रतापूर्वक कहा कि सारे उपदेशों को पढ़ने का मेरे पास समय नहीं था। थोड़ी देर नाना चुप रहे फिर मुझसे बोले, ''क्या तुमने ऊँचे पर्वतों की चोटियों पर पहुँचने की कोशिश करने वाले पर्वतारोहियों के बारे में सुना है ? पर्वत की चोटी पर पहुँचने की कोशिश करने के लिये, उन्हें कितनी बड़ी बड़ी तैयारियाँ, कितने कठिन प्रयत्न और कितनी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। वे अपने जीवन खतरे में डाल देते हैं और चोटी

तक पहुँचने की कोशिश करने में, कुछ लोग मर भी जाते हैं। लेकिन चोटी तक पहुँचने में सफल होने पर व्यक्ति जिस गौरव का, आनन्द का अनुभव करता है, उसके बारे में सोचो। यह आनन्द, यह अनुभूति शब्दों से परे है।

''इसी तरह, अन्ततः ईश्वर–साक्षात्कार प्राप्त होने पर कितने गौरव, कितने आनंद की अनुभूति होती होगी ? उस चोटी तक पहुँचने के लिए हमें कितने कठिन प्रयास, कितनी कठिनाइयों का सामना करना होगा। ईश्वर–साक्षात्कार के उस अन्तिम गौरव को प्राप्त करने के लिये, क्या हमें यथाशक्ति कोशिश करते हुए, अपना सब कुछ दाँव पर नहीं लगा देना चाहिये ? उस अन्तिम लक्ष्य तक पहुँचने के लिये, बड़े से बड़ा त्याग भी कम है।''

अन्त में नाना ने कहा, ''कोशिश करने से कृपा प्राप्त होती है, इसलिये कोशिश करना छोड़ो और उनको याद करना शुरू करो।''

• • •

?k`.kk d} }kjk ;kn

एरच से यह पूछने पर कि हम गुस्से को किस तरह नियंत्रित करें, एरच ने कहा, ''गुस्सा आने पर बाबा को याद करो, और अगर तुम फिर भी अपने गुस्से को नियंत्रण में नहीं कर पाते हो, तब बाबा पर गुस्सा करो। इस तरह तुम उनकी याद करोगे। बाबा ने यह कभी नहीं कहा कि तुम उनको प्रेम से याद करो। बाबा हर एक के अंदर हैं, इसलिये वह उस व्यक्ति में भी हैं जो तुम्हें गुस्सा दिला रहा है। बाबा उस व्यक्ति का केवल इस्तेमाल कर रहे हैं, इसलिये उस व्यक्ति पर क्यों चिल्लाते हो। इसलिये बाबा के ऊपर अपना गुस्सा निकालो। तुम उनकी याद प्रेम, गुस्सा अथवा घृणा से करो, सब ठीक है। केवल इस बात का महत्त्व है कि तुम उनको याद करते हो।''

फिर एरच ने मेहेरा के मामा कर्नल एम.एस. ईरानी के बारे में बताया। ''कर्नल ईरानी बाबा के कट्टर विरोधी थे हालांकि उनकी भांजी मेहेरा बाबा के साथ रहती थी। उन्हें यह बात अच्छी नहीं लगती थी कि बाबा ने उनके

परिवार को अपने साथ रख लिया था, इसलिये वह बाबा के कार्यों पर कड़ी नज़र रखते थे। जहाँ कहीं बाबा जाते थे, कर्नल ईरानी उनके पहले वहाँ जाकर बाबा के खिलाफ़ बोलते थे। कर्नल ईरानी बाबा से पहले जाकर वहाँ पर पर्चे बाँटते थे, स्थानीय समाचार पत्रों में बाबा के खिलाफ़ लेख लिखते थे और सार्वजनिक समूहों में बाबा के खिलाफ़ बोलते भी थे। इसलिये बाबा के प्रति अपनी घृणा के कारण, कर्नल ईरानी बाबा को निरंतर याद करते थे।

''वह अपने अन्तिम समय तक बाबा का विरोध करते रहे। सालों बाद, जब बाबा ने अपने ट्रस्ट के नियमों में अपनी यह इच्छा लिखवाई कि उनके घनिष्ठ प्रेमियों की याद में एक स्मारक बनाया जाये, क्या तुम जानते हो उन घनिष्ठ प्रेमियों के नाम की सूची में सबसे ऊपर किसका नाम था ? कर्नल एम.एस. ईरानी का। उन्होंने बाबा की याद दिल से की थी। इसके अलावा, उन दिनों बाबा को कोई नहीं जानता था और उनके विरोध के माध्यम से लोगों को बाबा के बारे में पता चला और अन्ततः वे लोग बाबा के प्रति आकर्षित होकर बाबा के सम्पर्क में आये।''

एरच ने इसी तरह की एक घटना रामायण से सुनाई। ''रावण को, जिसने भगवान राम का विरोध किया था, अपनी इच्छानुसार निर्णय करने का एक मौक़ा दिया गया। वह एक जीवन में राम का विरोध करके मुक्ति प्राप्त कर सकता था अथवा चार जन्मों तक राम का साथी बनने के बाद, मुक्ति प्राप्त करता। उसने राम का विरोध करने का चुनाव किया क्योंकि वह जल्दी ही मुक्ति प्राप्त करना चाहता था।''

इस पर, एक तीर्थयात्री ने टिप्पणी की, ''ऐसा प्रतीत होता है कि अवतार की सेवा करने की तुलना में, उनका विरोध करके आप ईश्वर–साक्षात्कार के लक्ष्य को जल्दी प्राप्त कर सकते हैं।'' एरच ने मज़ाक करते हुये कहा, ''हम लोग भी यही करते हैं। जो हमारा विरोध करता है, हम उससे छुटकारा पा लेते हैं लेकिन जो हमारी सहायता करता है उससे हम संबंध बनाये रखते हैं।''

सब लोग हँसने लगे और जब सब लोग शान्त हो गये, एरच ने और अधिक गंभीरतापूर्वक कहा, ''जब तुम किसी व्यक्ति से घृणा करते हो तो

तुम उसे जितनी तीव्रता से याद करते हो उतनी तीव्रता से उस व्यक्ति की याद नहीं करते हो जिससे तुम प्रेम करते हो। अधिकतर, जब किसी व्यक्ति के लिए घृणा पैदा हो जाती है, तो तुम सब कुछ भूलकर, उस व्यक्ति को निरन्तर याद करते हो। प्रेम में भी याद होती है लेकिन इतनी अधिक तीव्र और निरंतर नहीं होती है जितनी घृणा में होती है। रावण की सेना के राक्षस भी, जो युद्ध में मारे गये, मुक्त हो गये। क्यों ? क्योंकि, मरने से पहले, वे भगवान राम को घृणापूर्वक याद कर रहे थे।''

एरच कहते रहे, ''अवतार महासागर है। हमारे अच्छे, बुरे संस्कार कूड़े की तरह हैं। बाबा की याद कूड़े को महासागर में फेंकने का कार्य है। बाबा की लगातार और निरंतर याद करना, तुम्हारे संस्कारों के कूड़े के ढेर को महासागर में फेंकने के समान है।''

किसी दूसरे अवसर पर एरच ने यह उदाहरण दिया।

''अपनी आत्मा की तुलना एक दर्पण (मुँह देखने वाला शीशा) से करो। दर्पण पर धूल जमी हुई है; जो हमारे अच्छे, बुरे संस्कार हैं। अपने चेहरे को स्पष्ट रूप से देखने के लिये, धूल को साफ़ करना होगा। जब तुम्हारी आत्मा रूपी दर्पण से संस्कारों की धूल साफ कर दी जाती है, केवल तभी तुम अपने वास्तविक रूप को (ईश्वर) इसमें (आत्मा रूपी दर्पण में) देख सकते हो। बाबा की याद, संस्कारों की धूल को साफ़ करने का कार्य है।''

इस प्रश्न के उत्तर में कि अच्छे संस्कार बंधन क्यों पैदा करते हैं, एरच ने कहा, ''कभी कभी अच्छे कार्य, बुरे कार्यों की अपेक्षा अधिक बंधन कारक होते हैं, क्योंकि अच्छे कार्य करने के बाद लोगों में घमंड आ जाता है और इससे अहं कम होने की जगह और बढ़ जाता है। जब तुम अपने कार्यों को बाबा की निरंतर याद द्वारा पूरी तरह से बाबा को समर्पित कर देते हो, केवल तभी संस्कारों का बोझ बाबा के ऊपर जाता है। वरना तुम्हारे कार्यों का परिणाम और उन कार्यों से बनने वाले संस्कार तुम्हारे हैं।''

• • •

uhjk oYQ

मनी कभी कभी बाबा के जीवन के अन्तिम दिनों की यह कहानी सुनाया करतीं थीं। मनी नीरो वुल्फ का एक जासूसी उपन्यास पढ़कर बाबा को सुना रहीं थीं जो पूरी तरह शिथिल होकर, आँखें बन्द करके बैठे हुये थे। बाबा पहले ही कह चुके थे कि उनका अवतारिक कार्य सौ फ़ीसदी पूरा हो चुका था लेकिन उनका स्वास्थ्य बहुत खराब था और ऐसे क्षण कभी कभी और बहुत अन्तर से आते थे जब वह वास्तव में आराम कर पाते थे।

जब मनी ने देखा कि बाबा धीरे धीरे गहरी साँसें ले रहे थे, जैसे कि वह गहरी नींद में हों, उन्होंने पढ़ना बंद कर दिया। वह सोच रहीं थीं कि अगर बाबा थोड़ी देर सो लेते हैं तो उनके लिये अच्छा होगा। लेकिन जैसे ही उन्होंने पढ़ना बंद किया, बाबा ने संकेत किया, ''तुम क्यों रुक गई ?''

मनी ने कहा, ''बाबा आप सो रहे थे और सुन नहीं रहे थे।'' बाबा ने संकेत किया, ''मैं सुन रहा था, पढ़ती जाओ।'' मनी फिर से पढ़ने लगीं लेकिन फिर वही हुआ। बाबा की साँसें गहरी और धीरे धीरे चलने लगीं और बाहर से देखने पर यही लगता था कि वह गहरी नींद में थे। मनी पढ़ती रहीं, लेकिन बाबा गहरी नींद में सोते रहे। मनी किताब के उस भाग में पहुँच गईं जो वह जानतीं थीं कि बाबा को बहुत पसंद था (वह इस किताब को दूसरी बार बाबा को सुना रहीं थीं)। बाबा इसे सुनने से वंचित न रह जायें, यह सोचकर मनी ने पढ़ना बंद कर दिया। लेकिन पुनः उनके रुकते ही बाबा ने संकेत किया, ''तुम रुक क्यों गई ?''

मनी ने कहा, ''बाबा मैंने समझा कि आप सो रहे थे और मैं नहीं चाहती थी कि किताब का कोई हिस्सा आपके सुनने से रह जाये।''

बाबा ने संकेत किया, ''मैं सुन रहा था।'' मनी ने पूछा, ''तब मुझे बताइये कि अभी अभी मैंने क्या कहा ?'' उन्हें बहुत आश्चर्य हुआ जब बाबा ने सारी घटनायें बता दीं जब कि मनी को विश्वास था कि बाबा गहरी नींद में थे।

मनी ने आग्रहपूर्वक कहा, ''मुझे पूरा विश्वास था कि आप सो रहे थे।''

बाबा ने संकेत किया, ''याद रखो, भले ही मेरी आँखें बंद हों और मैं सोया हुआ लगूँ, मैं फिर भी सुनता रहता हूँ।''

मनी फिर पास में बैठे हुये तीर्थयात्रियों से कहती थीं, ''अभी भी ऐसा ही है। तुम्हें वह एक सोया हुआ ईश्वर लग सकते हैं, लेकिन वह सुन रहे हैं। इसलिये दिल से उन्हें पुकारो, उनका नाम जपो, उनसे बातें करो। उन्हें अपनी सारी समस्यायें बताकर बात शुरू करो। उनसे हर चीज़– यहाँ तक कि छोटी छोटी चीज़ें भी, माँगो। उनको याद करने का यह अच्छा तरीक़ा है।

''इसका कोई महत्त्व नहीं है कि तुम जो कुछ माँगते हो, वह तुम्हें देते हैं या नहीं, यह सब उनके ऊपर छोड़ दो। दिन भर में तुम्हारे साथ जो कुछ होता है, उनको बताओ। ऐसा करने से, धीरे धीरे एक समय ऐसा आयेगा जब तुम निरंतर उनको याद करने लगोगे और तुम पूर्ण रूप से उन पर निर्भर हो जाओगे। तब वह तुम्हारे जीवन का भार अपने ऊपर ले लेंगे। वह ज़रूरत पड़ने से पहले ही उसे पूरा कर देंगे और तुम्हारे पूछने से पहले ही उत्तर दे देंगे।''

• • •

ckck dk dÙkk ihVj

इसी तरह की बात मनी बाबा के कुत्ते पीटर के बारे में भी बतातीं थीं। एक दिन मंडली हाल में बाबा ने उन्हें बुलवाया। वे अपनी कुर्सी पर बैठे थे और पुरुष मंडली उनके चारों ओर फ़र्श पर बैठी थी। बाबा ने पीटर (कुत्ते) की तरफ इशारा किया और मनी ने देखा कि पीटर बाबा के पैरों के नीचे खिसक गया है और सो रहा है। यह सोचकर कि संभवतः बाबा उसे हटाना चाहते थे मनी आगे बढ़ीं लेकिन बाबा ने उन्हें रोककर पीटर को ध्यान से देखने को कहा। मनी ने ध्यान से देखा तो पीटर के पैर नींद में भी हिल रहे थे और वह हल्के–हल्के गुर्रा भी रहा था। बाबा ने संकेत

से कहा, "यह बुरा स्वप्न देख रहा है और डरा हुआ है। वह देख रहा है कि बड़े–बड़े कुत्ते उस पर आक्रमण कर रहे हैं और वह भयभीत है। उसे नहीं मालूम कि यहाँ मेरे पैरों के नीचे वह एकदम सुरक्षित सो रहा है।"

यह बताकर मनी बोलीं, "हम लोगों की दशा भी ऐसी ही है। पीटर की तरह हम भी उनके चरणों में एकदम सुरक्षित सो रहे हैं, लेकिन यह तथ्य हम भूल जाते हैं। पीटर की तरह हम स्वप्न में कष्ट और पीड़ा का वास्तविक अनुभव करते हैं। नींद से जागकर ही हम वास्तविक स्थिति का अनुभव कर सकते हैं कि हम तो सदा ही ईश्वर के संरक्षण में सुरक्षित थे।

"कष्ट की घड़ी में यह याद करना कि यह कष्ट तो केवल स्वप्न में है, बड़ी राहत देता है। वह (ईश्वर) तो सदा हमारे साथ है। स्वप्न के अनुभवों से व्याकुल मत होना। सदा उसकी (ईश्वर की) याद करते रहो। उसे पुकारते रहो। उससे बातें करो। उनका नाम जप करो। ऐसा करने से स्वप्न का प्रभाव कम होगा। क्या तुमने कभी ऐसा स्वप्न देखा है जब तुम्हें होश हो कि यह स्वप्न है? बस यह उसी तरह है। यदि तुम उन्हें सदा याद करते रहोगे तो तुम स्वप्न के प्रति सचेत हो जाओगे और स्वप्न के अनुभव तुम्हें व्याकुल नहीं करेंगें।"

Vu dh ckxh dk bltu l tkMk

एक तीर्थयात्री ने भाऊ जी से पूछा, "मैं अपनी कमज़ोरियों पर विजय कैसे प्राप्त करूँ ?"

भाऊ जी ने उत्तर दिया, "बाबा की सतत् याद के द्वारा। हम अपनी कमज़ोरियों, और इच्छाओं के बारे में हरदम चिन्ता करते और सोचते रहते हैं। हालांकि हम जानते हैं कि सर्व समर्थ, सर्व शक्तिमान ईश्वर हमारे अन्दर ही विराज़मान है। फिर हम इसी शक्ति के बारे में क्यों नहीं सोचते, हमारा ध्यान क्यों कमज़ोरियों पर ही केन्द्रित रहता है ?"

अपनी बात को अधिक स्पष्ट करने के लिए भाऊ जी प्रायः निम्नलिखित उदाहरण देते थे–

"ट्रेन के इंजन का उदाहरण लें। जब तक ट्रेन की बोगियाँ इंजन से जुड़ी रहती हैं तब तक बोगियों में क्या है—सोना, लोहा या कूड़ा कर्कट—इसका कोई महत्व नहीं है। इंजन सभी बोगियों को निर्धारित स्थान तक पहुँचायेगा, शर्त केवल यह है कि वे इंजन से जुड़ी रहें।

"इसी तरह जब तक आप अवतार से जुड़े हैं तब तक आप ताक़तवर हैं या कमज़ोर इसका कोई भी महत्व नहीं है। वह (अवतार) आपको अपने लक्ष्य तक अवश्य पहुँचायेगा। यह उसकी ज़िम्मेदारी है। लेकिन आप अवतार से कैसे जुड़ सकते हैं ? जोड़ने की कड़ी है उसका भजन, ध्यान, चिंतन और सतत् स्मरण। और जब आप उन्हें सतत् याद रखेंगे आपके और उनके सम्बन्ध की कड़ी मज़बूत होती जायेगी।"

• • •

vk/;kfRed ifj'k{k.k % ßckck ds ifr ,dkxrkÞ

मेहेराज़ाद तथा मेहेराबाद में मंडली के साथ बिताये दिन, मेरे जीवन के सुनहरे दिन थे। जब भी संभव होता, मैं हर मौके पर जाता फिर भी मुझे वह पर्याप्त न लगता। इसलिए मैं जब जाता तो कोशिश करता कि अधिक से अधिक दिन वहाँ रहूँ। मैं वहाँ चल रहे क्रियाकलापों में भाग लेने लगा जिससे वहाँ अधिक समय रहने का मुझे बहाना मिल जाये। इतने पर भी मुझे संतोष न हुआ तो १९८९ में मैंने मनी से, जो उस समय ट्रस्ट की अध्यक्ष थीं, और जिन्हें अन्तिम निर्णय लेना था, पूछा कि क्या मैं वहाँ रह सकता था।

उन्होंने मुझसे पूछा, "एक अन्तेवासी की भाँति यहाँ रहकर तुम क्या अनुभव करने वाले हो ? क्या तुम सोचते हो कि यहाँ रहकर तुम आनन्द का अनुभव करोगे ?"

मैंने उत्तर दिया, "मैं जानता हूँ कि अन्तेवासियों को कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। कभी—कभी ज़्यादा समय तक रहने पर मैंने कुछ अन्तेवासियों के साथ काम किया है।"

मनी ने कहा, "यह स्थान आग का गोला है। तुम्हें अंगारों पर चलना होगा।" मैंने, जिसे अब मैं अपनी अनुभवहीन बकवाद के रूप में देखता हूँ, कहा, "लेकिन मुझें कभी न कभी तो अंगारों पर चलना होगा, इसलिए अभी, बाबा के मार्गदर्शन में, क्यों नहीं ?"

तब मैं आत्मा की सफ़ाई के कष्ट के बारे में कुछ नहीं जानता था जो मेरी प्रतीक्षा कर रहे थे।

जैसा नियम था, जब मनी ने अन्तिम निर्णय ले लिया तो मुझे छः से नौ माह तक वहाँ रहने की अनुमति मिल गई और उसके बाद मुझे लौट जाना था। अवधि के निर्धारण के पीछे यह सोच थी कि सम्भावित अन्तेवासी बनने से पहले सम्बन्धित व्यक्ति को उस प्रकार की जीवनचर्या का आभास हो जाय और उसे अपने अन्तेवास के बारे में पुनर्विचार करने में मदद मिले कि इस प्रकार वह रह सकेगा या नहीं। विशेष रूप से एक बार उन्हें यह आभास हो जाय कि अन्तेवासी के रूप में उन्हें वहाँ तीर्थयात्री की भाँति अधिक आनन्द का अनुभव नहीं होगा बल्कि उन्हें यातना के क्षणों से गुज़रना होगा। सच तो यह है कि अनेक लोगों ने अपने निर्णय को बदल लिया था और कुछ ही थे जो इस निर्धारित अवधि के बाद भी भिन्न—भिन्न अवधि के लिए पुनः रहने के लिए लौटे थे।

निःसंदेह अन्तेवासी के रूप में वहाँ का जीवन, तीर्थयात्री के रूप में होने से बिल्कुल भिन्न है। निःसंदेह मैंने वहाँ रहने जाने से पहले, मंडली जनों के बाबा के साथ रहने की कहानियाँ पढ़ रखी थीं। मैंने उन कहानियों को पढ़ा था जिसमें बाबा अक्सर किसी मंडली जन को तीव्र कष्ट की स्थिति में डाल देते थे जो उसके मानसिक संतुलन की कौन कहे शारीरिक सहन शक्ति और भावनात्मक क्षमता की भी परीक्षा बन जाती थी। ये कहानियाँ बड़ी रोचक लगती थीं, खास कर जब वे मंडली जनों द्वारा बताई जाती थीं। उनसे बाबा बहुत प्रेम करने वाले प्रतीत होते थे। लेकिन वैसी स्थितियों से यदि आपको दो चार होना पड़े तब पता चलता है कि उन कष्टों को सहना कितना कठिन रहा होगा।

इन अनुभवों से मुझे आभास हुआ कि मेहेरबाबा के साथ रहते हुए जीवन कैसा रहा होगा। ध्यान रहे मैंने केवल ''आभास होना'' कहा है

क्योंकि मुझे विश्वास है कि शायद ही किसी अन्तेवासी ने अभी तक उन यातनाओं, कष्टों और वेदनाओं का अनुभव किया होगा जो मंडली जनों ने बाबा के साथ रहते हुए किया था। तथापि, वह आभास भी प्रायः मेरी सहनशीलता की क्षमता के परे जाता प्रतीत होता था। मैं १६८६ से सन् २००० तक अन्तेवासी के रूप में वहाँ रहा और निःसंदेह वे वर्ष मेरे जीवन के सर्वाधिक प्रसन्नता के और मूल्यवान सिद्ध हुए; इस पर भी, मैं ईमानदारी से स्वीकार करता हूँ कि ये वर्ष कठिनाइयों, मानसिक झंझावातों और भावनाओं के स्तर पर यंत्रणा से भरे थे। और ऐसा केवल मेरे साथ ही नहीं था, बल्कि प्रायः हर अन्तेवासी का संभवतः यही अनुभव था।

कुछ ऐसे मसले थे जिन्होंने वहाँ अन्तेवासी के रूप में जीवन चुनौती पूर्ण बना दिया था। संभवतः सबसे प्रत्यक्ष कारण तो यह तथ्य था कि अब मैं वहाँ अन्तेवासियों के समुदाय का एक अंग बन गया था। अब मैं मात्र मेहेराबाद में अवकाश व्यतीत करने वाला और केवल बाबा की मंडली के प्रति एकाग्र चित्त तीर्थयात्री नहीं था; बल्कि अब मुझे अन्य अन्तेवासियों से भी, जो वहाँ रह रहे थे, सरोकार रखना था। जिस बात ने मेरा ध्यान पहले आकृष्ट किया वह यह थी कि, मंडली जनों के विपरीत अन्य अन्तेवासियों का व्यवहार सदा प्रेममय नहीं था। वे किसी प्रकार के आध्यात्मिक ज्ञान या रूझान से शून्य प्रतीत होते थे और मेरी मुश्किल घड़ियों में मुझे प्रोत्साहन या सान्त्वना देने का प्रयत्न नहीं करते थे। पहले तो उनका यह व्यवहार आश्चर्यजनक लगा, फिर निराशा होने लगी और अन्ततः उन पर मुझे गुस्सा आने लगा कि वे तीर्थयात्रियों की तुलना में मित्रवत्, सहायक अथवा ''आध्यात्मिक'' वृत्ति के नहीं थे।

यह कहना कठिन है कि वे वास्तव में वैसे थे। लेकिन लगता है कि चूँकि अन्तेवासियों से व्यवहारगत अपेक्षाएं बड़ी ऊँची होती हैं इसलिए उनका सामान्य व्यवहार भी निम्न स्तर का जान पड़ता है। यद्यपि आप जानते हैं कि अन्तेवासियों के भी अवकाश के क्षण होते हैं, उन्हें बुरे दिनों का भी सामना करना पड़ता है, तथापि आप उनसे आशा करते हैं कि वे सदा बाबा को याद करते रहें, और दूसरों के प्रति प्रेमभरा व्यवहार रखें। हो सकता है यही कारण हो कि उनके व्यवहार पर मुझे क्रमशः आश्चर्य, दुख और गुस्से का अनुभव होता था।

लेकिन संसार के अन्य किसी भी संगठन की तरह मेहेराबाद में भी आन्तरिक झगड़े, शक्ति संघर्ष तथा व्यक्तिगत राजनीति होती थी। मैं सोचता हूँ यह केवल मेरा ही अनुभव नहीं है बल्कि मुझसे पहले कई लोगों ने मनी और एरच से ऐसी ही शिकायतें कीं थीं और कहा था कि ऐसी बातें मेहेराबाद में नहीं होनी चाहिए क्योंकि इनसे वहाँ का बाबा के प्रेम से भरपूर वातावरण नष्ट होता था।

वास्तव में यह बात कि अन्तेवासी, जो प्रत्यक्ष रूप से अपना जीवन मेहेरबाबा को समर्पित करने के लिये यहाँ रहने आये थे, उनका उपरोक्त व्यवहार तो निराशाजनक था ही, परन्तु मंडली जनों का इस संबंध में उन अन्तेवासियों से एक शब्द भी न कहना और यह सब होने देना, यह बात ज़्यादा परेशान करती थी। मंडली का मेरे जीवन में इतना महत्त्व था कि मेरी कल्पना थी कि यदि वे ग़लती करने वाले अन्तेवासी को बुलाकर केवल उसके व्यवहार की ग़लती के बारे में भी बता देते तो सारी समस्या तुरंत समाप्त हो सकती थी। मंडली के प्रति मेरा रोष बढ़ता गया क्योंकि वे अन्तेवासियों के व्यवहार के दोषों को दूर करने के लिए अपने अधिकार का प्रयोग नहीं करते थे। निःसन्देह, इस स्थिति को सहना मेरे लिए और अधिक कठिन होता गया।

मेहेराज़ाद और मेहेराबाद में रहने के समय, मेहेराज़ाद जाने वाली सड़क पर बन रही एक गैर कानूनी केमिकल फैक्ट्री (रासायनिक कारखाने) को प्रदूषण के कारण बंद करवाने के संबंध में, मैंने आरम्भिक कार्य किया था। कारखाने के प्रदूषण के कारण मेहेराज़ाद निवासियों और आसपास गाँवों के लोगों को घोर कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा था। मेरा काम मेहनत वाला तो था ही, उस पर कुछ अन्तेवासियों की क्षुद्रता ने मेरा काम और कठिन बना दिया था।

अन्ततः, जब मामला मेरी सहन शक्ति से बाहर हो गया तो मैं एक दिन एरच से मिला और दिल खोल कर उनसे सारी बातें बताई। अन्त में मैंने उनसे वह कहा जो कई अन्तेवासियों ने अक्सर कहा था, ''ऐसे मामलों में मंडली चुप क्यों रहती है ? मेहेराबाद के निकट ऐसे ग़ैर कानूनी कार्य (केमिकल फैक्ट्री) को रोकने, बंद करने की कार्यवाही क्यों नहीं की जा रही है ? यह (फैक्ट्री) वातावरण को प्रदूषित कर रही है।''

निःसंदेह ये बातें ऐसी नहीं थी जिन्हें एरच ने कई बार पहले भी न सुना हो। उन्होंने कोई प्रतिक्रिया व्यक्त नहीं की बल्कि मेरी बातों के प्रति उदासीन लगे अथवा वे ''निर्लिप्त'' रहे, कहना अधिक उपयुक्त होगा, हालांकि उस समय मुझे वह 'उदासीनता' ही लगी। इसलिए मैंने अपनी शिकायतों को फिर दोहराया।

उन्होंने मुझसे एक प्रश्न पूछकर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त की जिसने मुझे चौंका दिया। उन्होंने कहा, ''रुस्तम, तुम यहाँ रहने के लिए क्यों आये हो ?''

बिना सोचे समझे मैंने कहा, ''मेहेर बाबा—मेरे यहाँ रहने का कारण वही हैं।''

''बहुत अच्छा'', एरच ने कहा, ''तो फिर उनके ध्यान में अपनी एकाग्रता में ढील मत आने दो।''

लेकिन इस उत्तर से मुझे सतोष नहीं हुआ। मुझे लगा जैसे मेरी समस्या की उपेक्षा कर दी गई है और मैंने आग्रह पूर्वक कहा, ''आपने मेरे प्रश्न का उत्तर नहीं दिया।''

एरच ने भी उतना ही ज़ोर देकर कहा,'' मैंने तो उत्तर दिया लेकिन तुम्हारा ध्यान कहीं और था इसलिए तुम समझ नहीं सके। क्या तुम यहाँ रासायनिक कारखाना (केमिकल फैक्ट्री) बंद कराने हेतु रहने आये हो ? अगर तुम्हारा यही उद्देश्य होता तो तुम एक पर्यावरणविद् होते। तुम यहाँ मेहेरबाबा के लिये आये हो इसलिए हर समय केवल उन पर अपना ध्यान केन्द्रित रखो।''

अब एरच की बात मुझे कुछ समझ में आई फिर भी मुझे लगा कि मंडली द्वारा, समस्या को निरर्थक विवाद समझ कर, उसे अनदेखा करने संबंधी, मेरे उचित प्रश्न को टाला जा रहा है और मैंने अपनी दृढ़ मान्यता को कि जो काम मैं कर रहा हूँ, वह भी बाबा का कार्य है, एरच के समक्ष ज़ोर देकर प्रस्तुत करते हुए कहा, ''लेकिन क्या केमिकल फैक्ट्री (रासायनिक कारखाने) को बंद कराकर मेहेराज़ाद और आसपास के गाँवों के पर्यावरण का संरक्षण भी बाबा का कार्य नहीं है ?''

एरच कुछ रुककर गहरी साँस लेकर बोले, ''मेहेरबाबा के निकट या उनके लिए जो तुम करते हो, वह तो बाबा के तुम्हारे ऊपर कार्य किए जाने का बहाना मात्र है, माध्यम है। बाबा का असली कार्य तो पूर्ण रूप से कुछ और है। ये सब राजनीति और छोटे छोटे झगड़े, जिसके बारे में अन्तेवासी शिकायत करते हैं वे सब, जब बाबा भौतिक शरीर में थे, तो और भी अधिक और उग्र थे।

''जो मंडली बाबा के साथ रहती थी उनमें भी आपस में मतभेद और झगड़े होते थे। सच तो यह है कि यदि सब कुछ शान्त और सामान्य होता था, तो बाबा को पसंद नहीं आता था और वे (बाबा) स्वयं कुछ ऐसी परिस्थितियाँ पैदा कर देते थे जिससे मंडली जनों में हलचल मच जाये और झगड़े तक की नौबत आ जाये। यह उनका असली काम था। जो कुछ भी गंदगी क्रोध, लालच, वासना के रूप में तुम्हारे अंदर गहरी दबी, सोई पड़ी है उसका मंथन कर सतह पर लाकर तुम्हें दिखाना और फिर उसकी सफ़ाई करना उनका काम था। यह सब राजनीति और छोटी—छोटी बातों पर आपस में लड़ाई, जिसकी शिकायत अन्तेवासी करते हैं, बाबा के आसपास उस समय बहुत तीव्र थी जब बाबा भौतिक शरीर में थे।

''जब तक यह विकार (गंदगी) तुम्हारे अंदर दबा पड़ा है तुम्हें परोक्ष रूप से पूर्ण स्वच्छ होने का आभास हो सकता है; फिर भी जब असली सफ़ाई, आत्मा की सफ़ाई होगी तब तुम यह जान लोगे कि आत्मा पर कितनी अधिक धूल जमी है क्योंकि साफ़ करने की प्रक्रिया में वह धूल और गंदगी सतह पर ऐसी उभर आयेगी कि हो सकता है कि तुम्हें दम घुटता सा प्रतीत हो। परन्तु विश्वास रखो कि मेहेरबाबा तुम्हें इस सफ़ाई की क्रिया के पार ले जायेंगे और जब सफ़ाई की क्रिया पूर्ण हो जायेगी तो दमघोंटू स्थिति समाप्त हो जायेगी।

''क्या मैंने तुम्हें बाबा के साथ अपनी कहानी के बारे में बताया है ? बाबा के साथ कई वर्ष रहने के बाद मैंने पाया कि मेरा स्वभाव अधिक आध्यात्मिक, अधिक शान्त और सहनशील होने के बजाय, मैं और अधिक बुरे स्वभाव का होता जा रहा हूँ। मुझे क्रोध जल्दी आ जाता है, जल्दबाज़ होता जा रहा हूँ और यहाँ तक कि कभी कभी झूठ भी बोलने लगा हूँ। बाबा के साथ आने से पहले ऐसा नहीं था।'

''एक दिन मैं यही सब बैठा सोच रहा था कि बाबा ने अचानक पूछा, 'क्या सोच रहे हो ?' जब मैंने अपनी परेशानी बताई तो उन्होंने (बाबा) कहा, 'क्या तुम कभी धूल से भरे ऐसे कमरे में रहे हो जिसकी सफ़ाई की जा रही हो ? जैसे जैसे झाड़ू लगती है, गर्द और धूल उड़नी शुरू हो जाती है और प्रायः झाड़ू लगाने वाले व्यक्ति और कमरे में उपस्थित सभी लोगों का दम घुटने लगता है। जब तक धूल और गर्द फर्श पर और कमरे में रखे सामानों पर पड़ी थी तब तक सभी उपस्थित लोगों को उससे कोई परेशानी नहीं थी। धूल भरे गंदे कमरे में भी लोग बिना गंदगी महसूस किये रहते थे। लेकिन जब झाड़ू लगाना शुरू होता है तब धूल, गर्द, गंदगी का अचानक पता चलता है क्योंकि तभी इससे परेशानी होती है।

''लेकिन परेशानी होने के कारण झाड़ू लगाने वाला व्यक्ति क्या झाड़ू लगाना बंद कर देता है ? नहीं, वह अपना काम ज़ारी रखता है, बल्कि तब तक वह अपना काम करता रहता है जब तक कि कमरा पूरी तरह साफ़ न हो जाये। इसी प्रकार, बाबा का कार्य भी है। आत्मा रूपी कमरे में झाड़ू लगने से अभी तुम जो असहजता अनुभव कर रहे हो वह अस्थाई है और मानसिक आन्दोलन और यातना के रूप में सतह पर उभरी है लेकिन आन्तरिक सफ़ाई के लिए और दूसरा कोई उपाय भी तो नहीं है''

एरच ने अपनी बात समाप्त करते हुए कहा, ''जहाँ तक मेहेराबाद के वातावरण का प्रश्न है बाबा के आध्यात्मिक कार्य के लिये सभी आन्तरिक झगड़े एकदम उपयुक्त वातावरण बनाते हैं। वह प्रसन्न होंगे। इसीलिये मैं तुमसे कहता हूँ कि बाबा के प्रति एकाग्रता भंग मत होने दो।''

• • •

IkeatL;

हालांकि मैं इस बात से निराश था कि एरच मेहेराबाद में होने वाले झगड़ों को न तो सुलझाने की कोशिश करते थे और न ही कुछ बोलते थे, पर वह हमेशा लोगों को आपस में सामंजस्य बनाये रखने के महत्व पर ज़ोर देते थे।

मुझे अच्छी तरह याद है मैं और डा. एन, एरच के साथ एक सुबह मेहेराज़ाद जाने वाली सड़क पर टहल रहे थे। हम लगभग २०० फुट चले होंगे कि एरच ठहर गये और सड़क के बाईं ओर के वृक्ष की ओर इशारा किया। उन्होंने हम दोनों से पूछा कि क्या हमें वृक्ष में कोई असाधारण बात दिखाई दी। एन और मैंने देखा परन्तु हमें कोई ख़ास बात नहीं दिखी।

"उन पत्तियों को देखो" एरच ने उंगली से दिखाया और हम लोगों की लापरवाही और निरीक्षण क्षमता की कमी को लक्ष्य करके कहा, "ध्यान से देखो"।

हमने जब ध्यान देकर देखा तो एक ही वृक्ष में दो भिन्न–भिन्न प्रकार की पत्तियों को देखा जैसे कि वे दो अलग–अलग पेड़ों की पत्तियाँ हों। मैंने एरच को यह बताया और उन्होंने हँसते हुये कहा, "तुमने ठीक देखा। दो भिन्न–भिन्न वृक्ष इस प्रकार मिल गये हैं कि सरसरी निगाह से देखने पर एक ही तना प्रतीत होता है। लेकिन अगर ग़ौर से देखो तो दोनों तने एक दूसरे से सटे दिख जायेंगे।"

मैंने देखा कि वह ठीक कह रहे थे। तब एरच ने कहा, "मैं चाहता हूँ कि सभी अन्तेवासी इन्हीं दोनों वृक्षों की भाँति रहें। ये दोनों वृक्ष हर प्रकार से अलग हैं– भिन्न पत्तियाँ, भिन्न फल और नितान्त भिन्न प्रजातियाँ–फिर भी दोनों के अस्तित्व में सामंजस्य बना हुआ है। जब पेड़, जिनमें चेतना का विकास कम है, एक दूसरे के साथ रह सकते हैं तो हम क्यों नहीं ? मैं अन्तेवासियों को जो विभिन्न देशों से आये हैं, भिन्न–भिन्न भाषायें बोलते हैं और जिनके व्यक्तित्व भी अलग–अलग हैं, एक इकाई के रूप में सामंजस्य के साथ रहते हुए देखना चाहता हूँ जिस तरह ये दोनों वृक्ष हैं। आपस में सामंजस्य रखते हुये साथ–साथ रहो।'' मुझे एरच की एक प्रिय उक्ति याद आ रही है जिसे वह हाल में समय–समय पर पढ़वाकर सुना करते थे। उस उक्ति का आशय कुछ इस प्रकार था : "द्वैत की दुनिया में सामंजस्य (हारमोनी) ईश्वर की एकता (अद्वैत) का प्रतिबिम्ब है।"

हास्यास्पद बात यह थी कि एरच जितना ही सामंजस्य के महत्व पर ज़ोर देते मैं उतना ही भ्रमित होता था और मुझे गुस्सा आता था कि

सामंजस्य स्थापित करने के लिए वे डॉट–फटकार का कोड़ा क्यों नहीं उठाते और सभी अन्तेवासियों को उस पर चलने के लिए बाध्य क्यों नहीं करते।

और, इस विचार को प्रकट करने में मुझे शर्म नहीं आती थी। अपनी सभी शिकायतों के बावजूद, मैं यह स्वीकार करता हूँ कि जब मैं मेहेराबाद में अन्तेवासी के रूप में रहने आया था तो मेरे स्वभाव में शीघ्र क्रोधित हो जाने का दुर्गुण था। मैं बहुत भाग्यशाली था कि मुझे मेहेराबाद, मेहेराज़ाद और ट्रस्ट कार्यालय में अन्तेवासी के रूप में कार्य करते हुए भिन्न–भिन्न अवधि तक रहने का अवसर मिला।

जब मैं मेहेराज़ाद में रहता था तो एरच के साथ, उनके सामंजस्य पर विचार एवं अन्य विषयों पर, जिनमें हमारा मतभेद था, बहस छेड़ना मेरा अवकाश व्यतीत करने का एक तरीक़ा था। यद्यपि मैं इससे सहमत था कि सामंजस्य का विचार बहुत अच्छा था, तथापि मैं यह भी महसूस करता था कि इसे क्रियान्वित करने के लिए, जो लोग ग़लत काम करते थे, उनको सुधारना ही एकमात्र उपाय था। जब बाबा के कार्य का मामला हो, तब तो यह और भी अधिक महत्वपूर्ण हो जाता है कि यदि कोई व्यक्ति किसी बात को ठीक समझे तो वह उस बारे में अडिग रहे और समझौता न करे।

सामंजस्य के बारे में एरच के तर्क मेरी समझ की सीमा से परे थे। मैंने स्वयं से यहाँ तक कहा कि जिन चीज़ों को आप ठीक समझें उनसे, सामंजस्य बनाये रखने के उद्देश्य से, हटना कायरता होगी।

मैंने अपनी यह धारणा एरच के सामने रखी। एक दिन मैंने उनसे कहा, "एरच, सामंजस्य पर मेरा विश्वास है। मैं यह भी मानता हूँ कि बाबा–प्रेमी होने के कारण दूसरों के प्रति हममें प्यार होना चाहिए, भले ही कोई हमसे रूखा व्यवहार करे। मैं इससे भी सहमत हूँ कि हमें दूसरों का प्यार जीतने के लिए अथवा उसके व्यवहार में परिवर्तन के लिए, उसके रूखे व्यवहार के बावजूद, उसके प्रति हमारा व्यवहार, प्रेममय होना चाहिए। लेकिन तब क्या किया जाये जब हमारे लाख प्रयत्नों के बावजूद, वह व्यक्ति न तो बदले और न ही दूसरों पर चोट पहुँचाने की अपनी आदत से बाज़ आये–चाहे उसके ऊपर कितने ही प्रेम की बरसात करते रहो ?

क्या ऐसे व्यक्ति को, चाहे जिस उपाय से भी हो, बदलने या रोकने की कोशिश नहीं करनी चाहिए ?''

एरच ने सिर हिलाते हुये कहा, "यदि तुम उसे प्रेम से नहीं बदल सकते हो तो किसी अन्य उपाय का प्रयोग करना तुम्हारी कमज़ोरी होगी।"

"तब क्या करना चाहिए ?", मैंने पूछा।

"ठीक करने या सुधारने का प्रयत्न छोड़ दो", एरच ने बेहिचक जवाब दिया और आगे कहा, "सामंजस्य बनाये रखने के लिये, वह जैसा है, वैसा ही रहने दो। सामंजस्य सर्वोपरि है। हर क़ीमत पर सामंजस्य क़ायम रहना चाहिए।"

"लेकिन एरच", मैंने आपत्ति करते हुये कहा, "क्या हमें सत्य का पक्ष नहीं लेना चाहिए ? यदि कोई ग़लत काम कर रहा हो तो क्या उसे रोकना हमारी नैतिक ज़िम्मेदारी नहीं है ?"

"अगर तुम ऐसा करते हो", एरच ने कहा, "तो यह असत्य का पक्ष लेना होगा, सत्य का नहीं। मेहेरबाबा के दृष्टिकोण से अच्छी या बुरी जैसी कोई चीज़ नहीं होती। दोनों समान रूप से बन्धनकारी हैं। दोनों ही असत्य के साम्राज्य की चीज़ें हैं। उन्हें असत्यता का सापेक्षिक अंश कह सकते हो।"

यह उत्तर मुझे सन्तुष्ट न कर सका। मैंने कहा, "एरच, मैं आध्यात्मिक अथवा मेहेरबाबा के दृष्टिकोण से बात नहीं कर रहा हूँ। मैं तो सामाजिक दृष्टिकोण की बात कर रहा हूँ, वह समाज, जो किन्हीं विशेष मूल्यों पर और सही, ग़लत के सामान्य सिद्धान्तों द्वारा संचालित होता है।"

एरच ने बहुत शान्ति के साथ उत्तर दिया, "यह सब केवल भ्रम नहीं है, वरन् समाज सापेक्षिक असत्यता पर आधारित मूल्यों से संचालित होता है। हम जानते हैं कि जो बात किसी एक समाज अथवा देश के लिए सही है वह दूसरे देश या समाज में ग़लत अथवा ग़ैर कानूनी मानी जाती है। मेहेरबाबा का आध्यात्मिक दृष्टिकोण ही एकमात्र स्पष्ट दृष्टिकोण है। यदि तुम इस दृष्टिकोण से सब कुछ देखोगे तो सभी बातें स्पष्ट रूप से समझ में आ जायेंगी। लेकिन एक क्षण के लिए भी यदि तुम अपने जीवन को आध्यात्मिक, सांसारिक और दिन–प्रति–दिन के कार्यों के टुकड़ों (खण्डों या कम्पार्टमेन्ट) में बाँटोगे, तभी विचारों में संघर्ष प्रारम्भ हो जायेगा।"

एरच की बात मैं समझ नहीं सका और उनसे सरल शब्दों में समझाने का अनुरोध किया।

"यह सब बड़ा सरल है", उन्होंने कहा "सृष्टि की प्रत्येक आत्मा ईश्वर से मिलने के मार्ग पर अपनी यात्रा कर रही है। हम सभी इस यात्रा के विभिन्न पड़ावों पर हैं। इन पड़ावों को तुलनात्मक सत्य अथवा तुलनात्मक असत्य के स्तर कह सकते हो। कोई विशेष आत्मा किस स्तर पर है, यह उसके संस्कारों पर निर्भर है। एक 'अच्छे' आदमी के लिए एक चोर "बुरा" हो सकता है, परन्तु पाँचवें अथवा छठे चेतना के स्तर पर स्थित संत उन दोनों, अच्छे और बुरे व्यक्तियों को, भ्रम के झूठ में बँधा हुआ देखेगा। दूसरी ओर यद्यपि पाँचवें–छठे स्तर का संत सत्य के अधिक निकट होगा, तथापि ईश्वर साक्षात्कार प्राप्त आत्मा, संत तथा अच्छे और बुरे व्यक्ति को, उन तीनों को असत्य में जकड़ा हुआ देखेगी।

"इस प्रकार, ईश्वर–प्राप्त आत्मा के दृष्टिकोण से प्रत्येक आत्मा भ्रम के असत्य में बँधी हुई है। याद रखो, सही या ग़लत जैसी किसी चीज़ का अस्तित्व नहीं है। एक बार बाबा ने हमें एक उदाहरण दिया था। आकाश की ओर इशारा करते हुए, उन्होंने बताया, 'यदि आकाश चेतना की सातवीं भूमिका अथवा ईश्वर–साक्षात्कार है तो छठी भूमिका में स्थित व्यक्ति ऐसा प्रतीत होगा जैसे वह मेहेराज़ाद की छत पर खड़ा हो और स्थूल चेतना के व्यक्ति ज़मीन पर खड़े प्रतीत होंगे। ज़मीन से छत की दूरी मात्र चौदह फुट है जो स्थूल भूमिका से छठी भूमिका तक की दूरी है, जबकि छत से आकाश की दूरी–जो अनन्त है–छठी भूमिका से सातवीं भूमिका तक की दूरी है। इस तुलना से बाबा हमें चेतना की भूमिकाओं में अन्तर का अन्दाज़ा देते थे।"

यद्यपि मुझे कहानियाँ पसंद आयीं और मैंने सोचा कि मैं उन्हें समझ गया था तथापि मैं इसे अभी भी स्वीकार नहीं कर पाता था। अभी भी मेरा विश्वास था कि मनुष्य होने के नाते हमारी कुछ नैतिक ज़िम्मेदारियाँ हैं और यदि हम सही हैं और कोई दूसरा व्यक्तित ग़लत है तो परिस्थितियों के आगे, घुटने टेकने के बजाय हमें भरसक कोशिश करनी चाहिए कि सही पक्ष की जीत हो। मैंने एरच को यह बताया और उन्होंने गहरी साँस लेते हुए कहा, "ठीक है, जब मैं बाबा के साथ था उस समय मेरे साथ जो कुछ हुआ, तुम्हें बताता हूँ।

"पूना से बाबा के दर्शन के लिए एक व्यक्ति आया। वह व्यक्ति पूरे पूना शहर में बहुत बड़े बदमाश के रूप में जाना जाता था। इस पर भी जब वह आया तो बाबा ने सबके सामने उसकी बड़ी प्रशंसा की और बताया कि वह व्यक्ति उनसे कितना अधिक प्रेम करता था। वह बाबा से वास्तव में प्रेम करता था तथा उनके हृदय के करीब था।

"बड़ी कठिनाई से मैं अपने को रोक सका। जैसे ही वह व्यक्ति गया, मैंने अपने मन की भड़ास निकाली और बाबा को बताया, 'बाबा, सारा पूना शहर जानता है कि यह आदमी बदमाश और लुच्चा है फिर भी आप उसकी प्रशंसा कर रहे हैं ?'

"बाबा ने कहा, 'तुम उसके बारे में जानते ही क्या हो ? तुम उसके इसी जीवन के कार्यों को देखते हो लेकिन मैं उसके सभी पूर्व जन्मों को देख सकता हूँ और मैं तुम्हें ईमानदारी से बताता हूँ कि वह एक बहुत अच्छी आत्मा है और उसने अच्छे कर्म किये हैं; वह मेरे हृदय के निकट है।'

"उस दिन से मैंने लोगों के अच्छे बुरे होने का निर्णय, उनके कार्यों के आधार पर करना बंद कर दिया।"

यद्यपि मैं एरच के कथन का आशय बौद्धिक स्तर पर समझ गया तथापि मेरा हृदय उस समय इसे स्वीकार न कर सका। लेकिन आज जब एरच हमारे बीच नहीं हैं तो अचानक मेरा हृदय उनके इस कथन के प्रति जाग्रत हो गया है कि "सही या ग़लत जैसी किसी चीज़ का अस्तित्व नहीं है; सृष्टि की प्रत्येक आत्मा, भिन्न–भिन्न स्तर पर ईश–मिलन के मार्ग पर अग्रसर है।" इस विषय पर बाल नातू की बात याद आती है, "सामंजस्य का अर्थ यह नहीं है कि हम एक–दूसरे के विचारों से सहमत हों, बल्कि यह है कि हम एक–दूसरे के भिन्न–भिन्न दृष्टिकोणों का आदर करें।" बाल ने इसकी और आगे व्याख्या करते हुए कहा था, "एक दूसरे के प्रति हमारे प्यार के मार्ग में व्यक्तित्वों की भिन्नता, दृष्टिकोणों की भिन्नता और अलग–अलग विचार बाधक नहीं होना चाहिए।"

• • •

fookg

यद्यपि मेरे अन्तेवासी के रूप में निवास करते समय मेहेरा जीवित न थीं, परन्तु जब मैं तीर्थयात्री के रूप में जाया करता था तब मेरी उनसे भेंट अवश्य हुई थी। बाबा ने उन्हें सृष्टि की शुद्धतम आत्मा बताया था। उन्होंने यह भी कहा था कि वह उनकी प्रियतमा थीं और वह उनके लिए ऐसी ही थीं जैसी राधा कृष्ण के लिये अथवा सीता राम के लिए थीं।

ड्योढ़ी में उनके साथ बैठ कर उनकी कहानियाँ सुनते समय मुझे सदा यह अनुभव होता कि वे अपना पूरा ध्यान मेरे ऊपर ही केन्द्रित किये हुए थीं। उनके पास बैठे हुये सभी लोगों को ऐसा प्रतीत होता था। वे आपके हृदय को इतने अन्तरंग ढँग से प्रभावित कर सकतीं थीं कि कहानियाँ और वृत्तान्त याद आने लगते थे। स्वयं बाबा हजारों की भीड़ में प्रत्येक स्त्री पुरुष को कैसे यह अनुभव कराते थे कि वे केवल उसी व्यक्ति विशेष पर ध्यान दे रहे थे। सारी मंडली जनों में से केवल मेहेरा में ही मैंने यह गुण देखा।

मेहेरा के व्यक्तित्व की दूसरी खूबी यह थी कि कहानियाँ सुनाते समय लगता था कि वे बीती हुई घटनाओं का वर्णन ही नहीं कर रही थीं वरन् स्वयं उन अतीत के क्षणों को उस समय दोबारा जी रहीं थीं। उनके चेहरे पर ऐसा भाव दिखता था जैसे मन की आँखों से वह बाबा को देख रहीं थीं।

वह हर व्यक्ति और हर वस्तु में बाबा को ही देख रही लगती थीं–ऐसा था उनका बाबा के लिये प्रेम। इसी कारण बाबा ने यह घोषणा की थी कि, "एकमात्र मेहेरा ही है जो मुझसे वैसा प्रेम करतीं हैं जैसा प्रेम मुझसे करना चाहिए।'' यद्यपि मैं बाबा से तो नहीं मिल सका, परन्तु मैं अपने को भाग्यशाली मानता हूँ कि मैं उनका प्रतिबिम्ब उनकी प्रियतमा मेहेरा में देख सका।

एक अन्तेवासी ने मुझे मेहेरा के बारे में यह कहानी सुनाई। एक जोड़ा जो मेहेरा के निकट था, अपने विवाह के समय सलाह और

आशीर्वाद लेने के लिए मेहेरा के पास आया। उनके लिए मेहेरा की सलाह थी, "मान जाओ। बाबा के लिए दूसरे के विचार और इच्छा को मानना सीखो।"

उस जोड़े के बीच कई सालों तक बड़ा मतभेद रहा था और वे अपनी समस्याओं को लेकर अक्सर मेहेरा के पास आते थे। मेहेरा अपने सामने पति, पत्नी में से एक को ही बोलने की अनुमति देती थीं। इस प्रकार पहले पत्नी अपना पक्ष और दृष्टिकोण बताती थी। यदि पति टोकने का प्रयास करता तो मेहेरा उसे चुप करा देतीं थीं।

कभी कभी पति कहता, "लेकिन वह (उसकी पत्नी) जो कह रही है, सच नहीं है।" लेकिन मेहेरा का दृढ़ उत्तर होता, "इससे कोई मतलब नहीं; उसे कहने दो; तुम्हारे बोलने की बारी भी आयेगी।" जब पत्नी अपनी बात कह चुकती तब पति को बिना किसी टोका–टाकी के अपनी बात कहने की अनुमति मिलती थी।

जब दोनों अपनी अपनी बात कह चुकते तो मेहेरा दोनों को सम्बोधित करके कहती थीं, "ठीक है। अब मैं देखना चाहती हूँ कि तुम दोनों में से कौन बाबा को अधिक प्यार करता है। मैं जानना चाहती हूँ कि पहले कौन झुकता है।"

बार–बार वह इसी बात पर ज़ोर देती थीं कि हमें सबके अन्दर बाबा को देखने का अभ्यास करना चाहिए। यदि यह हो गया, तब कोई झगड़ा नहीं होगा। परन्तु ऐसा करने के लिए हमें अपने अहं को छोड़ना होगा। इस तरह व्यक्तियों की भिन्नता के कारण होने वाला गुस्सा, आपसी प्रेम के मार्ग में बाधक नहीं होगा।

मेरा सौभाग्य था कि मैंने खोर्शीद, मनसारी और मंडली के अन्य जनों से विवाह के विषय में ऐसे ही विचार सुने। हम विवाह में एक–दूसरे को अच्छी तरह जानने समझने को आवश्यकता से अधिक महत्व देते हैं। मुझे एक बार एरच द्वारा की गई टिप्पणी याद है, "जहाँ प्यार है, वहाँ देने की इच्छा होती है। देने के लिए झुकने और अपने आपको एक दूसरे के

अनुकूल ढालने की इच्छा होनी चाहिये। प्रेम हृदय के साम्राज्य का विषय है, जबकि समझने की कोशिश हमें मन के राज्य में ले जाती है और सभी जानते हैं कि मन कितना धोखेबाज़ है। यह कष्ट उत्पन्न करता है। इसी कारण यह कहा गया है कि, 'मन का व्यवहार आपके साथ ऐसा होता है जैसा आपके घोर शत्रु का भी न होगा।' प्रायः हम लोगों को कहते सुनते हैं, 'अब मैं समझा।' इससे यही स्पष्ट होता है कि वह अभी भी नहीं समझा और केवल समझता है कि वह समझ गया; लेकिन एक नई स्थिति उसके मन को पुनः झकझोरती है और तब वह समझ ग़ायब हो जाती है। बाबा ने कहा है, 'मुझे समझने की कोशिश मत करो—सिर्फ़ मुझसे प्रेम करो।''

• • •

eR;|

इन सभी कहानियों को जब मैंने सुना था तो हृदय गद्गद् और मस्तिष्क शान्त हो गया था। लेकिन जैसा एरच ने बताया था, स्थितियों के परिवर्तन की नई लहर मन को आन्दोलित कर दिया करती थी और मैं मानसिक झंझावात में पुनः फँस जाता था। मेरे विचार से, इससे मुझे उन क्षणों की, जब मैं वहाँ के वातावरण में व्याप्त बाबा के प्रेम से शान्ति प्राप्त करता था, क़ीमत अधिक समझ में आई। पर यह तभी संभव हो पाता था जब मेरा ध्यान कहीं और नहीं होता था।

जैसा मैं बता चुका हूँ, मुझे मेहेराबाद, अहमदनगर ट्रस्ट परिसर और मेहेराज़ाद में निवास का अनुपम सौभाग्य मिला था। इनमें से प्रत्येक स्थान का अलग—अलग आकर्षण था और साथ ही साथ पागल बना देने के अपने अपने विशिष्ट ढँग भी थे। मेरे विचार से मेहेराज़ाद में सबसे अधिक पसन्द आने की बात यह थी कि वह एक आश्रम जैसा लगता था। लगता था कि यह जगह दुनिया से अलग और बाबा की उपस्थिति से ओत प्रोत थी जो वहाँ निवास करने वाले उनकी मंडली के जनों के माध्यम से प्रतिबिम्बित भी होती थी।

सुबह एरच मेहेराज़ाद जाने वाली सड़क पर टहलने जाते थे और मैं उनके साथ जाता था। थोड़ी दूर चलने के बाद निकटवर्ती झोपड़ियों में निवास करने वाले बालक एरच को घेर लेते थे। वह अपनी जेब से मिठाई या टॉफ़ी के पैकेट का झोला निकालते और बच्चों को बाँटते हुए इसका ख़्याल रखते थे कि प्रत्येक को टॉफ़ी या मिठाई मिल जाये। बच्चे और उनके माता पिता भी इस प्रसाद वितरण से अति प्रसन्न दिखते थे।

मैंने एक बार कहा, "जब आप प्रसाद बाँटते हैं तो उनके चेहरों पर प्रसन्नता के भाव देखकर खुशी होती है।"

एरच ने उत्तर दिया, "यह मिठाई की मिठास नहीं बल्कि बाबा की मिठास है जिसे प्रसाद के माध्यम से प्राप्त करके उनके हृदय प्रसन्नता से आलोकित हो उठते हैं।"

जब हम मेहेराज़ाद के सिरे तक पहुँचते तो एरच यह कहते हुए वापस लौटते थे कि, "मेरी दिनचर्या समाप्त हुई"। अन्ततः मैंने एक दिन पूछ ही लिया कि, अभी जब कि दिन प्रारम्भ ही हुआ था तो वे ऐसा क्यों कहते थे।

एरच का उत्तर था, "दिन के आरम्भ का यह हिस्सा मेरा अपना था, शेष दिन तो दूसरों के लिए रहता है।"

एक अन्य दीर्घकालीन अन्तेवासी, डा. एन मोरेन, भी प्रायः रविवार के दिन एरच के साथ सुबह घूमने के समय साथ होतीं थीं। ऐसे ही एक दिन, कड़कड़ाते जाड़े के महीने में सुबह, एरच ने हमें सूखा अदरक चबाने के लिए दिया। उसके तीखे स्वाद ने मुँह को अच्छा गर्म कर दिया। हम टहलते हुए सड़क के अन्त तक पहुँचने वाले थे कि एरच शीघ्रता से पीछे मेहेराज़ाद की ओर मुड़े। आधी दूर जाने के बाद उन्होंने हमसे कहा ''मुझे पेशाब करना है; मैं रोक नहीं सकता। बड़े ज़ोर से पेशाब लगी है।"

एरच में गज़ब का आत्म संयम था परन्तु बाद के वर्षों में बीमारी और दवाइयों के अधिक सेवन के कारण अपने शरीर पर उनका नियंत्रण पहले जैसा नहीं रह गया था। इसलिए एरच ने सड़क पार करके अपने को हल्का किया। हमारे पास वापस आते समय, उन्होंने हमसे कहा, "तुम्हें नहीं पता कि मैं कितनी खुशी महसूस कर रहा हूँ। वाह क्या सुकून है ! कितना सुकून मिला।"

मैंने टिप्पणी की कि मैं भी ऐसी स्थितियों से गुज़रा हूँ और जानता हूँ कि हल्के होने के बाद कैसा लगता है, परन्तु एरच ने दोहराया, "तुमको अन्दाज़ नहीं हो सकता रुस्तम कि मैं कितना प्रसन्न हूँ। कितना सुकून मिला है।"

फिर एरच कुछ रुककर बोले, "तनिक कल्पना करो कि थोड़ी मात्रा में मूत्र त्यागकर जब आत्मा इतनी प्रसन्न होती है तो वह मृत्यु के बाद इस भारी–भरकम शरीर का बोझ त्यागकर कितने आनन्द में होती होगी। क्या तुम उस समय के आनन्द और उल्लास का अनुमान लगा सकते हो ?" फिर वह बाबा के साथ बिताये अपने जीवन का एक वृतान्त बताने लगे जिसे उन्होंने कई बार मंडली हाल में भी बताया था।

"जब मेरे पिता, पापा जसावाला गुज़रे तो बाबा मेरे साथ कार में अग्नि–मंदिर गये जहाँ अन्तिम संस्कार हो रहा था। हम अन्दर नहीं गये लेकिन जब अर्थी टावर ऑफ साइलेन्स (शान्ति–स्तूप) में ले जाने के लिए निकाली जा रही थी, तो बाबा ने उसकी तरफ इशारा करके पूछा, 'वह क्या है ?'

"मैंने कहा, 'बाबा, वह पापा का शरीर है।'

"इससे बाबा संतुष्ट नहीं हुए और उन्होंने पूछा, 'वह क्या है ?'

''मैंने फिर बताया कि वह मेरे पिता का मृत शरीर था।

"लेकिन बाबा ने फिर पूछा, 'वह क्या है ?'

"मैं यह नहीं समझ सका कि बाबा मुझसे यह क्यों पूछ रहे थे? वे सर्वज्ञ थे फिर भी ऐसा लगता था कि 'शव' क्या होता है, वह नहीं जानते थे। इसलिए मैंने व्याख्या करनी शुरू की कि, 'बाबा आप तो जानते हैं कि जब व्यक्ति की मृत्यु हो जाती है तो शरीर मृत हो जाता है। बाबा, यह वही मृत शरीर है' और यह व्याख्या करते हुए मुझे संकोच सा हुआ क्योंकि मैं उन्हें ऐसे समझा रहा था जैसे वे बच्चे हों।

''बाबा ने अचानक विषय परिवर्तन किया और मुझसे पूछा, 'क्या तुम सुबह पाखाने जाते हो ?'

"मैंने कहा, 'हाँ'। तब बाबा ने पूछा, 'जब तुम मल त्याग करते हो तो क्या तुम दुखी होते हो ?'

"नहीं, मैंने उत्तर दिया, 'सच तो यह है कि मल त्याग करके मुझे प्रसन्नता होती है।'"

यह सब बताते हुए एरच खूब हँसे क्योंकि उस समय उन्हें कब्ज़ियत की शिकायत थी और वह अच्छी तरह जानते थे कि सबेरे अच्छी तरह पाख़ाना आने में कितना मज़ा आता है।

"बाबा ने तब मृत शरीर की तरफ इशारा किया और कहा, 'मृत्यु वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा आत्मा शरीर रूपी मल (पाखाने का) का त्याग करती है। तुम वहाँ पड़ा हुआ जो देख रहे हो वह आत्मा का मल (पाखाना) है।'''

इसके बाद एरच ने हमसे कहा, "जीवन भर हम मानव शरीर की ओर, जो आत्मा का मल है, खूब ध्यान देते हैं जबकि हम आत्मा की अवहेलना करते रहते हैं।''

• • •

vk/;kfRed izf'k{k.k jklk;fud dkj[kkus ¼dSfedy QSDVah½ dk fookn

मैं बता चुका हूँ कि कुछ ऐसी बातें थीं जो अन्तेवासी के रूप में मेरे जीवन को कठिन बना देती थीं। पहली बात तो अन्य अन्तेवासियों का व्यवहार था। दूसरा कार्यों को करने का ढँग था। ट्रस्ट (न्यास) संगठित था; इसका एक चेयरमैन (अध्यक्ष) था और न्यासियों (Trustees) का एक समूह (बोर्ड) था, और विभिन्न कार्यों के लिए समितियाँ (कमेटियाँ) थीं और लोग इन समितियों के अधीन कार्य करते थे और इस पर भी, इस सबके (स्तरीय प्रशासनिक व्यवस्था के) बावजूद कार्य कभी न्याय संगत ढँग से नहीं किये जाते थे। एक इन्जीनियर के रूप में मुझे किसी समस्या को हल करने और किसी विशेष कार्य को सबसे सरल तरीक़े से करने का उपाय

ढूँढने का अभ्यास था। लेकिन ट्रस्ट द्वारा, समस्याओं से निपटने का यह तरीक़ा कभी भी अपनाया जाता, प्रतीत नहीं होता था। एक दीर्घकालीन अन्तेवासी, क्रैग ने मुझसे एक बार कहा था, "मेहेराबाद में दो और दो पाँच हो सकते हैं, और यदि आप ज़िद करेंगे कि चार होते हैं तो इसका मतलब होगा कि आपको मेहेरबाबा के संरक्षण में आध्यात्मिक जीवन बिताने के बारे में अभी काफ़ी कुछ सीखना है।"

अन्तेवासी के रूप में रहते हुए यह रोज़–रोज़ की निराशा थी कि ट्रस्ट के कार्यों के बारे में ट्रस्ट का रवैया, मेहेरबाबा द्वारा दी गई दर्शनशास्त्र की परिभाषा– "सरल बात को जटिल बना देना''–को चरितार्थ करने वाला प्रतीत होता था।

ऐसी स्थिति को सहन किया जा सकता था, एक आकर्षक मानसिक प्रवृत्ति के रूप में स्वीकार भी किया जा सकता था अगर एक तीसरी बात मेरे जीवन को दूभर न बना देती–वह यह थी कि इस प्रशासनिक व्यवस्था में, चाहे कितनी ही सावधानी बरती जाये कि अपनी ओर से कोई विवाद न होने पाये और इस अस्त व्यस्त, न्याय विरुद्ध ढँग से बिछे बारूदी सुरंग से पार हो जाये, परन्तु अन्ततः हमेशा विस्फ़ोट हो ही जाता था।

किसी समय जब आपके सामने चुनाव करने की बात आती तो चाहे आप ने ठीक उसी ढँग से काम क्यों न किया हो जैसा मंडली ने बताया था, हर बार आपको बताया जाता था कि आपका चुनाव ग़लत था। और यह बात किसी अन्य अन्तेवासी द्वारा नहीं बल्कि स्वयं मंडली द्वारा ही कही जाती थी। सचमुच ऐसी बातें ही अन्तेवासी और तीर्थयात्री के जीवन का अंतर थीं।

तीर्थयात्रियों का अनुभव, इससे एकदम उल्टा होता था। वे आते थे और मंडली द्वारा उड़ेले गये प्रेम में सराबोर होकर लौटते समय, बाबा से प्रेम करने के अपने तरीक़े की पुष्टि का भाव ले जाते थे। वे अनुभव करते थे कि उनके विचारों से मंडली जन सहमत थे तथा इस प्रकार वे अपने मार्ग पर बढ़ते रहने की शक्ति संचित करते थे। लेकिन जैसे ही आप अन्तेवासी बनते हैं, वह आत्म–प्रमाणिकता जाने कहाँ लुप्त हो जाती है।

आप चाहे कितने ही अधिक परिश्रम से मंडली के किसी अनुरोध का पालन करें, उनके निर्देशों का कितना ही अक्षरशः पालन करें, अन्त में आप यह अनुभव करेंगे कि आपने ग़लत किया है और आपने उन्हें निराश किया है। आपने मूल रूप से उन्हें शर्मिंदा किया है। यह जानकर कि कुछ ऐसा ही अनुभव स्वयं मंडली जनों ने भी बाबा के साथ रहते हुए किया था, कुछ सान्त्वना अवश्य मिलती थी, परन्तु सान्त्वना मात्र बौद्धिक ही होती थी, भावनात्मक स्तर पर आपको तीव्र पीड़ा का अनुभव होगा।

एरच ने एक बार टिप्पणी की थी, "तुम्हारा काम तो तुम्हारे ऊपर बाबा के द्वारा आध्यात्मिक कार्य करने का बहाना मात्र है। तुम्हारे संस्कारों पर कार्य करके वे तुम्हारे अहंकार को पीसते हैं। यदि तुम पूर्णतया उनके अधीन होकर उनके गुलाम बन जाते हो तो वह तुम्हें वास्तविक स्वतंत्रता का अनुभव प्रदान करेंगे।"

यद्यपि मुझे लेश मात्र भी शंका नहीं थी कि एरच जो कह रहे थे वह खाली सैद्धान्तिक व्याख्यान न था बल्कि एरच ने यही किया था। उनकी उपस्थिति में स्वतंत्रता की ऐसी स्पष्ट अनुभूति होती थी जैसे समुद्री यात्रा में समुद्र की खुशबू, फिर भी, बाबा की इच्छा के अधीन रहकर निश्चिन्त हो जाना, मेरी तीव्र इच्छा और समर्पण के बावजूद, मेरे लिए कठिन था।

इसका नतीज़ा यह था कि ट्रस्ट के अधीन रहकर बाबा–कार्य करने की कोशिश करते हुए मैं प्रायः भ्रमित होकर निराशा का अनुभव किया करता था। और चौथी बात जो कई प्रकार से मेरे अन्तेवासी जीवन का सबसे कठिन रूप थी, यह थी कि मुझे लगता था कि मंडली जन समस्याओं के समाधान के लिए अपने अधिकार का प्रयोग नहीं करते थे और ज़्यादातर वे स्वयं ही समस्याओं के कारण थे।

तीर्थयात्री के रूप में जब मैं भ्रमित अथवा किसी प्रकार से उपेक्षित महसूस करता था तो मैं स्पष्टीकरण और सहारे के लिए, मंडली की ही शरण लेता रहा था। अन्तेवासी बनते ही मैं अपने आप को अपने थोड़े से संसाधनों के सहारे, दूर ढकेल दिया गया पाता था। अपने आपको सामान्य रखने के लिये, मैं अपने को यही समझाता था कि मंडली मुझे कठिनाइयों

में नहीं डाल रही है बल्कि बाबा मंडली को निमित्त बनाकर, मेरे अहंकार को चकनाचूर करके नष्ट कर रहे हैं।

यह स्थिति एक उदाहरण द्वारा स्पष्ट हो सकती है। वर्ष १९९१ में, एक स्थानीय व्यापारी ने मेहेराज़ाद जाने वाली सड़क पर एक रासायनिक कारखाना शुरू किया। इस कारखाने से इतनी तीखी गंध निकलती थी कि कभी कभी साँस लेने पर उल्टी आने लगती थी। स्थानीय किसानों को स्वास्थ्य संबंधी समस्या होने लगी और रासायनिक प्रदूषण का प्रभाव नज़दीकी कुओं के पानी पर भी पड़ने लगा।

डा. गौहर को आसपास के किसान परिवारों के स्वास्थ्य की चिन्ता हुई और समस्या के निदान हेतु हमने क़ारखाने के मालिक के साथ एक बैठक की। मालिक ने मंडली को आश्वासन देते हुये कहा कि कारखाना चलाने के लिये उसने जो छोटा टिन शेड बनाया है, वह अस्थाई है और निकट भविष्य में कारखाना औद्योगिक क्षेत्र में स्थानान्तरित कर दिया जायेगा।

मंडली ने तय किया कि इस समय इस बारे में कुछ करने की आवश्यकता नहीं है। लेकिन बिना किसी पूर्व चेतावनी के कारखाने के मालिक ने अपने वादे के खिलाफ़ टिन शेड की जगह अधिक स्थाई और बड़ा निर्माण करना आरम्भ कर दिया और कारखाने को स्थानान्तरित करने के लिए उद्दंडता पूर्वक मना कर दिया। सभी अनुरोधों, प्रार्थनाओं को उसने अनसुना कर दिया। सच तो यह है कि छोटा सा टिन शेड बनाने के लिए भी, उसने उपयुक्त अधिकारियों से अनुमति लेना ज़रूरी नहीं समझा।

मैंने इस मामले में रुचि ली और मंडली को इस कष्ट से छुटकारा दिलाने की ठान ली। मैंने सरकारी अफ़सरों के पास जाना शुरू किया जिससे पता चला कि कारखाने के मालिक की राजनीतिक पहुँच मज़बूत थी जिसके चलते कोई कार्यवाही नहीं हो रही थी। इस कारखाने के विस्तार से प्रदूषण के क्षेत्र और तीव्रता में भी विस्तार होता जा रहा था।

मैंने मंडली के सामने प्रस्ताव रखा कि हमें मामले को पर्यावरणीय संगठनों की जानकारी में लाकर, सहायता के लिए प्रार्थना करना चाहिए

जिससे रासायनिक कारखाना हटकर दूसरी जगह स्थानान्तरित हो जाये। मैंने इसके लिए प्रारम्भिक कार्य करने की अपनी स्वैच्छिक सेवा प्रदान करने का प्रस्ताव रखा क्योंकि कुछ पर्यावरणीय संगठनों के अधिकारी मेरे मित्र थे।

मंडली के मत अलग थे। डा. गौहर का मत था कि लड़ना चाहिए लेकिन एरच का विचार था कि हमें इस पचड़े में नहीं पड़ना चाहिए क्योंकि इससे ध्यान (बाबा का ध्यान) भंग होने की संभावना थी। अतः कुछ दिन बीत गये और कोई कार्यवाही न हो सकी। इसी बीच कारखाने के मालिक ने कारखाने का और अधिक विस्तार कर दिया और साथ ही क्लोरीन गैस की इकाई भी लगा दी। फलस्वरूप थोड़े ही दिनों बाद गैस रिसाव की दुर्घटना हो गई। एक रात क्लोरीन गैस रिसने लगी और मेहेराज़ाद में रहने वाला लगभग प्रत्येक व्यक्ति जाग गया। हर किसी को कोई न कोई समस्या–जैसे उल्टी, आँखों में जलन और पानी, हाथ–पैरों में जलन की शिकायत हो गई।

दूसरे दिन मुझे मेहेराज़ाद बुलाया गया और दूसरी मीटिंग की गई। इस बार मुझे यह अनुमति दी गई कि मैं पर्यावरणीय संगठनों के अपने मित्रों से सम्पर्क करके, उनसे सहायता माँगूँ। एरच अब भी सम्पूर्ण कार्यवाही से उदासीन रहे और अगर केवल उनकी बात होती, तो वह प्रस्तावित कार्यवाही के लिए सहमत न होते। लेकिन भविष्य में रासायनिक कारखाना कितना बड़ा हो जायेगा और आसपास के निवासियों के लिए कितना बड़ा स्वास्थ्य का संकट हो जायेगा, यह कहा नहीं जा सकता था। इसलिये, यह सोचकर अन्य लोग योजनानुसार आगे की कार्यवाही चाहते थे।

मैंने पर्यावरण के क्षेत्र में सक्रिय संगठनों के अपने मित्रों से सम्पर्क करना प्रारम्भ किया और दो संगठन सहायता करने के लिये आगे आये। उन्होंने मुझे सलाह दी कि समुचित प्रशासनिक अधिकारियों के पास आवेदन करके औपचारिक शिकायत दर्ज़ कराना मेरा पहला क़दम होगा। तदनुसार मैंने एक पत्र का आलेख तैयार किया और उसे फ़ालू को दिखाया जो मेहेराज़ाद की देखभाल करने वाले और लम्बी अवधि से

अन्तेवासी थे। उन्होंने कुछ संशोधन किये और संशोधित आलेख अधिकारियों को भेजने से पहले, एरच को दिखाकर, उनसे अनुमोदन कराने को कहा।

अगले दिन ट्रस्ट आफ़िस में मैंने एरच से अनुरोध किया कि सरकारी विभाग में भेजने से पहले वह मेरे पत्र को देख लें। एरच की पहली प्रतिक्रिया यह थी कि मैं पहले फ़ालू को दिखा लूँ। जब मैंने बताया कि फ़ालू को आलेख दिखाया जा चुका है और फ़ालू ने मुझे एरच के पास भेजा है, तो एरच कुछ परेशान लगे और उन्होंने कहा, "फ़ालू से कह दो कि इन बातों के लिए मेरे पास वक़्त नहीं है और मुझे इसमें शामिल न किया जाये। मेरा इससे कुछ लेना देना नहीं है।"

फलस्वरूप मैं पुनः फ़ालू के पास वापस गया और सारी बात बताई। फ़ालू ने कहा कि एरच की प्रतिक्रिया विचित्र थी लेकिन पत्र उनसे अनुमोदित कराना ज़रूरी है। फ़ालू ने बताया कि एरच की सहमति आवश्यक है ताकि यदि कोई बात बनती–बिगड़ती है तो उन्हें हम पर दोषारोपण करने का अवसर न मिले।

मैंने कहा, "जब वे इसे पढ़ने को भी तैयार नहीं हैं तो भला मैं उनकी सहमति कैसे लूँ ?"

"उनके पास बार–बार जाते रहो," फ़ालू ने कहा, "अगर वे तुम्हें डाँटकर भगाते भी हैं, तब भी बार–बार उनसे अनुरोध करते रहो।"

इस सलाह से उत्साहित होकर मैं अगले दिन फिर ट्रस्ट आफ़िस जाकर एरच से मिला। उन्होंने तुरन्त यह कहते हुए, "इस सबसे मेरा कोई मतलब नहीं है और मेरे पास समय भी नहीं है", मुझे वापस भेज दिया।

इस सबसे मैं विचलित हो गया। मैं अनुभव करता था कि मैं एक अच्छा काम कर रहा था और अन्ततः मंडली ने जिसके लिए अनुमति भी दी है तथा मुझे उनकी ओर से कार्यवाही करने के लिये अधिकृत भी किया गया है। लेकिन पहले कदम पर ही मेरा प्रयास एरच द्वारा निष्फल किया जा रहा है। इससे भी ख़राब बात यह थी कि एरच मेरे प्रयासों से चिढ़े हुए जान पड़ते थे। ऐसा नहीं था कि पत्र देखने के लिए वे बहाने बनाते हुए

टाल रहे हों। उन्होंने यह नहीं कहा कि "अभी मेरे पास समय नहीं है" या कि, "मेरे पास इसके लिए कभी समय न रहेगा, तुम अपनी ओर से जो ठीक समझो, करो।'' बल्कि इस बात को लेकर उनका व्यवहार ऐसा था जैसे मैं अनावश्यक रूप से उनके पीछे पड़ा हूँ। उनके व्यवहार से ऐसा जान पड़ता था कि पूरी योजना ही व्यर्थ है तथा इसे समय देना उनके लिए ही नहीं बल्कि मेरे लिए भी बेकार है।

एरच से पत्र पढ़वाने की कठिनाई और परेशानी से अधिक पीड़ादायक यह अनुभूति थी कि मैं उनकी घोर अप्रसन्नता का कारण बन रहा था। मैं न जान सका कि एरच ऐसा व्यवहार क्यों कर रहे थे। पूरे मामले पर कई बार विचार और विश्लेषण करने पर भी मैं यह नहीं जान पा रहा था कि मुझसे कहाँ ग़लती हुई थी। इस पर भी मुझे दो बातों में से एक का चुनाव करना था—या तो पूरे मामले को छोड़कर, एरच की प्रसन्नता वापस लाकर उनका कृपापात्र बना रहूँ अथवा अपना प्रयास ज़ारी रखते हुए, उन्हें अपने से और दूर करता जाऊँ। शायद दूसरा विकल्प लोगों को आसान लगता हो परन्तु मेरे लिए ऐसा न था।

पर्यावरण संरक्षण समूहों से अच्छे संबंधों के कारण मुझे लगता था कि इस काम को करने के लिए मैं उपयुक्त व्यक्ति था। फिर यह काम भी ऐसा था जिसके कल्याणकारी होने में मेरा विश्वास था। मेरे लिए सम्पूर्ण हृदय से इसको सम्पन्न करने में कोई कठिनाई नहीं थी। इसके अतिरिक्त मेरे अवचेतन मन में संभवतः यह भावना भी थी कि इसी बहाने मेहेराज़ाद के पवित्र वातावरण की रक्षा करने में, निमित्त बनने का मुझे अवसर मिलेगा। मैं प्रायः यह सोचता रहता था कि इस काम को अवश्य करना है। प्रदूषण से स्वास्थ्य की जो समस्या हो रही थी और मंडली के स्वास्थ्य को इससे जो हानि हो सकती थी, उससे मैं चिन्तित था। उनकी उपस्थिति में मुझे जो प्रेम मिलता था उसकी यह स्वाभाविक प्रतिक्रिया थी कि मैं उन्हें इस समस्या से बचाये रखना चाहता था, उनको सहेजना चाहता था। इस प्रकार अवकाश के क्षणों में मैं एक कल्याणकारी और मूल रूप से निस्वार्थ कार्य में लगे होने की बात सोचता रहता था। इस पर भी, मेरे प्रयासों की सराहना होने, मंडली की आँख का तारा बनने के बजाय, मुझे लगता था

कि मैं उनकी आँख की किरकिरी बन रहा हूँ। बहरहाल, मैंने बहुत कुछ दाँव पर लगा रखा था और आगे बढ़ते रहने के अतिरिक्त मेरे पास और कोई विकल्प न था।

ट्रस्ट के कार्यालय के समय में एरच को पत्र दिखा पाने की कोशिश व्यर्थ थी। इससे वह और अधिक विचलित होते; इसलिए मैंने तय किया कि शाम की चाय के समय कोशिश की जाये। उन दिनों, पिछले कई वर्षों से चले आ रहे नियम के अनुसार, तीन बजे के आसपास चाय का अवकाश होता था और चाय पी जाती थी। लेकिन यह परम्परा दैनिक कार्य में अस्थाई विराम से कुछ हटकर थी। यह ऐसा विराम था जब मंडली लगभग आधे घंटे के लिए तीर्थयात्रियों से मेल–मिलाप, अभिवादन–आलिंगन वाले कार्य में व्यस्त हो जाती थी।

मनी इस समय का सदुपयोग, उन तीर्थयात्रियों के साथ, जिनके साथ वह अधिक समय नहीं विता पातीं थीं, अन्तरंग बातचीत करके करतीं थीं। अक्सर लोग (तीर्थयात्री) अपने आप, केवल उनका सामीप्य फिर से प्राप्त करने आ जाते थे। कभी–कभी लोग व्यक्तिगत समस्या लेकर सलाह लेने आते तो कभी–कभी कुछ लोग मेहेराबाद की किसी समस्या की शिकायत लेकर आते थे क्योंकि उस समय मनी ट्रस्ट की चेयरपर्सन (अध्यक्ष) थीं।

ऐसा ही एरच के साथ था। ट्रस्ट परिसर में रहने वाले अन्तेवासी ही नहीं, बल्कि जब भी सम्भव होता, मेहेराबाद और मेहेराज़ाद के अन्तेवासी भी पिछले बरामदे में उनकी छोटी मेज़ के इर्दगिर्द ज़मा हो जाते थे। तब वातावरण अत्यन्त सहज, अनौपचारिक होते हुए भी जीवन्त हुआ करता था, जैसा एरच के आसपास सदैव रहता था।

कभी कदा एरच किसी ख़ास तीर्थयात्री को भी बुला लेते थे और तब मंडली हाल जैसा वातावरण बन जाता था। एरच हर सम्भव प्रयास करते कि वह तीर्थयात्री सहज और निश्चिंत हो जाये। कभी–कभी वे (तीर्थयात्री) उनसे (एरच से) किसी विशेष कहानी को सुनाने का अनुरोध करते थे जिसे एरच बिना किसी अपवाद के स्वीकार कर लेते थे। कभी उन्हें (तीर्थयात्रियों को) प्रश्न पूछना होता तो एरच कहते, ''आपने मंडली हाल में क्यों नहीं पूछा ? कोई बात नहीं, कहिए क्या पूछना है ?''

अगर केवल ट्रस्ट कार्यालय में काम करने वाले लोग ही होते तो बातचीत किसी भी विषय पर हो सकती थी। प्रायः लोग एरच को कुछ ऐसा बताना चाहते थे जिसमें उनकी समझ से एरच को रुचि होती और तब थोड़ी ही देर बाद हँसी के ठहाके और प्रसन्नता से भरपूर हल्का शोर छा जाता।

दो या तीन दिन मैं चाय–के समय में गया और मौक़े की तलाश में रहा। अन्ततः एक दिन केवल दवाना और मैं वहाँ थे। मैंने पूछा, ''एरच, क्या इस समय आप फ़ुरसत में हैं ?''

''हाँ, क्यों पूछ रहे हो ?''

मैंने जेब से पत्र निकाला और उनके सामने डेस्क पर रखते हुए, उनसे पढ़ कर अपनी सहमति देने के लिये कहा।

एरच तुरंत चिड़चिड़ाते हुए बोले, ''मैंने तुमसे कहा था कि इन बातों के लिए मेरे पास समय नहीं है।''

''लेकिन अभी जब मैंने पूछा था कि 'आप फ़ुरसत में हैं ?' तो आपने 'हां' कहा था।'' मैंने प्रतिवाद करते हुए कहा।

''मैं इस मामले में पड़ना नहीं चाहता,'' एरच ने प्रतिरोध किया।

''फालू कहते हैं कि जब तक आप इस पत्र पर अपनी सहमति नहीं देंगे, शिकायत दर्ज़ नहीं होगी'' – मैंने अपरोक्ष रूप से दबाव बनाते हुये कहा। बड़े अनमने ढँग से एरच मान गये, पत्र पढ़ा और कुछ संशोधन भी किये। मैं प्रसन्न था कि आख़िर यह काम हो ही गया।

मैंने पत्र पुनः टाइप किया और चैन की साँस ली कि अन्ततोगत्वा अब मैं इसे दाख़िल कर दूँगा। मैंने फ़ालू से बताया कि मैं सफल हो गया और अब मैं पत्र पोस्ट करने जा रहा हूँ। मुझे आश्चर्यचकित करते हुए उन्होंने कहा कि मैं पत्र भेजने से पहले मेहेराज़ाद मंडली के प्रत्येक जन को दिखाकर सबकी सहमति लूँ। मैं स्तब्ध रह गया।

''लेकिन फ़ालू'', मैंने प्रतिवाद किया, ''हम कोई पुस्तक नहीं लिख रहे हैं। यह एक शिकायती पत्र है जिसे मामले की गम्भीरता देखते हुए तत्काल दाखिल किया जाना है।''

फ़ालू को मुझसे सहानुभूति थी लेकिन उसने बताया कि सामान्य प्रक्रिया तो यही है, भले ही शिकायत पत्र दाख़िल करने में तनिक और विलम्ब हो जाये। उन्होंने सुझाव दिया कि मंडली के प्रत्येक जन से पत्र भेजने की सहमति लेते समय यदि कह दिया जाये कि इसे एरच ने देखकर अपनी सहमति दे दी है, तो आसानी होगी।

ये बात सच तो निकली, लेकिन इसे पूरा करने में मुझे दो या तीन बार मेहेराज़ाद जाना पड़ा क्योंकि जब मैं वहाँ जाता था तो मंडली के सभी जन वहाँ नहीं मिलते थे। क्योंकि उन्हें दूसरा काम भी होता था। बहरहाल जब सबने पत्र देख लिया तो मैंने पत्र को पुनः टाइप किया और फ़ालू से बताया कि काम हो गया।

''अभी नहीं'' फ़ालू ने मुझे बताया। अन्तिम सहमति तो भाऊ जी की लेना थी, जो ट्रस्ट परिसर में ही रहते थे।

अतः मैं पत्र भाऊजी के पास ले गया और बताया कि मेहेराज़ाद के सभी जन, मनी और एरच सहित, इसे देखकर अपनी सहमति दे चुके हैं। मुझे आशा थी कि पत्र पढ़कर सुना देना मात्र औपचारिकता होगी और भाऊ जी इसमें कुछ जोड़ना–घटाना नहीं चाहेंगे।

मैंने पत्र पढ़कर पूरा किया और प्रतीक्षा कर रहा था कि भाऊजी पत्र ठीक है, कहते हुए इसे पोस्ट कर देने को कहेंगे। परन्तु मैं तो सकते में आ गया जब भाऊजी ने उसमें अतिरिक्त टिप्पणी जोड़ना शुरू किया और वह भी केवल एक या दो पंक्तियाँ नहीं बल्कि एक के बाद एक कई पैराग्राफ़। उनकी टिप्पणियाँ समाप्त होते होते पत्र बहुत लम्बा हो गया। मेरा मन डूबने लगा क्योंकि मैं इस तथ्य को जानता था कि राजकीय अधिकारी/कर्मचारी, यदि पत्र आवश्यकता से अधिक लम्बा हो तो उसे पढ़ते ही नहीं। लेकिन मैं क्या करता ? मैंने पूरा पत्र फिर से टाइप किया और भाऊ जी को, उनकी अन्तिम सहमति के लिये दिखाया। जब उन्होंने

एक दिन पहले स्वयं लिखाये हुए पत्र को, सही करते हुए उसमें और बिन्दु जोड़ना शुरू किया, तो मैं आश्चर्य से व्याकुल हो गया।

मैंने भाऊ जी से अनुरोध किया कि बिन्दु भरसक संक्षिप्त रखें परन्तु वे हर बिन्दु की लम्बी व्याख्या लिखवाते रहे। भाऊजी ने पूरा पत्र पुनः टाइप हो जाने के बाद देखना चाहा। जब मैंने उनसे पत्र वापस लिया तो उसमें कई अतिरिक्त, नये बिन्दु देखकर मैं भयभीत हो गया। पत्र सुनने के बाद भाऊजी को लगा, अभी कुछ अन्य बिन्दु भी सम्मिलित करने की आवश्यकता है।

दिन बीतते गये और पत्र लम्बे से लम्बा होता गया क्योंकि भाऊ जी उसमें संशोधन करते गये। फ़ालू ने मेहेराज़ाद से फोन करके मुझसे पूछा कि मैंने अभी तक पत्र क्यों नहीं भेजा। मैंने, जो कुछ हो रहा था, उन्हें बताया तो उन्होंने कहा, ''भाऊ जी से कहो कि मेहेराज़ाद मंडली आज ही उसे देखना चाहती है, इसलिए जो भी संशोधन करना हो, आज ही अन्तिम बार कर लें। इसके बाद कोई संशोधन नहीं होगा और शिकायत भेज दी जायेगी।''

यह सुनकर मैंने चैन की साँस ली क्योंकि भाऊ जी की ओर से कोई जल्दबाज़ी नहीं दिख रही थी और वे रोज़ पत्र में कुछ न कुछ जोड़ते जा रहे थे। मूल पत्र मात्र एक पृष्ठ का था; अब वह एक छोटी पुस्तक का रूप ले चुका था।

इस तरह गैस रिसाव की घटना के इक्कीस दिन बाद शिकायती पत्र भेजा जा सका। इसकी प्रतियाँ पर्यावरण से संबंधित समितियों एवं उनके वकीलों को भी भेजी गईं। वे हैरान थे कि दुर्घटना के तीन सप्ताह बाद ''अति आवश्यक'' पत्र भेजा गया था। उन्होंने बताया कि ऐसी परिस्थितियों में तत्काल उसी दिन शिकायत भेजनी चाहिए थी जिससे कि संबंधित प्रशासनिक अधिकारियों को दुर्घटना स्थल की जाँच करने और गवाह तथा सबूत एकत्र करने का पर्याप्त अवसर मिल सके।

मैंने यह बात मंडली को यह सोचकर बताई कि भविष्य में इस बात का ध्यान रखा जाये। मंडली मेरी बात भले ही न माने लेकिन अनुभवी

वकीलों की सलाह तो मानेगी। कुछ ही दिन बीते होंगे कि फैक्ट्री में गैस रिसाव की दूसरी बड़ी दुर्घटना घट गई। वकीलों के परामर्श से मैंने पत्र तैयार किया। और मुझे आशा थी कि यह उसी दिन जमा हो जायेगा। पत्र जल्दी से जल्दी भेजना है, यह बात मैंने सबको समझा कर कह दी और उन लोगों की प्रतिक्रिया सकारात्मक रही क्योंकि पिछली बार की तरह पत्र भेजने में तीन सप्ताह लगने के बजाय, इस बार पत्र भेजने की अनुमति मिलने में मात्र दस दिन लगे।

पैरवी के लिए जिन वकीलों को हमने चुना था, उनको इस देरी से आश्चर्य होना स्वाभाविक था। उन्होंने मुझसे साफ़–साफ़ कह दिया कि ऐसी ढील–ढाल नहीं चलेगी। मैंने उन्हें बताया कि पत्र भेजने से पूर्व सभी संबंधित व्यक्तियों से सहमति लेना आवश्यक था, और मैं स्वतंत्र रूप से कोई पत्र व्यवहार नहीं कर सकता था।

वकीलों को विश्वास न हुआ। उनमें से एक ने पूछा, ''क्या ये व्यक्ति सामान्य हैं ?''

''नहीं'', मैंने उत्तर दिया, ''वे सामान्य व्यक्ति नहीं, वे ईसामसीह के देवदूत हैं।''

वकील ईसाई था और उसने कहा, ''देखिये यदि आप कानूनी सलाह के अनुसार नहीं चलेंगे तो आपको कारखाना बंद कराने के लिए ईसामसीह के चमत्कार की ही आवश्यकता पड़ेगी।''

अगली बार जब मैं मेहेराज़ाद गया तो फ़ालू से मैंने वकील की बात बताई और कहा कि लालफ़ीता शाही समाप्त करने में मेरी मदद करें। फ़ालू ने सम्पूर्ण मेहेराज़ाद मंडली की बैठक बुलाई जिसमें उन्होंने प्रस्ताव रखा कि भविष्य में मैं वकीलों की सलाह के अनुसार सारे पत्र दाख़िल करूँ, उस पर सबसे सलाह लेने का बंधन न रहे। मुझे अपार आश्चर्य हुआ कि यह योजना सर्व सम्मति से तुरंत स्वीकार कर ली गई।

• • •

viuk le; 0;Fk x|okuk

मुझे एक बार मंडली की सहमति के बिना शिकायती पत्रों को भेजने की अनुमति मिलने पर, पहले तो काम बड़े सहज ढँग से चलता रहा। पर बाद में यहाँ भी मन को चौंकाने वाली रुकावटें आनी प्रारम्भ हो गईं। जब तब प्रतीत होने लगा कि कार्य में संकट का समय आने वाला है, जैसे गैस रिसाव की नई दुर्घटना, ग़ैरकानूनी कारखाना चलने के नये सबूत या कुछ ऐसी स्थितियाँ, जिनके प्रकाश में मुझे नई शिकायत दाख़िल करनी आवश्यक हो जाती। ट्रस्ट आफ़िस खुलते ही मैं वहाँ पहुँच जाता और किसी टाइपिस्ट को पकड़ता ताकि वह मेरी शिकायत जल्दी से टाइप कर दे। कभी–कभी यह पत्र किसी अख़बार में छपे लेख या कारखाने के मालिक द्वारा ट्रस्ट के विरुद्ध झूठी सूचनाओं के आधार पर बहकाये गये किसी राजनीतिक दल की, ट्रस्ट के खिलाफ़ कार्यवाही करने की चेतावनी का उत्तर होता।

कारखाने का मालिक भी, वास्तव में सभी मोर्चों पर केवल अपना बचाव ही नहीं कर रहा था वरन् ट्रस्ट की प्रतिष्ठा और गरिमा को विभिन्न तरीक़े से गिराने के लिए सक्रिय था। मेरे विचार से यह बड़ी नाजुक स्थिति होती थी और ट्रस्ट के विरुद्ध किसी धरना, जुलूस या प्रदर्शन की नौबत आने से पूर्व, उसकी काट करना अनिवार्य प्रतीत होता। ऐसे अवसरों पर ट्रस्ट आफ़िस पहुँचने, कागज पत्र तैयार करने की हड़बड़ी मेरे चेहरे पर साफ़ नज़र आती थी।

जैसे ही टाइपिस्ट से पत्रों की ताज़ी प्रतियाँ मुझे प्राप्त होतीं, मैं उसे दाख़िल करने भागता। उसी समय एरच मेरे पास से गुज़रते हुए पूछते, ''तुम क्या कर रहे हो ?''

मैं उन्हें बताता, ''उसी कारखाने के मामले में कुछ ऐसी बातें हैं जिन्हें तुरन्त दाख़िल करना है।''

''लेकिन अब यह किस बारे में है ?'' वे पूछते। और तब वे मुझे अपनी मेज़ के पास पीछे बरामदे में ले जाते और कहते, ''थोड़ी देर के लिए आराम से बैठकर, मुझे क्यों नहीं बताते कि क्या बात है?''

"लेकिन एरच" मैं आपत्ति जताते हुए कहता, "इसके बारे में क्या हम बाद में बात नहीं कर सकते? अभी मैं ज़रा जल्दी में हूँ।"

तब एरच कहते, "तो बस संक्षेप में ही बताओ; इसमें कुछ मिनट ही तो लगेंगे।"

फिर मैं बैठकर एरच को यथा संभव जल्दी–जल्दी बताता। बहरहाल, हर बार एरच दावे से कहते कि वे उसमें से कोई एक बात नहीं समझे और उस पर मुझसे तब तक प्रश्न करते रहते जब तक मैं उन्हें वह सारी बात वहाँ से शुरू करते हुए, जहाँ तक मैंने उस विषय पर अपनी पिछली बातचीत में उन्हें बताया होता था, अन्त तक की सारी बातें बताते हुए समझा नहीं देता था।

इस सबमें कुंछ मिनट की जगह, घंटों लग जाते क्योंकि हमारी बातचीत के बीच, आफ़िस के अन्य लोगों के, अपने काम लेकर पहुँचते रहने से व्यवधान पड़ता रहता था।

अन्त में जब मैं जाने को उठ खड़ा होता तो एरच कहते, "तुमने जो लिखा है उसे क्या मैं एक नज़र देख सकता हूँ ?" वे उसे "एक नज़र" देखते समय सदैव कुछ न कुछ परिवर्तन के लिए कह देते। इसका मतलब होता मैं टाइपिस्ट के पास जाकर फिर से टाइप कराऊँ और नया वाला फिर उन्हें दिखाऊँ, वह भी जब उन्हें समय हो।

अपने मन में मैं सोचता था कि यह सब बाबा की क्रिया थी परन्तु फिर भी, सम्पूर्ण प्रक्रिया मुझे उद्विग्न कर रही थी। जब एरच का ऐसा व्यवहार ज़ारी रहा तो, इस स्थिति को दूसरे ढँग से देखने में किसी अर्न्तज्ञान ने नहीं बल्कि इस समझ ने मेरी सहायता की कि यह सब उनके लिए मात्र एक खेल था। एक बार जब यह ज्ञान मुझे हो गया तब फिर मेरा व्यवहार बदला और मैं भी मज़ा लेने लगा।

मुझे एरच की एक बात भी याद आई, "यदि ईश्वर प्राप्ति जीवन का लक्ष्य है और उसका सतत स्मरण उसकी चाभी है तो बाक़ी सब कुछ समय बरबाद करना है। जो भी करो उसके (ईश्वर के) लिए करो– इस तरह ईश–स्मरण तुम्हारे दैनिक जीवन का अंग बन जायेगा।"

अब जब भी एरच मुझसे पूछते कि मैं क्या कर रहा हूँ तो बजाय यह बताने के कि मैं रासायनिक कारख़ाने से संबंधित कोई कार्य कर रहा हूँ, मैं उनसे कहता, "कुछ नहीं कर रहा हूँ।"

कभी–कभी एरच आग्रहपूर्वक पूछ बैठते, "तब तुम्हारे हाथ में यह कैसा कागज़ है ?"

"अरे यह ?" मैं कहता, "यह तो बस समय काटने के लिए ऐसे ही है– इसमें कुछ नहीं है।" और तब एरच खूब हँसते और मुझे जाने देते।

• • •

ikxyiu tkjh g

जैसे–जैसे महीने के बाद महीने बीतते गये, यह स्पष्ट होता गया कि वास्तव में कार्य में वांछित प्रगति नहीं हुई है। यह स्पष्ट होने लगा कि यद्यपि कारख़ाने को कभी भी कानूनी स्वीकृति नहीं मिली थी, तथापि सरकारी विभाग मालिक के खिलाफ़ कार्यवाही करने के प्रति उदासीन है।

कारख़ाने के मालिक ने कई बार गर्व से कहा था कि उसके राजनीतिक संबंध बड़े पक्के हैं और अब लगता था कि उसका यह कथन दम्भ मात्र नहीं था। हमारे वकील भी देख रहे थे कि शिकायती पत्रों, अखबारी लेखों और बिगड़ते पर्यावरण के विज्ञापनों से कुछ होने वाला नहीं था। इससे प्रशासन के कान पर जूँ भी न रेंगेगी। हमें अदालत के आदेश से उन्हें कार्यवाही करने के लिए बाध्य करना पड़ेगा। उन्होंने कहा कि अदालत में जाने के अतिरिक्त कोई दूसरा रास्ता नहीं था।

शिकायतें दाखिल करते जाना व्यर्थ था तथा मामले में देर करने से हमारा ही पक्ष कमज़ोर हो रहा था। गैस रिसाव की तीन बड़ी दुर्घटनायें पहले ही हो चुकी थीं और इस बात के पर्याप्त सबूत थे कि कारख़ाना बिना कानूनी अनुमति के चल रहा है, और वह प्रदूषण फैला रहा है।

मैंने इन बिन्दुओं को मेहेराज़ाद मंडली के सामने रखा और सभी जन वकीलों की राय मानने को सहमत हो गये। मुझसे भाऊ जी से भी परामर्श

लेने को कहा गया कि यदि वे सहमत हों तो अदालत की शरण ली जाये। भाऊजी सहमत हो गये इसलिए मैंने फ़ालू से बता दिया कि मैं कुछ ही दिनों में वकीलों से मिलने बम्बई जा रहा हूँ।

जब मैं बम्बई पहुँचा तो मुझे केसी कुक, मेहेराज़ाद की अन्तेवासिनी का फोन मिला, ''मंडली की ओर से आपके लिए संदेश है। वकीलों को बता दीजिए कि कोर्ट–कचहरी छोड़कर, वे और जो चाहें, कार्यवाही करें।''

मैं हक्का बक्का रह गया। ''लेकिन केसी'' मैंने फोन पर कहा, ''मैं बम्बई आया ही इसलिए हूँ कि मंडली ने अदालत का दरवाजा खटखटाने के लिए आदेश दिया था। इसके अतिरिक्त, हमारे वकील पहले ही बता चुके हैं कि और अधिक शिकायत दाख़िल करना बेवकूफ़ी है।''

उसने (केसी ने) कहा, ''एक मिनट ! ज़रा मुझे फ़ालू से बात करने दो।'' थोड़ी देर बाद वह फिर टेलीफ़ोन पर बोली, और कहा, ''ठीक है, अब वे तुम्हें वापस बुलाते हैं।''

मैं किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो गया। मैंने पूछा, ''तो उन्होंने मुझे बम्बई आने को ही क्यों कहा ?'' केसी ने बिना कुछ उत्तर दिये टेलीफ़ोन रख दिया। यह था उदाहरण उस पागलपन का, जो मेरे दैनिक जीवन का अंग सा बनता जा रहा था। मुझे कुछ समझ में नहीं आता था। मुझे लगता था कि अपने मानसिक संतुलन को बनाये रखने के लिये, मुझे बाबा का दामन दोनों हाथों से कसकर पकड़ना होगा। लगा कि मुझे दोनों हाथों से बाबा का दामन ज़ोर से पकड़े रहना चाहिए, जिससे मेरा मानसिक संतुलन बना रहे। मैंने मन में कहा, मैं अपना समय व्यर्थ गँवा रहा था। स्पष्ट रूप से, मैं इसके अलावा और कुछ नहीं कर रहा था, लेकिन उस समय, इस विचार से, मुझे किसी भी तरह से शान्ति नहीं मिलती थी।

• • •

fojk/kh vkKk;!

प्रायः मैं सोचता था कि मंडली के लिए यह आसान बात थी कि उन्हें केवल एक गुरु–मेहेरबाबा–के ही आदेशों का पालन करना था। जबकि अपने काम में मुझे मंडली के प्रत्येक जन के आदेशों का, जो कभी कभी परस्पर विरोधी होते थे, पालन करना था और मेरे लिये परेशानी हो जाती थी कि मैं किसके आदेश का पालन करूँ। मेहेराज़ाद में रहते समय पागल बना देने वाली स्थितियों में से एक यह भी थी।

जब यह तय हो गया कि हम रासायनिक कारखाना को बंद कराने या स्थानान्तरित करने के लिए लड़ेंगे तो पर्यावरणीय संगठनों के अपने पर्यावरणविद् मित्रों को मैंने कारखाने की जगह देखने के लिए आमंत्रित किया। दो संगठन हमारी सहायता कर रहे थे। दोनों महाराष्ट्र में बड़े औद्योगिक संस्थानों के प्रदूषण फैलाने वाले कारखानों के विरुद्ध क़ानूनी लड़ाई लड़ने के लिए प्रसिद्ध थे। उनकी इतनी व्यस्तताऐं रहतीं थीं कि हमारे मामले के कारखाने की जगह देखने के लिए समय निकालना उनके लिए कठिन था। कई टेलीफ़ोन वार्ताओं के बाद उन्होंने देखने के लिए एक तारीख़ निश्चित की। लेकिन ऐन वक्त पर उन्हें कुछ ज़रूरी कारणों से अपना आना रद्द करना पड़ा।

यह घटना भी मेरे कार्य के निरालेपन से बिलकुल मेल खाती सी घटना थी। और तब इसे और निराला बनाने के लिए, वे मित्र कुछ ही दिन बाद, बिना किसी पूर्व सूचना के अचानक आ धमके। दुर्भाग्यवश, यह शुक्रवार का दिन था और उस दिन मेहेराज़ाद बन्द रहता है। मेहेराबाद के अन्तेवासियों को भी इस दिन मेहेराज़ाद जाने की अनुमति नहीं थी। इस दिन मेहेराज़ाद निवासी अपने निजी कामों में व्यस्त रहते थे।

पर्यावरणविद् मुझसे मेहेराबाद में मिले और मैं उन्हें कारखाने की जगह पर ले गया। चूँकि मेरी शिकायत मेहेराज़ाद निवासियों के स्वास्थ्य संकट से भी संबंधित थी, इसलिए वे वहाँ जाना चाहते थे। मुझे बताना पड़ा कि मेहेराज़ाद आज आगन्तुकों के लिए बन्द रहता है इसलिए वे लोग आसपास तो जाँच पड़ताल कर सकते हैं परन्तु मेहेराज़ाद देखने का अवसर शायद ही मिले।

जब हम रासायनिक कारखाने की जगह पर पहुँचे तो संयोग से शंकर मिल गया। शंकर ने बाबा के समय में मेहेराज़ाद में काम किया था और मंडली के एक सदस्य द्वारा १६६० के दशक में खींची गई वीडियो फ़िल्म में भी मंडली के साथ सतगोटी (seven tiles) खेलने के दृश्य में था। आसपास के गाँवों में बातचीत के द्वारा रासायनिक कारखाने के द्वारा फैलाये जा रहे प्रदूषण के विरुद्ध जनजागरण करके जनमत तैयार करने में भी शंकर सक्रिय था। इसलिए वह हमारी लड़ाई का महत्वपूर्ण अंग भी था। ऐसी हालत में, जब कारखाने का मालिक आसपास के गाँव वालों के विरोध को शान्त करने के लिये धमकियाँ अथवा नक़द घूस देने में लगा था, शंकर का महत्व दुगना हो जाता था।

मैंने शंकर से सम्पर्क करके उससे कहा कि वह पर्यावरणविदों के आने की सूचना फ़ालू को देकर उनसे पूछे कि क्या मैं उन्हें मेहेराज़ाद ले आऊँ ? और यदि मैं उन्हें मेहेराज़ाद ले आऊँ तो क्या यह ठीक रहेगा ? मैंने शंकर से यह भी कहा कि यदि उनको मेहेराज़ाद ले जाना ठीक न हो तो फ़ालू स्वयं आकर विशेषज्ञों से कारखाने की जगह पर आकर मिल लें।

शंकर चला गया और पर्यावरणविद् निरीक्षण करने कारखाने की ओर गये। आधे घंटे बाद वे वापस आ गये परन्तु शंकर अभी तक नहीं लौटा था। ठीक इसी समय एक पर्यावरणविद् को अचानक शौचालय जाने की हाजत महसूस हुई। इसका एकमात्र हल यही था कि हम मेहेराज़ाद के शौचालय का इस्तेमाल करें। परन्तु जैसे ही हम गेट पर पहुँचे, शंकर मिला और उसने संदेश दिया, ''फ़ालू कहते हैं कि यहाँ न आयें क्योंकि मनी अस्वस्थ हैं।''

सबने इस संदेश को सुना और फ़ौरन अपनी कारों में सवार होकर बहुत तेज गाड़ी चलाते हुए आनन–फानन में पास के होटल में पहुँचे। जब वे हल्के हो लिए तो हमने आगामी अदालती कार्यवाही की रणनीति पर सलाह मशविरा किया और फिर वे चले गये। मैं ट्रस्ट आफ़िस गया और जो कुछ हुआ था, क्रैग को बताया।

उस शाम फ़ालू ने यह बताने के लिए फ़ोन किया कि मैंने पर्यावरणविद् को मेहेराज़ाद में अन्दर न ले जाकर बड़ा अच्छा किया क्योंकि उस शाम

मनी बहुत थकी हुई थीं। इसी बीच क्रैग ने मेरी बताई बातें एरच को बता दीं। एरच ने क्रैग को ट्रस्ट से संबंधित हर छोटी–बड़ी बात बताते रहने के लिए वर्षों से सिखा रखा था। तब एरच ने मुझे बुलाया और डाँटने लगे।

''तुम उन्हें मेहेराज़ाद क्यों नहीं लाये ?'', उन्होंने पूछा।

मैने कहा, ''फ़ालू ने शंकर से कहलवाया था कि चूँकि मनी अस्वस्थ थीं इसलिए उन्हें मेहेराज़ाद न ले जाऊँ'', परन्तु एरच ने इसे अनसुना करते हुए कहा कि मुझे सभी को वहाँ ले जाना चाहिए था। ऐसी तो मेरी भी इच्छा थी इसलिए मुझे लगा कि मुझे व्यर्थ में डाँटा जा रहा था। इसलिए मैंने अपना बचाव करने की कोशिश की परन्तु एरच तो कुछ सुनने को तैयार न थे।

''रुस्तम'' उन्होंने सीधे सीधे कहा, ''यह तुम्हारी ग़लती है। तुमने निर्णय लेने में ग़लती की।'' मैं समझाता रहा कि मैंने स्वयं कोई निर्णय लिया ही नहीं, लेकिन एरच मुझे डाँटते ही रहे। जब मैंने बताया कि फ़ालू ने किसी को न लाने के लिए संदेश कहलवाया था तो एरच बोले, ''तो क्या हुआ ? तुमने अपनी सहज बुद्धि का प्रयोग क्यों नहीं किया ? तुम्हें उन सबको ले आना चाहिए था।''

अन्ततः मैंने अपनी रणनीति बदली और कहा, ''ठीक है, मैंने ग़लती की। लेकिन रासायनिक कारखाने की लड़ाई अभी शुरू ही हुई है और मैं जानना चाहता हूँ कि भविष्य में यदि शुक्रवार के दिन अधिकारी गण आना चाहें तो क्या आप उन्हें मेहेराज़ाद लाने की अनुमति देते हैं ? आपके विचार से क्या यह सही होगा?''

एरच अपने स्वभाव के अनुसार, इसका उत्तर टालते रहे। लेकिन मुझे गुस्सा आ गया था, इसलिए मैं पूछता ही रहा। तब उन्होंने कहा, ''मुझसे मत पूछो, मंडली के अन्य सदस्यों से पूछो।''

''लेकिन आप ही ने अभी कहा कि मैंने ग़लत किया'' मैने प्रतिवाद किया, ''तो आप ही बताइये कि भविष्य के लिए क्या सही होगा ?''

एरच सीधा जवाब नहीं दे रहे थे अतः मेरे दृष्टिकोण से वार्तालाप असंतुष्ट ढँग से समाप्त हो गया।

लेकिन मैं भी पीछा छोड़ने वाला नहीं था। जब मैं मेहेराज़ाद गया तो दूसरे मंडली जनों से पूछने लगा। व्यक्तिगत रूप से सभी यह मानते थे कि मैंने ग़लत किया, लेकिन जब मैंने पूछा, ''भविष्य में ऐसी स्थिति में संबंधित व्यक्तियों को शुक्रवार के दिन मेहेराज़ाद लाना उचित होगा ?'' तो प्रत्येक ने यह सवाल किसी दूसरे से पूछने की सलाह दी। फिर अन्त में मेहेराज़ाद में एक बैठक की गई। उसमें भेद खुला कि वस्तुतः फ़ालू ने पर्यावरणविदों को लाने के लिए मना नहीं किया था, उन्होंने शंकर से मुझे कहलवाया था, ''जहाँ तक सम्भव हो उन्हें यहाँ न लाओ क्योंकि मनी थकी हुई हैं।'' भविष्य में ऐसी स्थिति से बचने के लिए मैंने मंडली से जानना चाहा कि क्या मैं संबंधित व्यक्ति या व्यक्तियों को शुक्रवार को मेहेराज़ाद ला सकता था? कोई भी व्यक्ति इस पर हाँ या न नहीं कहना चाहता था क्योंकि मनी उस दिन बैठक में नहीं थीं। मनी इस लड़ाई के मामले से स्वयं को अलग रखना चाहती थीं क्योंकि उन पर पहले ही ट्रस्ट के अन्य कामों का बोझ था। मुझे कोई जवाब न मिला और एक बार फिर खिन्न होकर मैंने मामले को ज्यों का त्यों छोड़ दिया।

इसलिए, तब मुझे आश्चर्य हुआ जब कुछ दिनों बाद डा. गौहर मेरे पास आईं और बोली, ''यदि रासायनिक कारखाने का मामला हो तो तुम किसी भी व्यक्ति को, किसी भी दिन मेहेराज़ाद ला सकते हो। मैं तुम्हें अनुमति देती हूँ। यदि कोई पूछे तो बता देना कि मैंने अनुमति दी है।'' इतना स्पष्ट निर्देश पाकर मुझे बहुत सुकून मिला। मुझे पूरी आशा थी कि इस स्थिति का कोई भी हल नहीं होगा और भविष्य में कोई भी निर्णय मुझे ही लेना होगा और मैं जो भी निर्णय लूँगा, वह बाद में मंडली की नज़र में ग़लत ही होगा।

• • •

;g yMkbl egjckck dh g

केन्द्रीय सरकार ने रासायनिक कारखाने के क्रियाकलापों की जाँच की थी और अपनी रिपोर्ट में कारखाने को स्वास्थ्य के लिये संकट बताया

था। रिपोर्ट में राज्य सरकार को कार्यवाही करने का निर्देश भी था। बहरहाल, राज्य सरकार कारखाने के ग़ैरकानूनी निर्माण को नियमित करने में मालिक की सहायता कर रही थी। हालाँकि कारखाना निरीक्षक की, जो राज्य सरकार का ही अंग होता है, जाँच और निरीक्षण में कारखाना में सुरक्षा और स्वास्थ्य के मोर्चे पर साधनों में कमी पाई गई थी। कारखाना निरीक्षक कार्यालय ने कारखाने पर तेरह आपराधिक मामले दाखिल किये थे और उनका कहना था कि महाराष्ट्र के इतिहास में इतनी अधिक संख्या में आपराधिक मामले राज्य के किसी एक उद्योग पर अब तक नहीं लगे थे। इसके बावजूद कारखाने के मालिक और राजनीतिज्ञों की साँठ–गाँठ के बल पर उद्योग बंद न हो सका।

हमने कारखाने के खिलाफ़ पर्याप्त सबूत इकट्ठा कर लिए थे। वकीलों की सलाह मानकर, मंडली कोई दूसरा रास्ता न रहने से, हाईकोर्ट में जनहित याचिका दाखिल करने के लिए सहमत हो गई। वकीलों को विश्वास था कि राज्य सरकार कोई जवाबी दावा दाखिल नहीं करेगी क्योंकि इससे सरकार की ग़लतियाँ सामने आयेंगी और जनमानस में उसकी छवि मैली हो जायेगी। इसलिए जब अदालत में पहले ही दिन कारखाने के मालिक की तरफ से पाँच विभिन्न दलों के वकील खड़े हुए तो उनके आश्चर्य की सीमा न रही। इनमें से एक वकील उस बैंक की ओर से था जिसने कारखाने के लिए ऋण दिया था। हमारे वकीलों के लिए यह अप्रत्याशित था। एक ने कहा, "आखिर हम किसके खिलाफ लड़ने जा रहे हैं ?" मैंने धीरे से कहा, "मैंने उसके राजनीतिक संबंधों के बारे में पहले ही आपको चेतावनी दी थी। पूरी राज्य सरकार उसका बचाव कर रही है।"

बहस के दौरान न्यायाधीश ने बैंक के वकील सहित दो वकीलों को खारिज कर दिया क्योंकि यह प्रदूषण से संबंधित मामला था।

मैं जब मेहेराज़ाद लौटा तो अदालत में जो कुछ हुआ था, उसे जानने के लिए सभी मंडली जन एकत्रित हुए। मैंने बताया कि कारखाने के मालिक की ओर से बचाव पक्ष के पाँच वकीलों को देख हम दहल गये थे। इस पर एरच ने टिप्पणी की, "उसके बचाव में आये लोगों की संख्या से कुछ नहीं होगा। महाभारत के युद्ध में कौरवों की विशाल सेना पर एक अकेले भगवान कृष्ण भारी थे। कृष्ण पांडवों के पक्ष में थे और केवल

भगवान कृष्ण के परामर्श (पराक्रम नहीं, क्योंकि उन्होंने शस्त्र न उठाये की प्रतिज्ञा कर रखी थी) के कारण कौरवों की विशाल सेना पराजित हुई थी। यह मत भूलो कि यह तुम्हारी नहीं बल्कि भगवान की, हमारे भगवान मेहेरबाबा की लड़ाई है इसलिए वे हमें मार्ग दिखायेंगे। चिन्ता मत करो। अपनी ओर से भरसक प्रयत्न करो और परिणाम उन पर छोड़ दो।"

• • •

ge'kk mudh thr gkxh

न्यायाधीश ने हाईकोर्ट में हमारी याचिका तकनीकी कारणों से खारिज कर दी। इसलिए हमने भारत के सर्वोच्च न्यायालय में अपील की। हमारे वकील श्री एम.सी. मेहता थे जो पर्यावरण के प्रसिद्ध वकील थे।

जब हमारा मुकदमा सुनवाई के लिये न्यायाधीश के सामने आया तो उन्होंने याचिका और मालिक का जबाव दोनों पहले ही पढ़ रखा था। इसलिए हमारे वकील की संक्षिप्त बहस के बाद, मुख्य न्यायाधीश (दो न्यायाधीशों की पीठ थी) ने कारखाने के मालिक के वकील से पूछा, "बताइये, क्या आप मानते हैं कि कारखाने की शुरुआत ग़ैरकानूनी थी ?"

वकील ने यह बताने का प्रयास किया कि अब कारखाने का संचालन कानूनी रूप से नियमित करने के लिए क्या हो रहा है। परन्तु न्यायाधीश ने टोकते हुए कहा, "तो आप सहमत हैं कि कारखाने की शुरुआत ही जालसाज़ी पर है ?" वकील ने हामी भरी लेकिन टिप्पणी की कि राज्य सरकार और महाराष्ट्र प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड ने फैक्ट्री के प्रदूषण को गम्भीर नहीं बताया है। न्यायाधीश ने कहा, "वह तो इसलिए कि वे स्वयं ही भारी प्रदूषण फैलाने में लगे हैं।" फिर न्यायाधीश ने पूछा, "क्या क्षेत्र में क्लोरीन गैस का रिसाव कभी हुआ है?" फैक्ट्री मालिक के वकील ने स्वीकार किया कि तीन बार गैस–रिसाव की दुर्घटना हो चुकी है परन्तु उससे कोई प्रभावित नहीं हुआ।

न्यायाधीश ने टिप्पणी की, "सबूतों के अनुसार पाँच बार गैस–रिसाव की दुर्घटना हो चुकी हैं"। उन्होंने आगे प्रश्न किया, ''उससे कोई प्रभावित नहीं हुआ है, यह कहने से आपका क्या तात्पर्य है ? क्या आप कहना चाहते हैं कि कोई मृत्यु नहीं हुई ? तो फिर क्या हमें कार्यवाही करने के लिए कोई मौत होने की प्रतीक्षा करनी चाहिए ?"

अन्त में न्यायाधीश ने कहा, "यदि कारखाने का मालिक अपना भला चाहता है, तो यह अच्छा होगा कि वह कारखाने को किसी दूसरी जगह ले जाने का इंतज़ाम करे।"

कुछ ही सुनवाइयों के बाद आदेश पारित हो गया कि कारखाने को किसी दूसरी जगह ले जाया जाये और राज्य सरकार कारखाने के मालिक को कोई दूसरी जगह प्रदान करे। दिल्ली में स्थित उच्चतम न्यायालय की यात्रा से हर बार लौटने पर मैं मेहेराज़ाद जाता था जहाँ मंडली जन एकत्र होते थे और मैं उन्हें सारी वर्तमान स्थिति बताता था। केस की प्रगति से सब लोग प्रसन्न प्रतीत होते थे।

ऐसी ही एक दिल्ली यात्रा से लौटकर, जब मैं मेहेराज़ाद पहुँचा तो देखा कि फ़ालू बड़े क्षुब्ध हैं। वे मेरे पास आये और कई मंडली जनों के सामने (जिनमें एरच भी थे), सबको सुनाते हुए जोर से बोले, "रुस्तम, हाईकोर्ट में याचिका खारिज होने के बाद से ही तुम्हारे विरुद्ध हर तरह की बातें कही जा रही हैं। अपरोक्ष रूप से इसके लिए मुझे भी दोष दिया जा रहा है। शुरू में ही सब ने मिलकर यह फैसला किया था कि हम मुक़दमा अन्त तक लड़ेंगे और अगर हमारी हार होती है तो कोई किसी को दोष नहीं देगा। यह सामूहिक निर्णय था। लेकिन कोई न कोई मंडली से तुम्हारे बारे में लगातार शिकायत कर रहा है। बस, बहुत हुआ। अब मैं चाहता हूँ कि तुम मंडली के हर एक व्यक्ति से पूछो कि उसकी अब क्या राय है। यदि किसी को कोई आपत्ति है अथवा जो कुछ हो रहा है, उसके बारे में कोई भ्रम है, तो हम मुक़दमा वापस ले लेगें।" मैंने प्रतिवाद किया, "लेकिन फ़ालू, हम मुकदमा जीत रहे हैं और अब मुकदमा वापस लेना मूर्खता होगी। इसके अतिरिक्त, मुझे अपने ऊपर दोषारोपण की कोई फ़िक्र नहीं हैं। मैं यह सब बाबा के लिए कर रहा हूँ और वे सच्चाई जानते हैं।"

फ़ालू ने कहा, "मुझे परवाह है और इसलिए जैसा मैं कहता हूँ, वैसा करो। याद रखो यदि एक व्यक्ति को भी आपत्ति हुई तो हम मुकदमा वापस ले लेगें।"

अपने पूर्व परिचित निर्लिप्त भाव से (बैठे हुये) एरच यह सब सुन रहे थे। यह जानते हुए भी कि वही अकेले ऐसे व्यक्ति थे जो कभी नहीं चाहते थे कि मुकदमा लड़ा जाय और जब भी मौक़ा मिलता था, अपने विचार की याद दिलाते रहते थे, मैं सीधा उनके पास गया। उनके उत्तर से मैं डरा हुआ था, लेकिन प्रतिकूल से भी प्रतिकूल स्थिति के लिए, मन ही मन तैयार हो रहा था। मैंने एरच से पूछा, "फ़ालू ने जो कहा उसे आपने सुना। क्या आप लड़ाई ज़ारी रखना चाहते हैं या मुक़दमा वापस लेना चाहते हैं ?" एरच तटस्थ दिखे और कहा, "तुम मेरा उत्तर पहले ही जानते हो।" मेरे हृदय की धड़कन रुकती सी प्रतीत हुई और मैंने सावधानी से अगला प्रश्न किया, "एरच" मैंने कहा, "मुझे इतना ही पता है कि आप हमें लड़ाई शुरू नहीं करने देना चाहते थे। अब लड़ाई शुरू हुए लगभग तीन वर्ष बीत रहे है। अब मैं आपसे अपने प्रश्न का सीधा और स्पष्ट उत्तर चाहता हूँ। क्या आप चाहते हैं कि अब मुकदमा वापस ले लिया जाय। बस केवल 'हाँ' या 'न' कहिए।" एरच अपनी आराम कुर्सी से उठकर खड़े हो गये और मेरे निकट आकर मेरे कंधों पर हाथ रखकर मुझे हिलाया, "रुस्तम, मेरे प्यारे रुस्तम", और तब मुझे अपनी बाँहों में माता की तरह समेटते हुए, मेरे कानों के समीप बड़े स्नेह से बोले, "बेशक़, हम अन्त तक लड़ेगें। पीछे हटने का अब प्रश्न ही नहीं रहा। नतीज़ा चाहे कुछ भी हो, याद रखो, जीत सदा उन्हीं (बाबा) की होगी।"

इतना सुनते ही मैं फूट–फूट कर रो पड़ा। तीन साल से खिंच रहे मुकदमे के तनाव की थकान मेरी आँखों से बहने लगी थी और मैंने अत्यंत शान्ति का अनुभव किया। जब मैं संयत हुआ तो एरच ने दोहराया, "नतीज़ा कुछ भी हो, जीत बाबा की होगी। जय मेहेर बाबा।" इसके बाद एरच ने मुझे विदा किया। मंडली के बाकी सदस्यों ने भी लड़ाई ज़ारी रखने की अपनी सहमति दी।

एरच के शब्दों ने मुझे एक उक्ति की याद दिला दी, "ईश्वर जिसका मार्गदर्शक हो, उसकी असफलता, असफलता नहीं कहलाती।"

हमने बाबा के जीवन में ही देखा है कि कितनी बार वे अपमानित हुये और प्रत्यक्षतः हारे, लेकिन इसके बावजूद उन्हें प्रेम करने वालों की संख्या बढ़ती ही गई। बाबा की सतारा वाली दुर्घटना के बाद, अन्तरंग मंडली जन इस दुर्घटना का, बाबा–प्रेमियों पर होने वाले प्रभाव के बारे में चिन्तित थे। मंडली इस बारे में चिन्तित थी कि बाबा–प्रेमियों को आश्चर्य होगा कि भगवान दुर्घटनाग्रस्त होकर कैसे अपाहिज हो गया। मंडली को आशा थी कि बाबा–प्रेमी उन्हें छोड़ देंगे लेकिन उनकी (प्रेमियों की) संख्या और बढ़ गई। यहाँ तक कि बाबा ने तिथि विशेष पर अपना मौन खोलने के बारे में परिपत्र भेजे और फिर उसे टालते रहे, तो आशा थी कि काफ़ी लोग उनको मानना छोड़ देगें। फिर सबको आश्चर्यचकित करते हुए उनके प्रेमियों की संख्या बढ़ती ही गई। एरच ने एकदम सही कहा था, "चाहे जो भी हो जाये, हमेशा उन्हीं की जीत होगी।"

• • •

thr vFkok gkj dk lgh Lo:i

रासायनिक कारखाने को तुरंत बंद कर देने का, उच्चतम न्यायालय का फैसला जब आया तो सभी गाँव वालों और अहमदनगर के बाबा समुदाय में बड़ा हर्षोल्लास छा गया। खुशी में कुछ बाबा–प्रेमियों ने सबको मिठाइयाँ बाँटी। जब एक व्यक्ति एरच के पास मिठाई लेकर पहुँचा तो उन्होंने उस व्यक्ति की ओर ऐसे देखा जैसे पहचानते न हों और पूछा, "यह किसलिए ?"

बाबा–प्रेमी ने कहा, "आपको मालूम नहीं ? रासायनिक कारखाना बंद हो गया।" एरच ने कहा, ''मुझे मालूम है लेकिन मिठाइयाँ किसलिए ?" एरच के प्रश्न से बाबा–प्रेमी हक्का बक्का रह गया और कहा, "हम जीत की खुशी मना रहे है।" एरच ने उससे पूछा, "जब तुम या तुम्हारे परिवार में कोई हारेगा तो क्या तुम तब भी खुशी मना सकोगे ?" अब तक वह व्यक्ति (बाबा–प्रेमी) भ्रमित हो गया था और उसे पसीना छूट गया। उसने कहा, "नहीं"।

"कितनी विचित्र बात है कि हम अपनी हार का जश्न नहीं मनाते, केवल जीत का मनाते है।" एरच ने कहा, "इसे इस तरह देखो कि जब हम जीतते हैं तो कोई हारता भी है। एक प्रकार से हम किसी दूसरे की हार की खुशी मना रहे हैं। ऐसा क्यों है ? ऐसा इसलिए है कि वह (हारा हुआ) व्यक्ति हममें से एक नहीं है, वह विरोधी है। लेकिन यह सब भ्रम है। बाबा के दृष्टिकोण से कोई 'दूसरा' है ही नहीं, केवल वही (बाबा) हैं। केवल उनका ही अस्तित्व है। इसलिए सांसारिक हार–जीत से प्रभावित मत होओ। इसके बजाय उन्हें (बाबा को) जीतने में अपना ध्यान केन्द्रित करो; तब तुम्हारे ऊपर किसी भी स्थिति का प्रभाव न होगा। न तो हार तुम्हें निराश करेगी और न ही जीत तुम्हें उत्साहित करेगी।"

• • •

egjckck d: :i dk egRo

मेरे निरन्तर हताश रहने का एक कारण यह भी था कि मंडली के लिये मेरे हृदय में बहुत आदर था। इसलिए जब कभी मेरी आशा के अनुसार उनका व्यवहार नहीं होता तो मुझे दोहरा दुख होता–एक तो यह कि वे (मंडली जन) मेरी उच्च अपेक्षाओं पर खरे न उतरते और दूसरी स्थिति में मुझे लगता जैसे मैं स्वयं उनकी नज़रों से गिर गया हूँ। दोनों में से कोई भी स्थिति असहनीय थी लेकिन दोनों को एक साथ अनुभव करना एक पीड़ादायक यंत्रणा थी।

इसी यंत्रणा से मेरा मन भ्रमित रहा करता था। यहाँ ऐसे लोग थे जो दैनिक जीवनचर्या में अति बुद्धिमान और प्रेम करने वाले होते थे और वे ही लोग सीधा और साधारण कार्य करने में मेरी अयोग्यता का कारण बनते थे। और अपनी समझ के अनुसार कार्य को अति तर्कसंगत, सरल और प्रभावशाली ढँग से करने के बाद भी मुझे यह जताते रहते थे कि मैं ग़लत काम कर रहा था।

भला जिन लोगों का मैं इतना आदर और सम्मान करता था वे ही मेरी क्षमता को परखने में इतने कठोर और ग़लत कैसे हो सकते थे ? यदि

उनका निर्णय सही था तो फिर मैं बहुत दुष्ट था और मैं वहाँ कैसे रह सकता था, परन्तु यदि उनका निर्णय ग़लत था तो मेरे प्रति उनकी हेय दृष्टि और मेरे मन में उनके प्रति उच्च सम्मान, दोनों साथ–साथ कैसे रह सकते थे ? इस पर भी मैंने अपने मन को समझाया कि मेरी चेतना के अनजान गहरे स्तरों पर ऐसा कुछ अवश्य हो रहा था जिसे मेरी बुद्धि समझ नहीं पा रही थी।

इस पहेली का कम से कम उस समय मेरे पास कोई हल न था। इसलिए मैंने "अवकाश" लेना सीखा। इस अवकाश का तात्पर्य काम करना बंद करना नहीं था। इसका तात्पर्य था जैसा हो रहा था वैसा होने देना, विशेषकर उस समय, जब उन बातों से मेरा सीधा संबंध न हो, और इस तरह मुझे अच्छे लगने वाले, दूसरे अनुभवों का आनन्द उठाने का अवसर मिल जाया करता था।

इन अवकाश के क्षणों को एरच के नज़दीक रहकर बिताने में मुझे सान्त्वना सी मिलती थी। अपने अन्तेवासी जीवन का बड़ा भाग मैंने ट्रस्ट परिसर में रहते हुए बिताया था। इससे मुझे, एरच से, जब वे सप्ताह में तीन दिन ट्रस्ट कार्यालय आते थे, मिलने का अवसर मिल जाता था। सबेरे तो वे ट्रस्ट के कामों में व्यस्त होते थे; लेकिन शाम की चाय का समय उनके साथ व्यतीत करने का मैं हर सम्भव प्रयत्न करता था। जैसा कि मैंने पहले बताया था, शाम की चाय के समय ट्रस्ट के कर्मचारी और ट्रस्ट में काम से आये हुए मेहेराबाद के लोग, पिछले बरामदे में पड़ी मेज़ के चारों ओर जमा होकर एरच को घेर लेते थे। इस समय वातावरण बड़ा हल्का फुल्का, अनौपचारिक, तनावरहित और अंतरंग हुआ करता था। मेहेराबाद और मेहेराज़ाद के अन्तेवासी भी चाय के लिये रुकने की पूरी कोशिश करते थे।

लम्बी अवधि से अन्तेवासी के रूप में निवास कर रहे गैरी क्लाइनर प्रायः रोज़ आते थे। वह एरच से मज़ाकिया परन्तु उकसाने वाली बातें किया करते थे ताकि एरच से कुछ महत्वपूर्ण रोचक बातें सुनने को मिलें। वह एरच से तर्क वितर्क करने की पूरी कोशिश करते और उनको बुद्धि के अखाड़े में बहस में उलझा लेते। वह उन्हें बातों में घेरकर निरुत्तर करने की भरसक कोशिश करते, परन्तु एरच सदैव सफ़ाई से बच निकलते। जब शाम की चाय में गैरी होते तो वातावरण बड़ा जीवन्त रहता था। स्वभाव

से ही गैरी अत्यन्त मिलनसार, विनोदी और वाचाल थे और मेरी समझ में एरच के मनोरंजन के प्रयास में उनका यह स्वभाव और निखर जाता था।

एरच भी गैरी की शरारती और मज़ाकिया बातों का आनंद लेते प्रतीत होते थे और ऐसा ही दूसरे अन्तेवासियों के साथ था। गैरी का मानना था कि तीर्थयात्रियों के साथ एरच बाबा की अच्छी–२ बातें, जैसे उनके प्रेम, दया और मदद की कहानियाँ सुनाया करते थे और गैरी ने यह निश्चय किया कि इन कम सार्वजनिक सभाओं में वह एरच को बाबा के जलाली (गुस्सैल) स्वभाव के ''यथार्थ रहस्यों'' को उजागर करने के लिये विवश करेंगे। इसी को लक्ष्य करके गैरी प्रायः कुछ कहते या प्रश्न करते जिससे एरच बौखलाकर बाबा के यथार्थ स्वभाव के रहस्यों को खोलें। लेकिन इस प्रकार के वक्तव्यों और प्रश्नों को, गैरी का असली उद्देश्य भाँपकर, एरच हँसकर टाल देते थे। इस प्रकार की बातें अन्तेवासियों के जीवन का नियमित अंग बन गई थी। लेकिन मुझे एक अवसर की याद है जब एरच बड़ी गम्भीरता के साथ, और ज़ोर देकर बोले जैसे कि वह कोई बहुत गंभीर बात हमें स्पष्ट रूप से समझाना चाहते थे। यह एक ऐसा विषय था जिसे कभी हल्के ढँग से नहीं लिया जाना चाहिए। गैरी ने अपने चिरपरिचित अंदाज़ में कहना प्रारम्भ किया, "एरच, बाबा ने प्रायः कहा है कि उनका भौतिक रूप उनका असली रूप नहीं है। उन्होंने बार–बार कहा है कि वे अनंत चेतना हैं। इस पर भी मंडली बाबा के भौतिक रूप पर ही विश्वास करने और हमें उनके भौतिक शरीर के रूप की याद करने पर ज़ोर देती है। यदि मैं उनके अनंत चेतन स्वरूप पर ध्यान केन्द्रित करूँ तो क्या यह भौतिक रूप के ध्यान की अपेक्षा अधिक ठीक न होगा ? अगर मैं बाबा के अनंत चेतना के रूप का ध्यान करता हूँ तो क्या यह उनके भौतिक रूप का ध्यान करने की अपेक्षा, जिसे उन्होंने स्वयं अपना असली रूप नहीं कहा है, अधिक श्रेष्ठ मार्ग नहीं होगा?''

एरच ने कहा, "नहीं गैरी। मेहेरबाबा का मार्ग, अनंत ब्रह्म की उपासना के मार्ग से श्रेष्ठ है।"

अपने स्वभाव के अनुसार गैरी ने ज़िद की, "एरच ज़रा खुले दिमाग से विचार कीजिए। बाबा के साथ लम्बी अवधि तक रहने के कारण आपको

उनके भौतिक रूप से भावनात्मक लगाव हो गया है। यह लगाव आपकी राय तथा आपकी बात को पक्षपात पूर्ण बना रहा है।"

मेरे आश्चर्य की सीमा न रही जब उन्होंने अपने स्वभाव के विपरीत तेज, विरोध पूर्ण स्वर में कहा, "गैरी ! तुम्हें नहीं मालूम है कि तुम क्या कह रहे हो। मेहेरबाबा का मार्ग दूसरे मार्गों से अतिशय श्रेष्ठ है। अनंत–ब्रह्म की उपासना करते हुए, यदि तुम्हें कहीं उसकी अनंतता अथवा एकता का आभास मात्र हो जाये तो तुम औधे मुँह गिर पड़ोगे। उस अनुभव का मार्ग खतरों से भरा है। अगर तुम्हें अनन्तता अथवा एकता का अनुभव हो जाता है तो उसे सहन करना तुम्हारे लिये असंभव होगा। इससे तुम्हें बहुत अधिक कष्ट होगा। तुम उस मस्त की तरह बन जाओगे जो दिन भर सिर के बल खड़ा रहता था। क्या तुम उसकी कहानी जानते हो ? (मस्त ईश्वर के प्रेम में उन्मत्त आत्मायें होती हैं जिन्हें दुनियाँ का होश नहीं होता।)

"एक मस्त था जिसे ज़मीन पर हर जगह ईश्वर का चेहरा नज़र आता था। इसलिए वह ईश्वर के चेहरे पर पैर पड़ने के भय से ज़मीन पर पैर नहीं रखता था। उसे पागल समझा जाने लगा और पागलखाने में क़ैद कर लिया गया।

"एक बार एक बाबा–प्रेमी इस मस्त से मिला और उसे दूसरे लोगों की तरह, अपने पैरों पर सीधे खड़े होने के लिए समझाया। मस्त ने बात नहीं मानी और कहा, 'भला मैं भगवान के चेहरे पर पैर कैसे रखूँ। यह तो ईश्वर का घोर अपमान होगा। मेरे लिए तो सिर के बल खड़े होने के अतिरिक्त और कोई दूसरा रास्ता नहीं है।'''

एरच ने अपनी बात समाप्त करते हुए कहा, "सम्पूर्ण सृष्टि के साथ एकता का अनुभव कितना पीड़ादायी हो सकता है इसका तुम्हें कोई अन्दाज़ नहीं है। अपने भाग्य की सराहना करो कि मेहेरबाबा जैसा पथ प्रदर्शक तुम्हें उस मार्ग की सभी यातनाओं से बचाने के लिए हमारे बीच आया है। इसलिये उनके रूप पर, उनके ऊपर विश्वास करो और उन पर अपना ध्यान केन्द्रित करो।''

• • •

R;kx

जब मैं मेहेराज़ाद में रहता था डा. शेली किसी काम से बाहर गईं थीं। इसलिये कुछ समय के लिये डा. एन मोरेन भी वहीं रहने लगी थीं क्योंकि हम दोनों एरच के साथ सुबह घूमने जाते थे। एक दिन डा. एन को कुछ देर हो गई और एरच बेचैन होने लगे।

उन्होंने मुझसे एक आध बार पूछा, ''आज डा. एन को देर क्यों हो रही है ?'' यह एरच की आदत थी। हालांकि उनमें असाधारण धैर्य था और शायद ही कभी उन्होंने किसी को देर होने के लिए डाँटा हो लेकिन, यदि कोई व्यक्ति अप्रत्याशित रूप से देर से उपस्थित होता था तो वे अन्य सभी उपस्थित लोगों से बार–बार पूछते थे कि उस व्यक्ति के पहुँचने में देर क्यों हो रही है।

आखिर एन पहुंचीं और एरच ने मेरी ओर देखते हुए कहा, ''विच्चो आ गई।''

एन ने सुन लिया और 'विच्चो' का अर्थ पूछा तो मैंने उन्हें बताया कि गुजराती में 'बिच्छू' को 'विच्चो' कहते हैं।

एन ने पूछा, ''क्या मैं इतनी भयंकर हूँ?''

एरच ने उत्तर दिया, ''अरे यह तो तुम्हारी प्रशंसा है।''

''प्रशंसा कैसे ? बिच्छू तो खतरनाक जहरीला जीव है।''

''क्या तुम नहीं जानती कि मादा बिच्छू अपने बच्चों के लिए कितना महान त्याग करती है ?'' एरच ने पूछा। फिर वे बताने लगे, ''बच्चे पैदा करने के बाद, मादा बिच्छू बच्चों को अपना शरीर खा लेने देती है। बच्चे माँ का शरीर तब तक खाते रहते हैं जब तक वे स्वयं पुष्ट नहीं हो जाते। माँ अपने बच्चों के लिए प्राणों का त्याग कर देती है। बिच्छू कितना बड़ा त्याग करती है? ''

मुझे अब तक यह नहीं पता कि बिच्छू के बारे में उक्त बात सही है या नहीं, लेकिन एरच ने सच्चे त्याग का वर्णन इसी उदाहरण से किया।

किसी दूसरे दिन एरच ने त्याग के बारे में बहुत ही सूक्ष्म अंतर बताया। एक व्यक्ति ने बताया कि किसी विशेष व्यक्ति ने अपनी महिला मित्र (girl-friend) के लिये कितना अधिक त्याग किया था। इस पर एरच ने टिप्पणी की, ''त्याग हमेशा झूठे प्यार के लिये होता है। सच्चे प्रेम में केवल एकता होती है–सच्चे प्रेम में त्याग करने का कोई प्रश्न हीं नहीं उठता।''

• • •

nSoh izse

तीन बजे से थोड़ा पहले, अपरान्ह तक, बाहर से आये तीर्थयात्री मेहेराज़ाद से चले जाते थे। अलोबा घंटी बजाकर चाय तैयार होने की सूचना देते थे। फिर वहाँ काम कर रहे सभी अन्तेवासी चाय का कप लिए बरामदे में एरच को घेर कर बैठ जाते थे। इस दिन अचानक एरच ने पूछा, ''कोई जानता है कि शुद्ध शहद की जाँच कैसे की जाती है ?''

एरच के बार बार पूछने पर भी, किसी को अटकल लगाने की हिम्मत न हुई। हम सब एक दूसरे को देखते रहे कि शायद किसी को इसका उत्तर मालूम हो।

''ठीक है'' एरच ने किसी को जवाब देते न देखकर कहा, ''मैं बताता हूँ। अगर शहद शुद्ध है तो उस पर मक्खी बैठने पर, मक्खी का पैर शहद से नहीं चिपकेगा। मक्खी शुद्ध शहद को जी भरकर पीने के बाद, उड़ जायेगी। लेकिन अगर शहद अशुद्ध (मिलावटी) है तो मक्खी का पैर उसमें चिपक जायेगा।''

इसके बाद एरच ने कहा, ''शुद्ध प्रेम अथवा दैवी प्रेम, शुद्ध शहद की तरह होता है। तुम इसमें लिप्त हुये बिना, इसे जी भर कर पी सकते हो। लेकिन अगर तुम्हारा प्रेम अशुद्ध है (उसमें मिलावट है), अगर तुम्हारा प्रेम सांसारिक प्राणियों अथवा भौतिक चीज़ों के लिये है, अगर तुम्हारा प्रेम लालसा, इच्छा अथवा वासना का रूप ले लेता है तो अशुद्ध शहद की तरह, अगर तुम इसे पीने की कोशिश करते हो, तो तुम माया अथवा इस मायावी संसार के जाल में फंस जाओगे।''

मैं नहीं जानता कि शुद्ध शहद के बारे में यह बात सच है अथवा हमें सिर्फ़ समझाने के लिये एरच ऐसा कह रहे थे।

• • •

vf}rh; fer0;;h

बाबा को अवतार मान लेने के बाद, स्वाभाविक रूप से मैं लोगों को उनके बारे में बताने लगा। यह मेरा स्वभाव है कि जब मुझे किसी ऐसी बात का पता चलता है जो दूसरों के लिए भी सहायक और महत्वपूर्ण हो, तो मैं उसे अपने हर मित्र को बताता हूँ। मैं चाहता हूँ कि सबके साथ उस उपयोगी अनुभव को बाँटूँ। अतः मैंने मेहेरबाबा के बारे में भी अपने मित्रों को बताया था। उनमें से एक ने अधिक रुचि दिखाई और बाबा को मानने लगा। मेरे बताने मात्र से नहीं बल्कि उसे अपने व्यक्तिगत जीवन की एक समस्या का समाधान बाबा के द्वारा किये जाने का विश्वास था, इसलिए वह बाबा को मानने लगा था। इसके बाद से उसका जीवन ठीक चलने लगा था। कोई आश्चर्य की बात नहीं कि वह बाबा को पाकर बड़ा प्रसन्न था।

कुछ वर्षों बाद वही समस्या फिर उभरी और जल्दी ही जटिल समस्या बन गई। उसका विवाह टूट गया और उसके जीवन में दूसरी दुर्घटनायें भी हुईं। वह समझ नहीं पाया कि ऐसा क्यों हुआ और बाबा बार–बार पुकारने के बाद भी उसकी सहायता क्यों नहीं कर रहे थे।

मेरा मित्र मुझसे प्रायः मिलता था और मैं उसे अपनी समझ के अनुसार समझाता था कि व्यक्तिगत जीवन में संस्कारों और कर्मों को भोगना अनिवार्य है। मेरे समझाने का जब कुछ असर न दिखा तो मैंने उसे मेहेराबाद और मेहेराज़ाद आकर मंडली जनों से बात करने की सलाह दी। मुझे विश्वास था कि केवल मंडली जन ही उसे सान्त्वना दे सकते थे।

मेरा मित्र आया। उसने भाऊ जी और बाल नातू से बातचीत की लेकिन उन लोगों की बातों से उसे यह समझ में नहीं आया कि सब कुछ गड़बड़ क्यों हो रहा था। केवल कुछ दिन रुकने के बाद वह चला गया।

एक सप्ताह बाद उसने मुझे फ़ोन करके कहा, ''बाल नातू ने मंडली हाल में मुझे अनेक कहानियाँ बताईं थीं कि कैसे संकट की घड़ी में बाबा का नाम लेने, उन्हें पुकारने से तत्काल सहायता मिलती है और समाधान हो जाता है। इसलिए कृपा करके उनसे पूछो कि मेरे लगातार नाम–जप करने के बाद भी मेरी समस्यायें क्यों नहीं सुलझ रही हैं ?''

अपने मित्र की इच्छा के अनुसार, जब मैं अगली बार मेहेराज़ाद गया तो मैंने बाल से उसका प्रश्न पूछा।

बाल ने कहा, ''अपने मित्र को बता दो कि बाबा पूर्ण मितव्ययी हैं और वे केवल वही देते हैं जो आत्मा के विकास में आवश्यक हो। जिनके पुकारने पर तत्काल उत्तर मिला और सहायता प्राप्त हुई, वह अनुभव उनके लिए आवश्यक था। यदि बार–बार पुकारने पर भी उत्तर या सहायता नहीं मिल रही है तो इसका यह कारण है कि उस आत्मा को उत्तर या सहायता की आवश्यकता नहीं है। बाबा का उत्तर या सहायता प्रदान करना उस व्यक्ति की आध्यात्मिक उन्नति में सहायक नहीं होगा।

''अक्सर हम देखते हैं कि बाबा अपने नये प्रेमियों को प्रायः तत्काल उत्तर दे देते हैं जिससे उनका विश्वास दृढ़ हो सके। लेकिन एक बार विश्वास हो जाने और बाबा पर आस्था दृढ़ हो जाने के बाद, बाबा दुःख और पीड़ा देकर उसकी दृढ़ता की परीक्षा करते हैं। बाबा का कार्य लोगों को आध्यात्मिक प्रगति प्रदान करना है। वे केवल वही अनुभव देते हैं जो उनके इस कार्य के लिए अनिवार्य हो। इसलिए उन्हें अद्वितीय मितव्ययी (मास्टर इकोनामिस्ट) कहा जा सकता है।''

बाल के इस कथन से मुझे साई बाबा का, जो बाबा के समय में जीवित पाँच सद्गुरुओं में से एक थे, कथन याद आता है– ''जो तुम चाहते हो, वह मैं तुम्हें इसलिए देता हूँ ताकि तुम वही चाहना शुरू कर दो जो मैं तुम्हें देना चाहता हूँ।''

बाल ने ईसा के एक अनुयायी के बारे में लिखी गई पुस्तक का अंश, जो उन्हें याद था, सुनायाः–

''उपेक्षा अथवा पक्षपातपूर्ण ईश्वर के कारण कोई व्यक्ति कष्ट नहीं भोगता। व्यक्ति अपना शरीर अपने पिछले और वर्तमान विचारों और कर्मों

से स्वयं बनाता है। सृष्टि में दुर्घटना अथवा अन्याय नहीं है। जो कुछ शारीरिक दुर्भाग्य प्रतीत होता है वह ईश्वर का प्यार है जो व्यक्ति के लिए पीड़ा और कष्ट के माध्यम से अदृश्य रूप से कार्य करता है और उस प्रभावित व्यक्ति की ज़रूरत के अनुसार, उसे विशेष अनुभव प्रदान करता है। जब उस विशेष अनुभव को देने का उद्देश्य पूरा हो जायेगा, वह विपत्ति अपने आप समाप्त हो जायेगी।

• • •

^ldV* volj g

इन कहानियों ने मेरी बड़ी सहायता की है। केवल उस ''कष्ट'' के कारण नहीं जिसे मैं ट्रस्ट के लिये काम करते हुये अनुभव करता था बल्कि, इसलिये भी क्योंकि मेरा स्वास्थ्य अन्तेवासी के रूप में रहने आने के पूर्व ही समस्यापूर्ण रहा था और वहाँ रहते हुए भी ऐसी ही स्थिति रही। लेकिन एक दिन मनी से हुई बातचीत ने मुझे तत्काल जितनी राहत दी उतनी कभी नहीं मिली।

एक दिन मैं अपनी भावनाओं के आकाश में, उदासी के काले बादलों के, जिन्होंने मेरी मनःस्थिति को उदास बना रखा था, छँटने और प्रफुल्लता की चमक की प्रतीक्षा करते हुए, सुबह ट्रस्ट आफ़िस में मनी से टकरा गया। मैं नहीं जानता कि उन्होंने मेरे चेहरे को पढ़ लिया या अपनी अन्तर्दृष्टि से मेरी आन्तरिक दशा को भाँप लिया क्योंकि वे मेरे निकट आईं और पूछा, ''बेटा, सब कुछ ठीक तो है ?''

मैंने बे–मन से कहा, ''हाँ, हाँ मैं ठीक हूँ।''

मनी ने फिर पूछा, ''तुम्हारा स्वास्थ्य ठीक है ?''

''हाँ'' मैंने इस आशा से कहा कि वे चली जायें और मुझे अकेला छोड़ दें। मैंने पुनः कहा, ''मैं ठीक हूँ।''

''लोग तुम्हें सताते हैं, है न ?'' उन्होंने घोषणा की।

मैं कुछ न बोला लेकिन अवश्य ही उन्होंने मेरी समस्या ठीक भाँप ली थी क्योंकि वे कहती गईं, ''जानते हो चीनी एक ऐसी भाषा है जिसमें एक

ही शब्द का अर्थ 'संकट' और 'अवसर' दोनों हैं। इसलिए जब तुम संकट में हो तो यही समझो कि बाबा उस संकट से सीख प्राप्त करके, तुम्हें आध्यात्मिक विकास का अवसर प्रदान कर रहे हैं।

''और देखो बाबा कितने दयालु हैं ! यदि हम सीखने का एक अवसर गँवा देते हैं तो अपनी दयालुता से वे दूसरा अवसर प्रदान कर देते हैं। हमारे जीवन में दूसरी विपत्ति आयेगी– नया अवसर बनकर।''

जब तक उनकी बात समाप्त हो, मेरी आँखें भर आईं और मैं रो पड़ा। मनी मेरे और निकट आईं और ममता से गले से लगा लिया। आज भी जब कोई संकट की घड़ी आती है तो मुझे मनी और उनकी बातें याद आ जाती हैं।

• • •

fn0;rk e Mcuk

मेहेराज़ाद में तीर्थयात्रियों के आने पर एरच अपना अधिकांश समय मंडली हाल में बैठकर उन्हें बाबा के साथ अपने जीवन की कहानियाँ और वृतान्त सुनाने में और उनकी शंकाओं का समाधान करने में बिताते थे। दोपहर के भोजन के बाद, जब तीर्थयात्री जा चुके होते, तो वे अपने कमरे में जाकर पैन्ट उतार कर, नेकर और टी शर्ट पहनकर और कभी–कभी केवल नेकर पहनकर बाहर आ बैठते।

एक दिन मैं और क्रैग तीसरे पहर एरच के पास बैठे थे। क्रैग एक दीर्घकालीन अन्तेवासी थे और वे ट्रस्ट आफ़िस में कई सालों तक एरच के साथ काम करते रहे थे। इस समय क्रैग ने पूछा, ''एरच, तीर्थयात्रियों को तो आप ढेर सारी ऐसी कहानियाँ और वृतान्त बताते हैं जिनमें बाबा ने व्यक्ति को मुसीबतों के गहरे समुद्र में ढकेल दिया और जब पानी नाक तक पहुँचा और डूबने की नौबत आई, तो बचा लिया। बाबा प्रायः अपने प्रेमियों को शारीरिक और मानसिक कष्टों की सहनशीलता की अन्तिम सीमा तक ले जाते हैं, लेकिन कभी भी वह सीमा पार नहीं करते। आप हमेशा केवल अच्छी कहानियाँ ही बताते हैं जिससे हमें लगता है कि अन्त में सब कुछ ठीक हो जाता है।

परन्तु उन घटनाओं और वृतान्तों का क्या, जब प्रेमी सचमुच डूब गये? जब सुनता हूँ कि नोरीना और डंकिन के जीवन का अंत कैसे हुआ, तो दिल दहल जाता है। एरच, क्या आप हमें समझा सकते हैं कि ऐसा क्यों और कैसे हुआ ? ऐसी घटनायें बाबा के अति निकट रहने वाले व्यक्तियों के साथ तो नहीं घटनी चाहिए थीं।''

एरच ने एक लम्बी साँस भरी और कहा, ''तुम्हारा प्रश्न समझ में नहीं आया। तुम वास्तव में क्या जानना चाहते हो ?''

क्रैग ने कहा, ''एरच, अगर आपको यह विषय विवादास्पद लगता हो तो रहने दीजिए और मैं इसके बारे में बात नहीं करूँगा। मैं कुछ नहीं पूछूँगा।''

एरच जैसे रुष्ट हो गये क्योंकि उन्होंने अपनी बात दोहराई, '' तुम क्या जानना चाहते हो ?''

''बाबा ने नोरीना और डंकिन की ऐसी दुर्दशा क्यों होने दी ? उन दोनों को मानसिक विक्षिप्ता की स्थिति क्यों भोगनी पड़ी ? बाबा उन्हें इस कष्ट से बचा सकते थे।''

अब एरच सहज होकर बोले, ''तो उनके मानसिक रूप से विक्षिप्त होने से क्या लेना देना ? हम मानसिक कष्ट और मानसिक विक्षिप्तता को इतना महत्व क्यों देते हैं ? शारीरिक विकलांगता और कष्ट हमारे लिये इतने महत्त्वपूर्ण क्यों नहीं हैं ?

''कार दुर्घटना के बाद कष्ट से पेण्डू असहाय हो गये। उन्होंने क्या कम कष्ट भोगा ? इस पर भी लोग शारीरिक क्षति को इतना महत्त्व नहीं देते जितना मानसिक क्षति को। हम यह क्यों भूल जाते हैं कि सारे भौतिक और मानसिक कष्ट केवल स्वप्न मात्र हैं।

''सभी प्रकार के कष्टों का, चाहे वे शारीरिक हों या मानसिक—एक ही उद्देश्य है। वह व्यक्ति के, संस्कारों से मुक्त होने और ईश्वर प्राप्ति के उसके अन्तिम लक्ष्य के पथ पर आगे बढ़ने में सहायक होता है। सामान्यतः बाबा तुम्हारे संस्कार अथवा कष्ट को दूर नहीं करते वरन् इनका सामना करने में तुम्हारी सहायता करते हैं। संसार में कष्ट तुमको स्वप्न से जगाने के लिये लगाई गई पुकार की तरह है।''

चूँकि सरकारी अधिकारियों, कर्मचारियों से ट्रस्ट कार्यों हेतु उनकी अनुमति लेना और उनसे सम्पर्क करना मेरे कर्तव्यों में था, इसलिए मैं सीधे भाऊजी के निर्देशन में कार्य करता था क्योंकि वे ट्रस्ट के मुख्य कार्यकारी अधिकारी थे और बाद में इसके चेयरमैन हो गये।

एक दिन जब मैं आफ़िस में था तो वे अधिकांश बाबा प्रेमियों के लिए कठिन समय होने के प्रसंग पर बात कर रहे थे। उन्होंने कहा, ''बाबा अपने प्रेमियों की परीक्षा ले रहे हैं। वह सभी को सहनशीलता की चरम सीमा की ओर ढकेलते हैं। वह तुम्हें तब तक डुबोये रखेंगे जब तक पानी नाक के ऊपर न हो जाये, लेकिन वह तुम्हें कभी डूबने न देंगे।''

मैंने मौका देखकर, जो प्रश्न क्रैग ने एरच से किया था, वही प्रश्न भाऊजी से पूछा क्योंकि मुझे यह जानने की उत्सुकता थी कि उनका उत्तर क्या होगा। मैं उनके उत्तर की तुलना, एरच के उत्तर से करना चाहता था। मेरी प्रश्न में भी रुचि थी क्योंकि मैं अक्सर अनुभव करता था कि बाबा कभी–कभी मुझे सिर तक डुबो देते थे। मैंने कहा, ''भाऊजी हम दोनों जानते हैं कि नोरीना और डंकिन दोनों मानसिक विक्षिप्तता का शिकार उसी समय हो गये जब वे बाबा के साथ थे। उनके साथ तो 'नाक तक पानी आने तक' बचा लेने का कार्य बाबा ने नहीं किया, उन्हें डूब ही जाने दिया। ऐसा क्यों ?''

''नहीं, उनके साथ डूबने की घटना अलग तरह से घटी'' भाऊ जी ने उत्तर दिया, ''यह आनन्द के सागर में डूबना था। बाबा ने अपने ख़ास लोगों के संस्कार, उन्हें मर्मान्तक कष्ट देकर मिटाने का ज़िम्मा ले रखा था। जो कष्ट उन्होंने भोगे, वह बाबा की करुणा थी। उनका डूबना उनके (बाबा के) प्रेम के सागर में अन्तिम रूप से डूबना था।''

• • •

xfr&vojk/kd dFkk

एक कहानी, जिसने मेरी बड़ी सहायता की, मनी ने एक बार मंडली हाल में सुनाई थी। उन्होंने कहा था कि, ''बाबा के साथ हमारा जीवन

समय रहित था। ऐसा लगता था जैसे समय ठहर गया हो अथवा उसका अस्तित्व ही न हो। एक अनन्तता का भाव सदा बना रहता था; फिर भी आज की पीढ़ी के जीवन को देखकर दुख होता है कि किसी के पास किसी दूसरे के लिए समय नहीं है। वर्षों तक लोग अपने माता–पिता, परिवार या दोस्तों से नहीं मिल पाते हैं। कुछ वृत्तचित्रों में मैंने देखा है, लोग इतनी जल्दी में होते हैं कि चलते समय थोड़ा आगे झुक जाते हैं। लोग सीधे चलते हुए नहीं दिखते। कई तीर्थयात्रियों ने मुझसे कहा है कि वे अनुभव करते हैं कि उन्होंने अपने एक ही जीवन में दस जीवन के बराबर कष्ट झेले हैं।

''हमें उनके लिए दुख होता है। हर स्थिति इतनी गतिशील हो गई है कि लोगों की साँस फूल रही है। अब थोड़ा रुक कर विश्राम करने का समय है। हमें जीवन के मार्ग पर गति अवरोधक चाहिए। ये गति अवरोधक क्या हैं ? इसे मैं एक कहानी के द्वारा स्पष्ट करना चाहूँगी।

''किसी समय किसी जंगल के एक भाग पर एक डाकू का राज्य था। वह इतना क्रूर था कि किसी व्यक्ति की उस जंगल में घुसने की हिम्मत नहीं होती थी। उसका नाम अंगुलिमाल था, जिसका अर्थ है अंगुलियों की माला पहनने वाला। वह अपने शिकार की हत्या करके उसकी उंगलियाँ काट लेता था और उन्हें माला की तरह गूँथकर गले में डाल लेता था।

''लोगों के बहुत रोकने के बावजूद, गौतम बुद्ध ने उस जंगल से होकर जाने का निश्चय किया। डाकू पहले तो गौतम बुद्ध को देखकर आश्चर्य में पड़ गया कि कौन मूर्ख इधर से गुज़र कर अपना जीवन ख़तरे में डाल रहा है। जब उसने बुद्ध को संन्यासी के वेश में देखा तो सोचा कि संन्यासी को मारकर, उसकी उंगलियों की माला बनाना अच्छा रहेगा। अतः उसने बुद्ध का पीछा किया परन्तु उसे लगा कि उसके और बुद्ध के बीच की दूरी कम होने के बजाय बढ़ती जा रही है। तब डाकू ने अपनी गति तेज की, परन्तु उसे यह देखकर आश्चर्य हुआ कि उसके और संन्यासी के बीच की दूरी बढ़ती ही जा रही थी। जबकि बुद्ध अपनी सामान्य चाल से चल रहे थे।

''हताश होकर डाकू दौड़ने लगा लेकिन अभी भी संन्यासी और उसके बीच की दूरी बढ़ती गई हालांकि संन्यासी दौड़ नहीं रहा था। पीछा करते–करते, पूरी तरह थक कर डाकू ज़ोर से चिल्ला उठा, 'ऐ भिक्षु ठहर

जा, ठहर जा।' बुद्ध डाकू की ओर मुड़े और कहा, 'बेटा, मैं तो पहले से ही ठहरा हुआ हूँ परन्तु अब तुम्हारे ठहरने की बारी है।'

''ठहरने का अर्थ मस्तिष्क का ठहरना है। बाबा ने कहा है, 'क्रियाशील मस्तिष्क मनुष्य है, अति क्रियाशील मस्तिष्क विक्षिप्त अथवा पागल है, मन्द गति मस्तिष्क मस्त (ईश्वरोन्मत्त आत्मा) है और ठहरा हुआ मस्तिष्क साक्षात् ईश्वर है।' तो हम अपने मस्तिष्क को रोकने के लिए क्या करें ? सबसे पहले मस्तिष्क की चाल को धीमा करने के लिये रास्ते में गति अवरोधकों का निर्माण कीजिए ? और ये गति अवरोधक कैसे बनते हैं ? तुम्हारा मेहेराबाद आना एक तरीक़ा है, बाबा केन्द्रों पर जाना दूसरा तरीक़ा है। अगर यह भी न हो सके तो कुछ समान रुचि वालों के साथ बैठकर मेहेरबाबा की चर्चा करना भी एक उपाय है। उनके बारे में बात करना, उनकी या उनसे संबंधित पुस्तकें पढ़ना, उनसे संबंधित घटनाओं की कहानी कहना–सुनना, यह सब मस्तिष्क की चाल के गति अवरोधक हो सकते हैं। अगर यह सब भी न हो सके तो दिन में थोड़ा समय उनकी याद करने के लिये निकालिये ताकि आप बाबा को याद कर सकें, उनका नाम ले सकें, उनके बारे में कुछ देर सोच सकें। इन गति अवरोधकों की संख्या ज़्यादा, और ज़्यादा बढ़ाते जाइये और इससे आपके मस्तिष्क की क्रियाशीलता धीमी पड़ने लगेगी और अन्ततः ठहर जायेगी।''

इस शिक्षा ने मेरी बड़ी सहायता की। इसने मेरे जीवन को आसान ही नहीं बनाया बल्कि मुझे यह भी समझ में आ गया कि हालांकि ट्रस्ट में काम करते हुये, मैं बहुत अधिक निराशा और विरोध का अनुभव करता था, लेकिन मेरा कष्ट इन सबके प्रति मेरे मन की प्रतिक्रिया के कारण था। जितना अधिक मैं बाबा के बारे में सोचता था, उतना ही मैं मानसिक कष्ट से बच जाता था। हालांकि इसे कहना जितना आसान है, करना उतना ही कठिन है।

परन्तु जब–तब मंडली के किसी जन का कोई कथन या व्यवहार की याद करके और उनके माध्यम से बाबा के प्यार के प्रवाह को महसूस करके, क्षणिक रूप से ही सही, मुझे मेरे अन्तेवासी जीवन की छोटी–छोटी घटनाओं के बाहरी रूप के नीचे छुपे गहन सत्य का अहसास करने में मदद मिली।

• • •

thu dh yyd

मंडली जनों के सर्वोत्तम गुणों में से एक यह था कि उनकी उपस्थिति मात्र का प्रभाव हर किसी को सुख और प्रसन्नता देने वाला होता था। तीर्थयात्री फूल के पास मंडराती मधुमक्खियों की भाँति उनके इर्दगिर्द रहते थे। जब मंडली जन तीर्थयात्रियों का अभिनंदन करते अथवा उनकी कुशल–क्षेम, उनके परिवार के बारे में पूछते थे तो उनके चेहरे प्रसन्नता और खुशी से खिल जाते थे। यदि किसी तीर्थयात्री को कोई समस्या होती थी तो वह दिल खोलकर उस समस्या को बताता था जिसे मंडली पूरी तन्मयता के साथ सुनती थी। फिर बहुत प्रेम और अपनेपन के साथ उन्हें समझाती और मार्गदर्शन देती थी जिससे पीड़ित व्यक्ति को साहस और आशा मिलती थी।

चूँकि, मैं वहीं रहता था, इसलिए मंडली से मेरा संबंध थोड़ा अलग तरह का था, क्योंकि मैं जानता था कि मंडली का हर सदस्य स्वास्थ्य संबंधी किसी न किसी असाध्य रोग अथवा अनेक रोगों से पीड़ित था। उनमें से कुछ रोग तो अति जटिल थे, फिर भी तीर्थयात्री इस सच्चाई को कभी नहीं जान पाते थे। वे तो मंडली जनों के मुखों पर बाबा–प्रेम की चमक देखते थे जो पीड़ाहारी बाम की भाँति असरदार प्रतीत होता था।

मैंने पहले ही बताया है कि मुझे मेहेराबाद, मेहेराज़ाद और ट्रस्ट आफ़िस परिसर, तीनों स्थानों में रहने का अवसर मिला था और तीनों स्थानों के अपने अलग अलग आकर्षण हैं। ट्रस्ट आफ़िस परिसर में मेरे लिए सबसे आकर्षक प्रलोभन था खोर्शीद के निकट रहना, जिससे मुझे अपार लाभ हुआ। जब मैं वहाँ था तो मंडली जनों में से केवल खोर्शीद ही बचीं थीं जो बाबा के साथ उस समय से रहीं थीं जब वे बोलते थे। वह और मेहेरा, स्त्रियों की पहली टोली में थीं जिसे बाबा ने मेहेराबाद आकर, अपने साथ रहने की अनुमति दी थी।

ट्रस्ट परिसर में रहते हुए, उनके पास रोज़ जाकर, कुछ देर बैठने का अवसर पाकर, मैं अपने को सौभाग्यशाली मानता था। मैं उन्हें चुटकुले सुनाकर हँसाने की कोशिश करता और वे खूब हँसती थीं। फिर वे बाबा

के साथ बिताये दिनों की अपनी कहानियाँ सुनाती थीं। यदि मैं काम अधिक होने से उनके पास किसी दिन न पहुँच पाता, तो वे मेरे बारे में और मेरे स्वास्थ्य के बारे में लोगों से पूछती थीं। मेरे लिए वे मंडली जनों में महानतम व्यक्तियों में से एक थीं।

उनकी महानता का सम्भवतः एक कारण यह भी था कि उनकी ज़िन्दगी में परिस्थितियाँ कभी आसान न रहीं थीं। उनका स्वास्थ्य खराब था और उनका चलना फिरना अत्यन्त सीमित था। उनका जीवन लगभग बीस वर्षों से अपनी बैठने वाली कुर्सी तक सीमित था। प्रतिदिन वह एक वाकर के सहारे, धीरे–धीरे, बड़े कष्ट से, पिलग्रिम रिज़र्वेशन आफ़िस (तीर्थयात्री आरक्षण कार्यालय) के बाहर लगी मेहेरबाबा की रंगीन फ़ोटो तक प्रार्थना करने के लिए जातीं थीं–बस यही उनका रोज़ चलना फिरना था। जैसे जैसे समय बीतता गया यह यात्रा (जो मुश्किल से बीस फुट की दूरी थी) भी उनके लिए बहुत कष्टपूर्ण होती जा रही थी।

उनका गोद लिया हुआ पुत्र सुदाम और उसकी पत्नी आशा, जो अपने दो बच्चों के साथ परिसर के एक छोटे से कमरे में उनके साथ रहते थे, उनकी देखभाल करते थे। बाद में उन्हें एक कमरा और मिल गया तो पूरा परिवार दो कमरों में रहता था।

खोर्शीद प्रायः कमरे के दरवाज़े के पास कुर्सी पर बैठी हुई मिलतीं थीं और वह मुझे देखकर हमेशा बहुत खुश होतीं थी। मैं कहता हूँ, ''देखकर'', लेकिन खोर्शीद की आँखों की रोशनी, उनके शरीर की तरह इतनी कमज़ोर हो गई थी कि कुछ फुट की दूरी पर खड़ा व्यक्ति भी उन्हें एक साये से अधिक कुछ न दिखता था। इस सबके होते हुए भी वह प्रायः प्रसन्न दिखती थीं और उनके व्यक्तित्व से प्रेम और विचारशीलता झलकती रहती थी। अपने इतने खराब स्वास्थ्य के बावजूद, वह मेरे स्वास्थ्य और कुशलता के बारे में अवश्य पूछतीं थीं। वह मेरी समस्याओं को बड़े ध्यान से सुनती थीं और वह अपनी सलाह के कारण नहीं, बल्कि उनके पास होने पर मैं जिस प्रेम और आनन्द का अनुभव करता था, उसके कारण, मेरे निराशा के समय में, हमेशा मेरा निरंतर सहारा रहीं।

एक दिन, जब खोर्शीद सामान्य से अधिक बीमार थीं और इसलिए अधिक पीड़ा में थीं, मैंने उनसे कहा, ''खोर्शीद, आप पहले से ही विकलांग

हैं, इस पर भी बाबा आपको और कष्ट देते जा रहे हैं। वह आपके प्रति इतने उदासीन और कठोर क्यों हैं?''

खोर्शीद मुझे मीठी झिड़की देती हुई बोलीं, ''बाबा के लिए ऐसा मत बोलो। वह बहुत दयालु हैं। वह क्या करें? ये कष्ट तो हमारे संस्कारों के कारण हैं फिर उन्हें क्यों दोष दें? सच तो ये है कि वह हमें हमारे इन संस्कारों के कारण मिलने वाले कष्टों को सहने की हिम्मत और ताक़त देते हैं– इन्हें नष्ट करने में हमारी सहायता करते हैं। वह अपनी बाहों में उठाकर हमें इन कष्टों के पार ले जाते हैं और यही उनकी दया है।''

एक दूसरे अवसर पर मैंने उनसे पूछा था, ''क्या आप नहीं चाहतीं कि बाबा आपको इस शरीर से, जो पूरी तरह विकलांग है, शीघ्र छुटकारा दिला दें ?''

उनके उत्तर ने मुझे आश्चर्य चकित कर दिया, पर उससे उनकी महानता का अनुमान होता है। उन्होंने कहा, ''नहीं, नहीं। मैं और जीना चाहती हूँ। सच तो यह है कि रात में जब कभी मेरे सीने में दर्द होता है तो मैं बाबा से प्रार्थना करके कहती हूँ, 'बाबा, कृपया मुझे दिल के दौरे से बचाओ, मैं जीना चाहती हूँ और अपने पोते पोतियों का विवाह देखना चाहती हूँ।' बाबा का नाम जपते हुए मैं अपने सीने को मलती रहती हूँ। अभी मर जाना जल्दबाज़ी होगी।''

• • •

mUgsa iw.kZ leiZ.k djks

खोर्शीद की मृत्यु के बाद, मेरा स्वास्थ्य भी पूरी तरह ख़राब रहने लगा। कभी कभी तो मैं चल भी नहीं पाता था और मुझे अपने निजी कामों के लिये भी, जिनके लिए मुझे कभी किसी की सहायता की आवश्यकता नहीं पड़ी थी, दूसरे की सहायता लेनी पड़ जाती थी। इस स्थिति से मेरे मन पर अवसाद छाने लगा। ऐसे में एक दिन मुझे अचानक खोर्शीद की याद आ गई। मुझे याद आया कि शारीरिक रूप से मुझसे कहीं अधिक अक्षम होने के बाद भी, वह अन्त तक जीने की ललक और ज़िन्दगी से

भरपूर थीं। तब मुझे उनकी महानता का अहसास हुआ। मुझे प्रायः आश्चर्य होता था कि इतनी जीवन्त ऊर्जा खोर्शीद ने कहाँ से पाई।

एक वर्ष बीता, दूसरा वर्ष बीता परन्तु मेरे स्वास्थ्य की यही दशा रही और मैं प्रायः खोर्शीद के बारे में सोचता रहा। काश वह जीवित होतीं तो मुझे अधिक सहारा मिलता। हालाँकि मेरा कष्ट उनके कष्ट की तुलना में, जो उन्होंने कई वर्ष तक सहा, बहुत कम था, फिर भी अब यह मेरी सहनशीलता की सीमा पार करता लगता था।

तब मुझे खोर्शीद और रोडा के बीच हुई एक घटना अचानक स्पष्ट रूप से याद आई। जीवन के अंतिम दिनों में रोडा दुबाश की सुनने की शक्ति क्षीण हो गई थी और पहले से कमज़ोर नज़रें, और अधिक कमज़ोर हो गईं थीं। वह करीब करीब अन्धी और बहरी होती जा रहीं थीं। इससे उनका अवसाद ग्रस्त हो जाना स्वाभाविक था। वह प्रायः बाबा से शिकायत करतीं, "आप मुझे अपने पास क्यों नहीं बुला लेते ? मैं सुन नहीं सकती; देख नहीं सकती; तब भी आप मुझे अपने पास क्यों नहीं बुलाते?''

अपनी कम होती जा रही नज़र के बावजूद, रोडा अभी भी चलती फिरतीं थीं और बाबा की समाधि तक प्रतिदिन जाती थीं और कभी कभी मेहेराज़ाद का भी चक्कर लगा लेतीं थीं। मेहेराबाद से मेहेराज़ाद जाते समय, वह ट्रस्ट आफ़िस में खोर्शीद से अवश्य मिलतीं थीं।

एक दिन जब खोर्शीद ने उनसे उनका हालचाल पूछा तो अवसादग्रस्त रोडा ने कहा, "खोर्शीद मेरी नज़रें और कमज़ोर हो गईं हैं। मैं चीज़ों को साफ़ नहीं देख पाती हूँ। मेरी सुनने की शक्ति भी कम होती जा रही है। हियरिंग एड मशीन (कान में लगाने से सुनाई देने लगता है) लगाये बिना मैं कुछ सुन नहीं सकती हूँ। मैं कुछ नहीं कर सकती और अब बेकार हो चली हूँ। बाबा मुझे इस तरह क्यों रख रहे हैं ? वह मुझे अपने पास क्यों नहीं बुला लेते ?"

कैसा मज़ाक था ! रोडा अपना हाल खोर्शीद को बता रहीं थीं और उनसे शिकायत कर रहीं थीं जो स्वयं रोडा से भी अधिक बुरे हाल में थीं। वह तो मेहेराज़ाद या मेहेराबाद या बाबा की समाधि पर भी नहीं जा सकती थीं।

खोर्शीद ने गुस्से से कहा, "जब तुमने अपना सब कुछ उन्हें समर्पित किया है तो तुम्हारा शरीर भी उन्हीं का है। इसलिए इसे भी पूरी तरह से उन पर छोड़ दो। जब एक बार तुमने कोई वस्तु किसी को दे दी तो फिर उस पर तुम्हारा क्या अधिकार रहा ? अगर वह चाहें तो तुम्हारी आँखें, कान या हाथ पैर ले लें—उन्हें ले लेने दो। सब कुछ उन्हीं का तो है तो फिर प्रतिरोध या शिकायत क्यों ? जब तुम उन्हें समर्पण करती हो तो वह पूर्ण होना चाहिए, तुम बस इतना याद रखो कि सब कुछ उनका है, तुम्हारा कुछ भी नहीं है। देने का अर्थ है बिना शर्त के और पूर्ण रूप से देना।"

रोडा यह सुनकर इतनी खुश हो गईं कि बहुत दिनों तक खोर्शीद के साथ हुई अपनी इस बातचीत को दूसरों को सुनाती रही थीं।

• • •

viu d"Vk dh vi{kk vf/kd etcr cuuk

अपनी बीमारी के दौरान एक समय ऐसा आया जब मेरा स्वास्थ्य बहुत खराब हो गया। मेरा चलना फिरना केवल बैसाखियों के सहारे, अपने नित्यकर्म तक सीमित रह गया था। ऐसी स्थिति दो वर्ष तक रही और कष्ट झेलते झेलते मैं हिम्मत हारने लगा और मैं अक्सर बाबा से जीवन का अन्त करने की प्रार्थना करने लगा।

इसी अवधि में एक बार मेहेराज़ाद जाने पर मेहरु से मेरी भेंट हुई। उन्होंने मेरे स्वास्थ्य के बारे में पूछा और उत्तर में मैंने अपनी मनोदशा बता दी। उन्होंने कहा, "बाबा को तुम्हारे कष्ट के बारे में पता है। उन्होंने तुम्हें यह कष्ट किसी विशेष उद्देश्य से दिया है। कष्ट को अपना काम करने दो और तुम अपना काम करो। कष्ट की तीव्रता को अपने ऊपर इतना हावी मत होने दो कि जीवन में ठहराव आ जाये। अपने कष्टों से अधिक मज़बूत बनो। और ऐसा बनने के लिए जो कुछ कष्ट आने के पहले तक करते रहे थे, उसे करना ज़ारी रखो। अपने कष्टों पर आवश्यकता से अधिक ध्यान मत दो, उसकी उपेक्षा करते हुए बाबा का काम करते रहो।

"इससे कोई मतलब नहीं कि प्रतिदिन तुम कितना काम कर लेते हो। भले ही थोड़ा ही काम करो लेकिन जो कुछ करो, उन्हीं (बाबा) के लिए करो। यह भी याद रखो कि जहाँ तक बाबा का प्रश्न है सब कुछ अच्छा और उन्हीं की इच्छा के अनुसार हो रहा है। इसलिए बाबा के लिये प्रसन्न रहो—भले ही वे तुम्हें किसी भी हालत में रखें।"

इस कथन ने मुझ पर गहरा प्रभाव डाला। मेहरु की कही हुई इस बात को बीते एक वर्ष हो रहा है। अब भी मैं स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं से जूझ रहा हूँ, लेकिन मैं हमेशा यह याद रखने की कोशिश करता हूँ कि बाबा के दृष्टिकोण से सब कुछ ठीक है। इसलिये मैं बाबा के दृष्टिकोण से देखने की कोशिश करता हुआ प्रसन्न रहता हूँ।

• • •

vlyh [ktkuk

कुछ इसी तरह की कहानी बम्बई की, लम्बे समय से बाबा प्रेमी महिला, साइरस खम्बाटा भी बताती हैं।

हम सबके पास अपने अंदर ही अनन्त खज़ाना है परन्तु हम अपने आप को असुरक्षित महसूस करते हैं। क्यों ? क्योंकि हमें इस खज़ाने का ज्ञान नहीं है। यह इस तरह है। पिता ने अपने पुत्र के कोट की जेब में एक लाख रुपये रख दिये। पुत्र को इसका ज्ञान नहीं है और वह यात्रा पर चल पड़ा है।

पुत्र के पास कुछ रुपये हैं। उनसे उसे चिन्ता और असुरक्षा प्रतीत होती है क्योंकि वह नहीं जानता कि यह धनराशि उसकी यात्रा के लिये पूरी पड़ेगी या नहीं। फिर एक दिन पिता उसे फ़ोन करके हालचाल पूछते हैं। पुत्र अपने पिता को अपनी चिन्ता के बारे में बताता है और पिता उसे कोट में रखे एक लाख रुपये के बारे में बता देता है। जैसे ही पुत्र को इसका पता चलता है वैसे ही उसकी सारी चिन्ता दूर हो जाती है।

कुछ इसी तरह, बाबा हमें सचेत करने के लिये फ़ोन करते हैं। वह हमें हमारे अन्दर छिपे खज़ाने के प्रति सचेत करने की कोशिश करते हैं

और अक्सर उनका यह, हमें जगाने के लिये किया गया फ़ोन, कष्ट के रूप में आता है जो हमें अच्छा नहीं लगता।

• • •

lQn inZ ij dkyk /kCck

जब मेरी तबियत बहुत खराब रहने लगी, तो मैंने बाल नातू को लिखा, "मेरे साथ जो घटित हो रहा है, वह क्या है यह मैं जानता हूँ। मैं यह भी समझता हूँ कि यह सब क्यों घटित हो रहा है। यह पत्र मैं किसी प्रश्न का उत्तर खोजने के लिए नहीं लिख रहा हूँ क्योंकि मेरी समझ के अनुसार सभी प्रश्नों का उत्तर बाबा ने मुझे बीते हुये वर्षों में, समय समय पर विभिन्न माध्यमों द्वारा दे दिया है। क्या आप मुझे बाबा से प्राप्त आपके ज्ञान के खज़ाने की विशाल निधि के कुछ मोती से शब्द, मेरी सान्त्वना के लिए भेज सकेगें–बस इसीलिए यह पत्र लिख रहा हूँ।"

बाल ने मुझे निम्न उत्तर दिया, "एक अध्यापक ने अपने शिष्यों की परीक्षा लेनी चाही। उसने बड़ा सा सफ़ेद पर्दा फैलाया और उसके बीच में एक काला बिन्दु बना दिया। फिर उसने शिष्यों से एक एक करके खड़े होकर बताने को कहा कि वे क्या देखते हैं। शिष्य एक एक करके खड़े होकर बताने लगें– 'एक काला धब्बा है।'

"जब अन्तिम शिष्य ने भी वही उत्तर दिया तो अध्यापक बहुत निराश हुआ। उसने कहा, 'इतने दिन तुम सब लोग मेरे साथ रहे परन्तु तुममें से किसी ने भी कुछ नहीं सीखा। तुम सबने छोटे काले धब्बे पर तो ध्यान दिया लेकिन बड़े सफ़ेद पर्दे की ओर कोई भी ध्यान न दे सका।'"

बाल नातू ने फिर लिखा, "कष्ट हमारे जीवन के सफ़ेद पर्दे पर छोटा सा काला बिन्दु मात्र है। हमें इसकी ओर ध्यान नहीं देना चाहिये। हमारा पूरा ध्यान सफ़ेद बड़े पर्दे पर होना चाहिये जो हमारे जीवन में, प्रत्येक क्षण बाबा के प्रेम से भरी उनकी उपस्थिति के रूप में प्रकट होता है।''

• • •

HkkÅ th d: lkFk y|dk fNih

मंडली के साथ लम्बे समय तक काम करना थकाने वाला था। तनाव से मुक्ति पाने के लिए, मैं अक्सर कभी कभी काम के विषय में सोचने के बजाय, केवल मंडली के साथ रहने के सुख के बारे में सोचा करता था। इस तरह अपनी खोई हुई शक्ति को पुनः प्राप्त करने के लिये, मैंने कुछ और तरीक़े भी खोज लिये थे।

कभी कभी, किये जाने वाले काम के बीच, मैं अपने को नये और कुछ दूसरी तरह के कामों में व्यस्त करने की कोशिश करता था जिससे मेरा उत्साह और ऊर्जा पुनर्जीवित हो उठती थी। परन्तु सदैव ऐसा संभव न होता। कभी–कभी मुझे वास्तव में काम से नहीं बल्कि मंडली से दूर हटने की ज़रूरत होती थी।

इसी तरह के एक प्रयास में, भाऊ जी और मेरे बीच एक बार बड़ा रोचक और विनोद पूर्ण प्रसंग बन गया। सभी मंडली जनों में सबसे कठिन परिश्रमी भाऊ जी थे। हालाँकि वर्षों से उनका स्वास्थ्य ठीक नहीं था फिर भी उनके साथ काम करते हुए मज़बूत से मज़बूत अन्तेवासी पस्त हो जाता था। संयोग वश मुझे ट्रस्ट आफ़िस में भाऊ जी के साथ काफ़ी दिन काम करना पड़ा। मैं उन्हें रासायनिक कारखाने विवाद से संबंधित हर गतिविधि की सूचना देता था जिस पर वह आगे की कार्यवाही का निर्देश देते थे।

रासायनिक कारखाने के विवाद के बीच दो अन्य संकट आ गये थे। एक यह था कि मेहेराबाद के कर्मचारी किसी राजनीतिक दल के बहकावे में आकर किसी कर्मचारी संघ के साथ जुड़ गये थे और दूसरा एक किसान से भूमि संबंधी विवाद था। रासायनिक कारखाने के मामले में सरकारी अधिकारियों से मेलजोल और वकीलों से जान पहचान के मेरे पूर्व अनुभव को देखते हुए, भाऊ जी ने उक्त दोनों समस्याओं को हल करने के लिए मुझे चुना।

उस समय मैं ट्रस्ट परिसर में फ़ेरम वर्किंगबाक्सवाला (मंडली के सदस्यों में से एक) के पुराने कमरे में रहता था। सामान्यतः, भाऊ जी सुबह नाश्ते के बाद नौ बजे अपने कार्यालय में बैठ जाते थे। इसलिये एक दिन

सुबह साढ़े आठ बजे जब मेरे कमरे के दरवाज़े पर दस्तक हुई तो दरवाज़ा खोलने पर सामने भाऊ जी को खड़े देखकर मैं भौंचक्का हो गया। वे मुझसे कर्मचारियों और भूमि संबंधी मामले पर आवश्यक बात करना चाहते थे, इसलिये उन्होंने मुझसे कार्यालय में तुरंत आने के लिये कहा। सामान्यतः, मेरा यह समय अपने कमरे में नाश्ता करने का था, लेकिन भाऊ जी की बात की गंभीरता को देखते हुए, मैंने नाश्ता छोड़ दिया और उनके साथ चल दिया।

हम भाऊ जी के आफ़िस में बैठे। हमने दोनों मामलों पर विस्तार से चर्चा की और भाऊ जी ने बहुत से बिन्दु याद रखने के लिए, मुझे नोट कराये। अगले दिन फिर साढ़े आठ बजे दरवाज़ा खटखटाया गया और फिर भाऊ जी ने कहा, "रुस्तम मेरे आफ़िस में आ जाओ। तुमसे बहुत ज़रुरी बात करनी है।"

मैं फिर से बिना नाश्ता किये निकल पड़ा। उनके आफ़िस में फिर वही बात हुई और भाऊ जी ने ठीक वही–वही बिन्दु फिर से नोट कराये जो वह पिछले दिन नोट करा चुके थे।

अब तो यह हमारी नियमित दिनचर्या बन गई। तीन सप्ताह तक भाऊ जी से इस दिनचर्या के अनुसार, एक सी बातचीत और लगातार वही पुराने बिन्दुओं को नोट करने से, मैं मानसिक रूप से थक गया, इसलिए अगले दिन मैंने कहा, "भाऊ जी आप वही–वही बिन्दु मुझे रोज़–रोज़ नोट करवाते हैं।" भाऊ जी ने कहा, "नहीं, ये नये बिन्दु हैं।" तब मैं गया और पिछले दिनों के सारे नोट्स उनके सामने रख दिये और बिन्दुओं को एक–एक करके पढ़कर सुनाने लगा जो ठीक एक जैसे थे।

भाऊ जी ने कहा, "लेकिन अब मैं भिन्न मुद्दों पर नोट लिखाने जा रहा था कि तुमने मुझे टोक दिया।" तब भाऊ जी "नया" बिन्दु नोट करवाने लगते जो होते तो पुराने ही थे परन्तु शब्द अलग होते। इस तरह कार्यक्रम चलता रहा। बस थोड़ा परिवर्तन यह हुआ कि अब भाऊ जी पहले पिछले दिन के लिखाये नोट पढ़वा कर सुनते। फिर उन्हीं बिन्दुओं को अलग ढँग से नोट कराते।

अब मेरे लिए यह कसरत कष्टदायी हो गई और उन्हीं बिन्दुओं को बार बार दोहराकर लिखते लिखते मेरा मस्तिष्क मानो सुन्न पड़ने लगा।

इससे बचने का एक ही तरीक़ा था कि भाऊ जी से सुबह भेंट ही न हो। मेरे कमरे में आगे और पीछे दो दरवाज़े थे। भाऊ जी सदैव अगला दरवाज़ा खटखटाते थे। इसलिए अगली सुबह लगभग आठ बजकर बीस मिनट पर, मैं पिछले दरवाजे से बाहर निकल गया और शौचालय की ओर चला गया। आठ बजकर चालीस मिनट पर, जब मुझे पूरा विश्वास था कि भाऊ जी अपने आफ़िस में चले गये होंगें, मैं पिछले दरवाजे से ही अपने कमरे में वापस पहुँच गया।

मैं बिस्तर पर कुछ देर लेटा, शान्ति का आनंद उठाता रहा। नौ बजे जब दूसरे अन्तेवासी भी आफ़िस आ गये और भाऊ जी उनके साथ व्यस्त हो गये तो मैंने उनके कमरे में जाकर उनका अभिवादन किया और इससे पहले कि वह मुझसे प्वाइन्ट (बिन्दु) नोट करने को कहें, वहाँ से तुरंत चला आया।

दो दिन, मैं इसमें सफल रहा। तीसरे दिन भाऊ जी ने कहा, "रुस्तम, मैं तुम्हारे कमरे की ओर करीब साढ़े आठ बजे आता हूँ, दरवाज़ा खटखटाता हूँ लेकिन कोई उत्तर नहीं देता। तुम कहाँ थे ?"

मैंने कहा, "भाऊ जी, उस समय मैं शौचालय जाता हूँ।"

"लेकिन तुम्हारा कमरा तो अन्दर से बन्द रहता है", भाऊ जी ने तर्क किया।

"हाँ, अगला दरवाज़ा अन्दर से बन्द रहता है क्योंकि शौचालय जाने के लिए मैं पिछले दरवाज़े का प्रयोग करता हूँ" मैंने सफ़ाई दी।

भाऊ जी कुछ नहीं बोले और अगले दिन मैंने फिर वही किया। लेकिन आठ बजकर चालीस मिनट पर, जैसे ही मैं शौचालय से बाहर आया, मैंने भाऊ जी की आवाज़ सुनी, "रुस्तम, मेरे आफ़िस में आओ। मुझे तुमसे बहुत ज़रूरी बात करनी है।"

भाऊ जी के आफ़िस की ओर ही शौचालय है। और अगर उनके आफ़िस के बगल वाली खिड़की से झाँककर देखें तो शौचालय का दरवाज़ा साफ़ देखा जा सकता है। स्पष्ट था कि भाऊ जी मेरी ताक में उधर ही निगाह लगाये बैठे थे जिससे मुझे वह पकड़ सकें।

अब मैं क्या कर सकता था ? भाऊ जी के आफ़िस में जाकर फिर उन्हीं बिन्दुओं को नोट करने और उन्ही बातों पर बहस को फिर से सुनने

के अलावा, मैं और क्या कर सकता था। मैं एक सप्ताह तक यही करता रहा और फिर मैंने कुछ करने का निश्चय किया। मुझे लगता था कि इस तरह से मैं पागल हो जाऊँगा।

दूसरे दिन आठ बजकर बीस मिनट पर मैं कमरे के पिछले दरवाज़े से निकलने के बजाय, सामने के दरवाज़े से निकला और परिसर के हाते को पार करके उस कमरे में जा बैठा जहाँ हम लोग खाना खाते थे। और आठ बजकर चालीस मिनट तक वहीं बैठा रहा। फिर मैं निकला और परिसर को पार करता हुआ सामने वाले दरवाजे से अपने कमरे में पुनः घुस गया।

यह तरीक़ा दो दिन तो सफ़ल रहा। तीसरे दिन भाऊ जी से सामना हो गया और उन्होंने कहा, "रुस्तम अब तुम आठ चालीस पर शौचालय से बाहर निकलते नहीं दिखाई देते।" इसलिए मुझे बताना पड़ा कि उस समय मैं खाने के कमरे में बैठा नाश्ता कर रहा था। भाऊ जी ने तुरन्त टिप्पणी की, "तुम अपनी सबेरे की दिनचर्या बदलते रहते हो।"

मैंने उत्तर दिया, ''वास्तव में मेरी कोई निश्चित दिनचर्या नहीं है।''

दूसरे दिन जैसे ही मैं खाने के कमरे से निकल रहा था तो भाऊ जी की चिरपरिचित बुलावे की आवाज़ ने मुझे आश्चर्य में डाल दिया। वह कह रहे थे, "रुस्तम, मेरे आफ़िस में आओ।"

भाऊ जी तीर्थयात्री आरक्षण कार्यालय के पास खड़े थे और उन्हें वहाँ से मेरे कमरे का आगे, पीछे का दरवाज़ा, शौचालय और खाने का कमरा सब कुछ दिख रहा था। वहाँ से बचकर निकल पाना संभव नहीं था।

तब मैंने हार मान ली। उन्ही बिन्दुओं पर बहस और उन्हें नोट करने की अन्तहीन कसरत के सामने मैंने हथियार डाल दिये। मैं रोज़ सुबह साढे आठ बजे भाऊ जी के साथ उनके आफ़िस जाता और मेरी कठिन परीक्षा शुरू हो जाती। इस पूरे घटना क्रम में सबसे मज़ेदार बात तो यह थी कि जब मैंने लुका–छिपी के मामले में हार मान ली और इसे अपना भाग्य मानकर स्वीकार कर लिया तो एक या दो हफ़्ते बाद ही भाऊ जी ने मुझे बुलाना बन्द कर दिया।

एक दिन चाय पीते हुए मैंने एरच से यह सारा वृतान्त यह सोच कर बताया कि इससे उनका मनोरंजन होगा। सब कुछ सुन कर वह खूब हँसे और कहा, "कुछ इसी प्रकार का खेल बाबा भी हम लोगों के साथ खेलते थे। वह एक ही सवाल बार बार पूछते रहते थे। यहाँ तक कि लोग परेशान हो जाते थे।''

बाद में मुझे मालूम हुआ कि बाबा भाऊ जी से एक ही सवाल दो, तीन बार ही नहीं बल्कि तीस, चालीस बार पूछते थे और भाऊ जी को हर बार वही उत्तर दोहराना पड़ता था। और यह कई हफ़्तों तक चलता रहता था। सोचता हूँ मंडली किस तरह अपने को सामान्य रख पाती होगी! उनमें कितनी महान शक्ति थी।

• • •

ijh{kk e vuÙkh.k ¼Qy½ gkdj l'khyk u ckck dk ie iklr fd;k

इन बातों के बारे में सोचकर मैंने अनुभव किया कि बहुत से छोटे–छोटे तरीक़ों से मंडली मुझे उन अनुभवों का आभास कराने में सहायक हो रही थी जो उसे बाबा के साथ रहते हुए प्राप्त हुये थे। उस समय मैंनें इन अनुभवों का महत्व नहीं समझा था क्योंकि मेरा पूरा ध्यान अपने हाथ में लिये गये कार्यों पर ही केन्द्रित था।

अब सोचता हूँ तो कुछ–कुछ समझ में आ रहा है कि ''हाथ में लिए गये कार्य'' की परिभाषा मंडली की नज़रों में वह नहीं थी जो मेरी समझ से थी। यद्यपि मैं अच्छी तरह समझ गया था कि हम सबका अन्तिम लक्ष्य (कार्य) ईश्वर प्राप्ति और अहं का नाश है, परन्तु मेरी समझ के अनुसार इस अन्तिम लक्ष्य तक पहुँच पाने के लिए बहुत अधिक समय की ज़रूरत थी। अतः मेरे क्रियाकलाप छोटे–छोटे लक्ष्यों, जैसे रासायनिक कारखाने के विवाद में विजय प्राप्त करने तक ही केन्द्रित थे।

दूसरी ओर मंडली जन ट्रस्ट के कार्यों में व्यस्तता और सांसारिक गतिविधियों में भाग लेते हुए भी जीवन के अन्तिम लक्ष्य को दृष्टि से

ओझल नहीं होने देते थे और उनका हाथ में लिया गया कार्य था, बाबा को प्रसन्न करना। समय व्यतीत होते–होते मैं समझने लगा था कि उनका मेरे साथ व्यवहार भले ही भ्रमपूर्ण, निराशा पूर्ण और पागल बना देने वाला रहा हो, परन्तु वास्तव में वे मुझे इस बारे में जागरूक करने के प्रयास में थे कि बाबा की प्रसन्नता का हर क्षण ध्यान रखना मेरा प्रमुख कार्य है, न कि वे ''कार्य'', जिन्हें मैं प्रमुख कार्य समझता था।

सांसारिक कार्य और आन्तरिक जीवन में अन्तर समझने में एक दूसरी कहानी ने, जो सुशीला ने सुनाई थी, मेरी बड़ी सहायता की। सुशीला लम्बे समय से अन्तेवासी थीं और उन्हें बाबा के साथ थोड़े समय तक रहने का सौभाग्य भी प्राप्त हुआ था।

उन्होंने मुझे बताया, "मैं वैद्य बनने के लिए आयुर्वेद की पढ़ाई कर रही थी। मैंने आयुर्वेदिक कालेज में तीन वर्ष पूरे कर लिये थे और अन्तिम वर्ष में थी। मैं पढ़ने में तेज़ थी और अन्तिम वर्ष की परीक्षा उत्तीर्ण कर लेने का मुझे पूरा विश्वास था। परीक्षा की तिथियाँ नज़दीक आने लगीं थीं और मैं कठिन परिश्रम कर रही थी। बाबा मुझसे पढ़ाई के बारे में प्रायः पूछते रहते थे और मैं उन्हें बताती रहती थी। मैं बाबा से कहती थी, 'हाँ बाबा, और मैं पढ़ाई के साथ–साथ आपका नाम भी जपती रहती हूँ और मैं अवश्य पास हो जाऊँगी।'

"जिस दिन मेरी परीक्षा थी, उस दिन बाबा ने मुझे बुलाकर कहा, 'तुम परीक्षा में अनुत्तीर्ण हो जाओगी लेकिन चिन्ता मत करो। क्योंकि मेरा प्रेम तुम्हारे साथ रहेगा।' ऐसा ही हुआ। परीक्षा में प्रश्नों के उत्तर मैंने ठीक–ठीक दिये परन्तु मैं अनुत्तीर्ण हो गई।

''मैं अपनी शिक्षा पूरी करने के लिए दृढ़प्रतिज्ञ थी इसलिए मैंने दूसरी बार परीक्षा की तैयारी शुरू की। इस बार भी बाबा ने मेरी पढ़ाई और परीक्षा के बारे में पूछा और परीक्षा के दिन मुझे बुलाकर फिर कहा, 'तुम फिर से अनुत्तीर्ण (फ़ेल) हो जाओगी लेकिन चिन्ता मत करो क्योंकि मेरा प्रेम तुम्हारे साथ रहेगा जो अधिक महत्वपूर्ण है।' परीक्षा ठीक देने पर भी मैं फिर अनुत्तीर्ण हो गई।

"तीसरी बार मैंने और अधिक परिश्रम किया। फिर बाबा ने परीक्षा वाले दिन मुझसे कहा कि मैं अनुत्तीर्ण (फ़ेल) हो जाऊँगी परन्तु मैं चिन्ता

न करुँ क्योंकि उनका प्यार मेरे साथ रहेगा। जब तीसरी बार भी मैं अनुत्तीर्ण (फ़ेल) हो गई तो मुझे बड़ा दुख हुआ। मैं बाबा के पास गई और कहा, 'आप मुझे अनुत्तीर्ण (फ़ेल) क्यों करवा देते हैं बाबा ? मैं किसी भी परीक्षा में पहले कभी अनुत्तीर्ण (फ़ेल) नहीं हुई। यह अनुत्तीर्ण होना आपके कारण है।'

बाबा ने कहा, "अगर तुम उत्तीर्ण (पास) हो जातीं तो प्रसिद्ध वैद्य बनकर मुझसे दूर चली जातीं और मेरे प्रेम से भी वंचित हो जाती जो तुम्हारे लिए या किसी के लिए भी अत्यधिक महत्वपूर्ण चीज़ है। अब बोलो, तुम क्या चाहती हो ?"

मैंने बाबा से कहा, "बाबा, मैं आपका प्रेम चाहती हूँ।"

• • •

vgdkj dk uk'k

अन्तेवासी के रूप में रहते हुए "बाबा के लिए कार्य करने की'' कठिनाई यह है कि विकल्पों का चुनाव स्पष्ट रूप से करना कठिन होता है। फिर भी समय गुज़रने के साथ मुझे मंडली से कभी–कभी स्पष्ट संकेत मिलते थे कि वे क्या कर रहे थे और क्यों कर रहे थे। इससे मेरी मानसिक बेचैनी और कष्टपूर्ण तार्किक कसरत करके, थके मस्तिष्क को विश्राम मिलता था। उदाहरण के लिए भाऊ जी को काम के बोझ से लदे रहने पर भी क्रियाशील देखना बड़ा सुखद था। काम का अत्यधिक बोझ नहीं, बल्कि उनके काम निपटाने का ढँग आश्चर्यजनक था। एक के बाद एक लोग अपनी–अपनी समस्या लेकर उनके कार्यालय में आते थे। भाऊ जी किसी को डाँटते थे तो दूसरे ही क्षण तुरन्त दूसरे पर अपना प्यार बरसाते थे। उनके साथ काम करते हुए मुझे समझ में आने लगा कि उनका व्यवहार व्यक्ति की आध्यात्मिक आवश्यकता के अनुरूप होता था। अगर किसी अन्तेवासी का अहं उसकी अपनी सफलता पर बढ़ा हुआ होता तो उसके कार्य की आलोचना की जाती।

एरच सहित सभी मंडली जनों के कार्य की यही पद्धति थी। अन्तेवासी के कार्य के प्रति मंडली का व्यवहार कठोर और हतोत्साहित

करने वाला प्रतीत होता था, परन्तु आध्यात्मिक प्रशिक्षण का अर्थ ही है अहंकार का नाश। जब कोई अन्तेवासी शोक या अवसाद में होता तो मंडली उस पर, उसके व्यवहार को अनदेखा करके, भरपूर प्रेम की बरसात करती थी।

कभी–कभी मेहेराबाद में रहने वाले किसी अन्तेवासी का व्यक्तित्व इतना कठोर और स्वेच्छाचारी हो जाता कि दूसरे सभी अन्तेवासी उससे परेशान हो जाते और उसे हटाकर कहीं और नियुक्त करवाना या एकदम हटाना चाहते। हम लोग, जो भाऊ जी के साथ काम करते और उन्हें जानते थे, यह जानते थे कि भाऊ जी उसे हटाने का अनुरोध अस्वीकार कर देंगे।

एक समय एक अन्तेवासी सदैव परेशानी की परिस्थिति पैदा करता रहता था। उसकी बहुत सी शिकायतें आ रही थीं और शिकायतें इतनी बढ़ गईं कि मेहेराज़ाद मंडली तक पहुँचीं। जब मेहेराज़ाद मंडली ने भाऊ जी को टेलीफ़ोन करके स्थिति जाननी चाही तो भाऊ जी ने सब बताया, परन्तु जैसे ही यह सुझाव दिया गया कि उस अन्तेवासी को निकाल दिया जाय तो भाऊ जी ने शान्तिपूर्वक उत्तर दिया, "अन्तेवासी को हटाने से समस्या दूर नहीं होगी। समस्या की जड़ तभी दूर होगी जब अहंकार को निकाल दिया जाय।"

जब भाऊ जी फ़ोन पर बात कर चुके, तो वे हमारी ओर मुड़े और कहा, "जब तुम अहंकार को निकाल दोगे तभी उनकी (ईश्वर की) अभिव्यक्ति होगी और तुम असली संतुलन प्राप्त कर सकोगे। तब तुम्हें कोई भी परिस्थिति विचलित नहीं कर सकेगी। अभी लोग प्रशंसा अथवा निन्दा, दोषारोपण और दूसरों के व्यवहार से प्रभावित हो रहे हैं। क्यों? क्योंकि यह सब तुम्हारे अन्दर है। वासना, लालच, क्रोध, ईर्ष्या आदि अहं के कारण हैं जो तुम्हें एक दूसरे से अलग करता है और तुम्हारे अन्दर किसी को पसन्द या नापसन्द करने का भाव उत्पन्न करता है। यदि कोई तुम्हारे अहं को सन्तुष्ट करता है तो तुम उसे पसन्द करते हो लेकिन यदि वह तुम्हारे अहंकार पर चोट करता है तो तुम उसे नापसन्द करने लगते हो। तुम्हारी समस्या का स्रोत कहाँ हैं ? क्या यह तुम्हारे बाहर है ?

"एक आदमी कुछ करता है लेकिन तुम क्रोधित होकर क्यों प्रतिक्रिया करते हो ? इसलिए अपने अहं को दूर करने के लिए कठिन परिश्रम करो।

एक अन्तेवासी को हटाने भर से कोई फ़र्क नहीं पड़ेगा। बाबा तो ऐसे किसी आदमी को सदैव अपने आसपास रखते थे जो मंडली के लिए समस्यायें पैदा करता रहता था। और बाबा ऐसे व्यक्ति को मंडली के लिए और अधिक समस्यायें पैदा करने के लिए उत्साहित भी करते रहते थे। इस्माइल और ईसाक ऐसे ही लड़के थे। फिर कृष्णा जी और बहुत से ऐसे दूसरे लोग भी थे।

"बाबा ऐसा क्यों करते थे ? अहंकार को नष्ट करने के लिए। बाबा तो ऐसे उत्पाती लोगों को अच्छे भोजन और बेहतर सुविधायें देकर शाही ढ़ंग से रखते थे और मंडली को उनकी सेवा करनी पड़ती थी। और मंडली बिना किसी शिकायत के ऐसा ही करती थी। इसलिए तुम चाहे जो भी कर रहे हो या जिस किसी भी परिस्थिति में हो, सब कुछ पूरे दिल से उन्हीं (बाबा) के लिए करो। जब तुम इसे उनके लिये करते हो तो फिर शिकायत की कोई जगह नहीं रहेगी और अहंकार से छुटकारा पाने का एकमात्र यही रास्ता है।"

• • •

Øk/k dk fn[kkok

एक अन्य अवसर पर क्रैग, जो भाऊ जी के पास कार्य करते है, भाऊ जी से ट्रस्ट के कार्यों और समस्याओं के संबंध में बात करने के लिये आये। जब क्रैग समस्याओं का विवरण दे चुके तो भाऊ जी बड़े नाराज़ हो गये और क्रैग को डाँटने या यह कहें कि शब्दों के हथौड़े चलाने लगे। भाऊ जी ने क्रोधित होकर कहा, "तुम ट्रस्ट के लिए और मेरे लिए सदैव परेशानी खड़े करते हो। जो समस्यायें तुमने बताईं, उनसे मैं पहले ही निबट चुका हूँ और तुम फिर उन्हीं समस्याओं को लेकर आ गये। मैं खूब जानता हूँ कि पहले तो तुम स्वयं लोगों से बातचीत करके उन्हें भड़काते हो फिर उन्हें मेरे पास भेज देते हो। मैं जानता हूँ कि इस सबके पीछे तुम्हारी ही चाल है।"

क्रैग ने विनम्रता से प्रतिरोध किया, "भाऊ जी आप जानते हैं कि यह सच नहीं है। मैं तो बस आपका ध्यान इन समस्याओं की ओर आकर्षित करना चाह रहा था।"

भाऊ जी और अधिक नाराज़ हो गये और कहा, "मैं नहीं जानता क्या हो रहा है। मैं अपना काम ठीक से नहीं कर पा रहा हूँ इसलिए अब ट्रस्ट की समस्याओं पर ध्यान देने के लिए तुम्हारी सहायता की आवश्यकता पड़ रही हैं। अब तुम मुझे सिखाओ कि अपना काम मैं कैसे करुँ।"

क्रैग ने पुनः प्रतिवाद करना चाहा पर भाऊ जी ने उनकी एक न सुनी। अन्ततः क्रैग ने क्षमा माँगी और चले गये।

मैंने भाऊ जी को पहले भी क्रोधित होते देखा था और कई बार वे मुझे भी फटकार चुके थे परन्तु इस बार तो वे सचमुच बड़े क्रोध में दिखे थे। जैसे ही क्रैग गये तो भाऊ जी ने हँसना आरम्भ कर दिया और हँसते हुए ही मुझसे पूछा, "क्या मैं बहुत क्रोधित दिखा ?"

मुझे विश्वास न हो सका कि वे क्रोधित होने का दिखावा कर रहे थे। फिर भाऊ जी ने बताया, "क्रैग बहुत अच्छा कार्यकर्ता है, लेकिन उसे यह बात मत बताना। उसे शब्दों के हथौड़े मारना उसका आध्यात्मिक प्रशिक्षण (ट्रेनिंग) है और देखो वह अब भी अपना काम करता जा रहा है—भागा नहीं।"

अब मैंने भाऊ जी से सीधा सवाल किया, "सच—सच बताइये भाऊ जी, आपने पहले हमें कितनी बार दिखावटी क्रोध से 'शब्दों के हथौड़े मारे' हैं ?" भाऊ जी ने हँसकर कहा, "मंडली में क्रोध का नाटक करने में एरच १००% सफल व्यक्ति थे। वे कभी भी क्रोधित नहीं होते थे—किसी भी परिस्थिति में नहीं। वे केवल क्रोध का दिखावा करते थे।"

मैंने पूछा, "और आपके क्रोध के दिखावे की सफलता प्रतिशत के पैमाने पर कितनी है ?" भाऊ जी फिर हँसे और कहा, "मैं तो करीब ८०% क्रोध का दिखावा कर पाता हूँ, और २०% सचमुच क्रोधित हो जाता हूँ।''

• • •

Øk/k dk iHkko ân; ij er iMus nks

इसी प्रकार की घटना एक बार एरच के साथ हुई। तीर्थ यात्रियों से भरी बस मेहेराज़ाद से वापस लौट चुकी थी। सदा की भाँति एरच नेकर पहनकर बैठे थे। उन्होंने दवाना से पूछा कि क्या सबेरे बताया हुआ काम हो गया। दवाना वह काम भूल गई थी। एरच नाराज़ हो गये और उसे फटकारने लगे।

एरच को तो कोई नहीं बता सकता था कि वे कब असली क्रोध में है और कब नकली (बनावटी) क्रोध में। इसलिए मैं उनके पेट की माँसपेशियों को, जो नंगे बदन होने से साफ़ दिख रही थीं, ध्यान से देखने लगा। योग की कक्षाओं में मुझे बताया गया था कि क्रोधित होने पर पेट की माँसपेशियाँ तुरन्त कस जातीं हैं। चूँकि एरच के पेट की माँसपेशियाँ एकदम ढीली पड़ी थीं, इसलिए मैं समझ गया कि वे क्रोध का केवल दिखावा कर रहे थे।

जब दवाना चली गई तो मैंने एरच से कहा कि, ''मैं अपने गुस्से से परेशान हूँ। मेहेराबाद आकर रहने के बाद, यद्यपि अपने क्रोध पर काबू रखने के लिए मैं बड़ी कोशिश करता हूँ परन्तु फिर भी मैं बात—बात में क्रोध कर बैठता हूँ। क्या क्रोध को वश में रखने का कोई उपाय है ?''

"इसमें क्या है ?" एरच ने पूछा, "हम सभी क्रोधित होते हैं क्योंकि हम सब इन्सान हैं और हममें भावनायें हैं। बाबा अपने आसपास पत्थर दिल इन्सानों को नहीं चाहते थे। वह अपने आसपास उन लोगों को चाहते थे जो अपनी भावनाओं को व्यक्त कर सकें। जब तक तुम वास्तव में ईमानदारी से अपने क्रोध पर नियंत्रण रखने की कोशिश करते हो, बाबा तुम्हारी सहायता करेंगे। और अगर कभी क्रोध आ जाये तो परेशान होने या घबराने की बात नहीं है। उसी के बारे में हमेशा मत सोचो।

"हाँ एक बात है जो बाबा, जब हम एक—दूसरे पर क्रोधित हो जाते थे, तो, हमसे कराते थे। वे हमें झगड़ने से रोककर, आपस में गले मिलने और सब कुछ भूल जाने को कहते थे। हमें यही करना चाहिए। गले मिलो

और उस घटना को भूल जाओ। क्रोध की भावना को हृदय में न रखो क्योंकि यह क्रोध हृदय के कोमल भावों के लिए विष का काम करता है। लोग क्रोधित होने के बाद उसी बात को हृदय में कई दिनों तक ऐसा पाले रहते हैं कि उस व्यक्ति से फिर से सामना होने पर पुनः क्रोधित हो उठते हैं। यह अच्छा नहीं है। तुमने अभी देखा कि मैं दवाना के ऊपर क्रोधित हुआ। लेकिन अब क्या है ?''

अब मैंने कहा, "एरच, आप दवाना के ऊपर क्रोधित नहीं हुए, बस आपने क्रोध का दिखावा किया।"

एरच ने गंभीर होकर मेरी ओर देखा और पूछा, "तुम्हें कैसे पता ?"

मैंने क्रोध में पेट की माँसपेशियाँ कस जाने वाली बात बता दी और बताया कि मैंने ध्यान से देखा था कि उनकी माँसपेशियों में तनिक भी तनाव नहीं आया था।

एरच हँसे और कहा, "सच है, मैं क्रोधित नहीं हुआ था; लेकिन यह बात दवाना को मत बताना। हाँ, सब को ऐसा ही करना चाहिए। क्रोध मत करो लेकिन किसी काम को करवाने के लिये, गुस्से का इस्तेमाल करो।''

फिर एरच ने मुझे बताया कि कैसे बाबा ने एक बार डा. डंकिन को किसी के ऊपर बहुत क्रोधित होने का दिखावा करते हुए डाँटने का आदेश दिया था। डा. डंकिन ने ऐसा बढ़िया नाटक किया कि उन्हें सचमुच क्रोध आ गया और उन्होंने उस व्यक्ति को बहुत डाँटा। बाबा को यह पसन्द नहीं आया। बाबा ने डा. डंकिन को डाँटा और कहा, "क्रोध को अपने हृदय को न छूने दो।"

क्रोध को हृदय को न छूने देने की एरच की बात से मुझे एक कथा याद आ गई जिसमें एक सन्त अपने शिष्यों को बताता है कि शिव की तरह क्रोध के ज़हर को बस गले तक ही रहने देना चाहिए और हृदय तक नहीं पहुँचने देना चाहिए। "हृदय में सदा केवल भगवान 'राम' को रहने दो। तब 'विष' ज़हर केवल गले तक रहेगा और हृदय में 'राम' रहेंगे और तुम 'विष–राम (विश्राम)' का आनंद ले सकोगे।"

• • •

dloy ckck d: Åij fuHkj jgk

ट्रस्ट के लिये किये जाने वाले अधिकांश कार्यों को करने के लिए मुझे प्रायः ट्रस्ट आफ़िस में काम करना पड़ता था। मैं ट्रस्ट परिसर में काफ़ी समय रहता भी रहा। इन दोनों कारणों से क्रैग रफ़ से मेरी घनिष्ठता बढ़ गई। हम दोस्त बन गये और प्रायः ट्रस्ट संबंधी अपने–अपने कार्यों से संबंधित समस्याओं में एक दूसरे की सलाह लेते थे और एक दूसरे की सहायता करने की कोशिश करते थे।

जैसे–जैसे समय बीतता गया मुझे लगा कि भाऊ जी को हमारी मित्रता पसन्द नहीं थी। वह हमारी दोस्ती के बारे में ताने देते हुये मज़ाक करते थे। चूँकि अब तक वे मुझे कई बार, मेरे आध्यात्मिक प्रशिक्षण के अँग के रूप में डाँटते–डपटते रहते थे; इसलिए अब मैं उनके उन तानों को गंभीरता से न लेकर, हँसता था। लेकिन एक दिन मैंने सोचा कि क्यों न उनसे अपने और क्रैग के संबंधों के बारे में सीधी बात की जाये। इसलिए जब अगली बार उन्होंने मेरी और क्रैग की मित्रता पर टिप्पणी की, तो मैंने पूछा, "क्या हम दोनों की मित्रता और ट्रस्ट के कार्य में एक दूसरे की सहायता करने में कोई बुराई है ?"

भाऊ जी हँसकर बोले, "मैं तो मज़ाक कर रहा था।" मैंने ज़िद की और कहा, "लेकिन भाऊ जी, मैंने स्पष्ट रूप से अनुभव किया है कि आपको हमारी मित्रता पसन्द नहीं है।"

"ऐसी बात नहीं है", भाऊ जी ने उत्तर दिया, "मित्रों पर निर्भर होने के बजाय, अपना काम अकेले ही पूरा करने की कोशिश करो। दूसरों की सहायता लेने के बजाय, बाबा से सहायता की माँग करो। वे सहायता के लिये उपयुक्त व्यक्ति भेज देगें। किसी व्यक्ति से भावनात्मक लगाव न रखो।

"बाबा के समय भी ऐसा ही था। अगर मंडली के दो सदस्यों के बीच मित्रता हो जाती थी तो बाबा को पसन्द नहीं आता था। वह उन दोनों के बीच मतभेद पैदा कर देते थे और मित्रता टूट जाती थी। जब वह (बाबा)

हैं तो फिर तुम्हारा पूरा ध्यान उन्हीं की ओर केन्द्रित रहना चाहिए। अपनी समस्याओं के समाधान में दोस्तों से मदद माँगने के बजाय, उनसे मदद माँगो। अगर तुम ऐसा करते हो तो तुम्हारी बातों का ध्यान वह स्वयं रखेंगे। अपनी छोटी से छोटी ज़रूरत के लिए भी उन्हीं पर निर्भर रहना सीखो और उनके ऊपर अपनी निर्भरता को प्रतिदिन बढ़ने दो और फिर वह तुम्हारे सबसे अच्छे मित्र बन जायेगें।''

• • •

lLdkjk dk lryu

मैं भाऊ जी के साथ अकेला ट्रस्ट का कार्य कर रहा था, उसी समय उन्होंने काम रोककर, मुझसे पूछा, "जानते हो संस्कारों का संतुलन करने का क्या अर्थ है?''

यह प्रश्न अचानक पूछा गया था और, प्रश्न की आकस्मिकता ने मुझे चौंका दिया। केवल इसलिए नहीं कि हम लोग इस विषय पर कोई बात नहीं कर रहे थे, बल्कि इसलिये कि भाऊ जी काम करते समय कभी आध्यात्मिक विषयों पर बात नहीं करते थे। वह सदैव सामने के कार्य में ही एकाग्र रहते थे।

इस प्रश्न ने मुझे चौंका तो दिया फिर भी मैंने कुछ इस तरह उत्तर दिया, "जब अच्छे और बुरे दोनों प्रकार के संस्कार ठीक एक दूसरे के विपरीत और बराबर हो जाते हैं, तो संस्कारों का संतुलन हो जाता है और मुक्ति प्राप्त होती है।"

भाऊ जी इस उत्तर से संतुष्ट नहीं हुए, क्योंकि उन्होंने फिर पूछा, "लेकिन विपरीत होना और बराबर होना क्या है जिससे वे संतुलित हो जाते हैं ?"

मैं नहीं जानता था कि क्या कहूँ, इसलिए मैं चुप रहा।

भाऊ जी कहते गये, "यदि किसी व्यक्ति के अच्छे संस्कार अधिक हैं तो सद्‌गुरु अच्छे संस्कारों के संतुलन के लिए, उस व्यक्ति से बुरे कर्म करायेगा।

"बाबा ने अपने मंडली जनों के संस्कारों को संतुलित कर दिया है। बाबा के वादे के अनुसार, उनका दो या तीन जीवन कालों के अंदर ईश्वर–साक्षात्कार प्राप्त करना निश्चित है। चूँकि बाबा ने उनके संस्कारों का संतुलन कर दिया है इसलिए वे (मंडली जन) चाहे कुछ भी करें, उनके नये संस्कार नहीं बनेंगे। उनके क्रियाकलाप बाबा द्वारा संचालित हैं इसलिए उनके संस्कारों का अंतिम संतुलन निश्चित रूप से होगा।

"ऐसा देखने में आ सकता है कि कोई मंडली जन बुरा काम कर रहा प्रतीत हो अथवा नकारात्मक कार्य में संलग्न लग सकता है। लोग आश्चर्य में पड़ेंगे कि जो व्यक्ति बाबा के साथ पूरा जीवन बिता चुका है, वह ऐसा नकारात्मक कार्य क्यों कर रहा है। परन्तु ऐसा वह इसलिए कर रहा होता है क्योंकि उसके इस जन्म और पूर्व जन्मों के अच्छे और सकारात्मक संस्कार इतने अधिक हो गये हैं जिन्हें संतुलित करने के लिये बुरे और नकारात्मक कार्य करना आवश्यक हो गया। लेकिन ऐसा संतुलन कोई सद्‌गुरु ही करा सकता है और वह उसी व्यक्ति के नकारात्मक कार्यों को, उसके संस्कारों का संतुलन करने में इस्तेमाल करता है।''

भाऊ जी ने आगे कहा, "ईसा मसीह के जीवनकाल में जूडा के साथ ऐसा ही हुआ था। जूडा ईसा मसीह का अनुयायी और उनकी मंडली का सदस्य ही नहीं था बल्कि उनकी मंडली के आन्तरिक घेरे के बारह शिष्यों में से एक था। ईसा मसीह को उसके संस्कारों का संतुलन करना था इसलिए उन्होंने जूडा को धोखा देने की प्रेरणा दी। ईसा मसीह के अवतार कालिक कार्य हेतु, उनका शूली पर चढ़ना भी आवश्यक था। इस कार्य के लिए जूडा को निमित्त बनाया गया। ऐसी दैवी व्यवस्था थी। इसलिए बाबा के मंडली जनों के बाहरी क्रियाकलापों के आधार पर उनका मूल्यांकन कभी मत करना।"

इस प्रसंग से मुझे याद आता है कि किसी मंडली जन ने जूडा के बारे में बाबा का कथन मुझे सुनाया था, "मेरे बेचारे बच्चे ने कलंक का बोझ दो हजार वर्ष से लगातार ढोया है। वह मुझसे सबसे अधिक प्रेम करता था।"

• • •

thou d rhu idkj

मेहेराबाद में सैवेजेज (Savage's) रसोईघर के पीछे बने आध्यात्मिक प्रशिक्षण हाल के उद्घाटन के अवसर पर, भाऊ जी ने सभी अन्तेवासियों को संबोधित करते हुये कहा–

''एक आदर्श अथवा सामान्य जीवन की परिभाषा से, आध्यात्मिक जीवन एकदम अलग है। अगर आप किसी व्यक्ति को अच्छा काम करते हुए देखते हैं तो उसे आध्यात्मिक मान बैठते हैं। वास्तव में आध्यात्मिक गुरु तो प्रायः उलटा करते है। चेतना की विभिन्न ऊँची भूमिकाओं में स्थित 'मस्त' तो प्रायः गंदी जगहों पर निवास करते हुए दिखते हैं। इसलिए संसार में जो कुछ अच्छा दिखता है, यह आवश्यक नहीं कि वह आध्यात्मिक दृष्टि से भी हमेशा ठीक हो। और अक्सर एक आध्यात्मिक व्यक्ति के कार्य दुनियाँ की नज़रों में प्रायः क्रूर और अप्रासंगिक दिख सकते हैं।

"तीन तरह के लोग होते हैं जो जीवन के तीन प्रकारों का प्रतिनिधित्व करते हैं। आइये देखें कि ये तीनों प्रकार के लोग, एक ख़ास परिस्थिति में किस प्रकार की प्रतिक्रिया करते हैं।

१. **सामान्य प्रकार का व्यक्ति–** यदि आप ऐसे व्यक्ति पर दोषारोपण करें या उसे डाँटे–फटकारें तो वह तत्काल अपनी सफ़ाई देगा और अपनी ग़लती नहीं मानेगा। यह सामान्य जीवन जीने वाला, सामान्य व्यक्ति है।

२. **आदर्श व्यक्ति–** यदि आप ऐसे व्यक्ति को उसकी ग़लती के लिये डाँटें तो वह तुरन्त अपनी ग़लती मान लेगा, क्षमा माँगेगा और दोबारा ग़लती न करने की पूरी कोशिश करेगा। परन्तु यदि ऐसे आदमी को किसी ऐसी ग़लती के लिए दोष दिया जाये जो उसने नहीं की है तो वह अपनी सफ़ाई देगा और प्रतिक्रिया व्यक्त करेगा। अगर आप उस पर लगातार दोषारोपण करते रहेंगे तो चूँकि वह अहंकार से अभी मुक्त नहीं हुआ है, इसलिए वह क्रोधित भी होगा। यह व्यक्ति आदर्श जीवन बिताने वाला, आदर्श व्यक्ति है।

३. **आध्यात्मिक व्यक्ति–** यदि ऐसे व्यक्ति के ऊपर किसी ऐसे काम का दोषारोपण करें अथवा उसे डाँटें जो उसने किया ही नहीं है तब भी, अहंकार से मुक्त हो जाने के कारण, वह कोई प्रतिवाद नहीं करेगा, न ही कोई सफ़ाई देगा। वह क्षमा माँग कर, दोष स्वीकार कर लेगा। यदि ऐसे व्यक्ति का अपमान भी करो तो वह विचलित नहीं होगा क्योंकि उसका अहं नष्ट हो चुका है और उसे अपमान का कोई अनुभव ही नहीं होता है। ऐसा व्यक्ति आध्यात्मिक जीवन जी रहा है।''

• • •

mudk nkl cuu e viuh Lor=rk dk i;kx djk

एरच में एक ऐसा गुण था जो उन्हें बाक़ी सभी मंडली जनों से अलग करता था– चेहरे पर तनिक भी भाव परिवर्तन लाये बिना, वह तुम्हें कोई भी अविश्वसनीय बात इस तरह बता सकते थे कि तुम्हें उन पर विश्वास हो जाये। अपने इस गुण से यदि वह चाहते तो किसी को भी मूर्ख़ बना सकते थे। चाय के समय, जब सभी अन्तेवासी उनके पास इकट्ठा होते थे, वह अक्सर जानबूझ कर, अत्यन्त गंभीर मुखमुद्रा बनाकर सबको मूर्ख बनाते थे और हम सब बहुत हँसते थे। वह यह चाल हम सभी अन्तेवासियों के साथ करते थे। हालांकि हमने उन्हें इस मुद्रा से दूसरों को चक्कर में फँसाते देखा था फिर भी, जब वह हमारे साथ यह चाल चलते थे, हम उन पर विश्वास करते थे।

एक दिन उन्होंने क्रैग को अपना लक्ष्य बनाया। वह क्रैग को दस मिनट तक कुछ बताते रहे जिस पर क्रैग ने विश्वास कर लिया। एरच यह नाटक दस मिनट तक करते रहे। तब एरच हँस पड़े और क्रैग से कहा कि वह तो मज़ाक कर रहे थे। क्रैग भी हँसे लेकिन फिर पूछ लिया, "अच्छा एरच बताइये कि क्या आप कभी सच भी बोलते हैं ? आप झूठी बातें इतनी

गंभीरता से कर लेते हैं कि मुझे लगता है कि आप और बाबा के बीच यह खेल खूब चलता रहा होगा। बताइये, क्या बाबा कभी सच भी बोलते थे ?"

एरच कुछ ठहरे और फिर बड़ा गहरा उत्तर दिया। उन्होंने कहा, "अगर ईश्वर–प्राप्ति को ही एकमात्र सत्य माना जाय तो ब़ाकी सबकुछ झूठ ही झूठ है। यह सब भ्रम है। भ्रम के साम्राज्य में तुम जो भी कहते या करते हो, झूठ है। केवल उनका नाम जपना अथवा उनकी याद करना, एकमात्र यही सत्य है। हमसे बात करने के लिए बाबा को मिथ्या पन की भ्रमात्मक भाषा का ही प्रयोग करना पड़ता था। यदि वह परम सत्य की अपनी भाषा में बात करते, तो उसे समझ पाना हमारे लिए असंभव होता।

"हम जो भी करते हैं वह हमें मिथ्या भ्रम से बाँधता है। अच्छे कर्म और बुरे कर्म दोनों बंधनकारी हैं। उपासनी महाराज ने एक बार कहा था, 'यहाँ तक कि तुम्हारा साँस लेना भी ग़लत है।' मायावी जगत में यह इसी तरह होता है। केवल उस प्रयत्न को छोड़कर, जो हम पूर्ण रूप से उसके (ईश्वर के) हो जाने के लिए करते हैं, हमारा हर प्रयत्न बंधनकारी है।

"जब हम उन्हें (ईश्वर को) पूर्ण समर्पण कर देते हैं और शत प्रतिशत उनकी आज्ञा का पालन करते हैं, तब कर्म हमें नहीं बाँध सकते। सद्गुरु की आज्ञा पालन के लिये किये गये कार्य की ज़िम्मेदारी उसकी (सद्गुरु की) होती है। तब बंधनकारी संस्कारों का निर्माण नहीं होता है।

"हमने ऐसा ही किया" एरच ने अपनी बात ख़त्म करते हुए कहा, "हमने उनका दास बनने के लिये, अपनी स्वतंत्रता का प्रयोग किया। उनका दास बनकर, एक दिन तुम्हें सच्ची स्वतंत्रता का अनुभव प्राप्त होगा।''

• • •

vkx e dne j[kuk

एक बार ट्रस्ट आफ़िस में चाय पीते समय, एक तीर्थयात्री ने एरच से पूछा, "क्योंकि बाबा सब जगह हैं, इसलिए यहाँ मेहेराबाद में रहकर बाबा की सेवा करने तथा संसार में रहते हुए उनकी सेवा करने में, क्या कोई अन्तर है ?"

एरच ने उत्तर दिया, "दोनों में ज़मीन आसमान का अन्तर है।" तीर्थयात्री ने चकित होते हुए पूछा, "ऐसा क्यों है ? बाबा सब जगह हैं? हम उनकी सेवा हर जगह कर सकते हैं। मेहेराबाद में रहते हुए उनकी सेवा करने का विशेष मूल्य कैसे हो गया ?"

एरच थोड़ी देर ठहरे। मैंने देखा है कि अक्सर अपने उत्तर को अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए, वे कुछ ठहर कर बोलते थे–उत्तर के लिए शब्द ढूँढने के लिए नहीं।

उन्होंने तीर्थयात्री से पूछा, "कभी तुमने कैम्प फ़ायर देखा है ? वहाँ पर लोग रात में आग जलाते हैं और उसके चारों ओर इकट्ठा होते हैं। वे सब आग से थोड़ी दूरी पर बैठते अथवा खड़े होकर इसकी गर्मी को अनुभव करते हैं; गाने गाते हैं, खेलते हैं और मौज मस्ती में अच्छा समय बिताते हैं। क्या तुमने कभी इसमें भाग लिया है?'' तीर्थयात्री बोला, "हां" एरच ने आगे कहा, "अब बताओ यदि तुम कैम्प फ़ायर की आग के निकट जाओगे तो क्या होगा? एक ख़ास दूरी तक तुम आँच सह लोगे लेकिन उससे आगे जाने पर वही आँच सही नहीं जायेगी और भला तब क्या होगा जब तुम आग में क़दम रखने का निश्चय करते हो ? तुम्हें केवल कष्ट का अनुभव होगा। मेहेराबाद में रहकर कार्य करना ठीक ऐसा ही है जैसे तुमने आग में क़दम रख दिया हो।"

• • •

mudh Ñik dk vkef=r djk

अपने अन्तिम दिनों में एरच बहुत कमज़ोर हो गये थे। थोड़ी दूर चलने में भी उनको दृढ़ इच्छा शक्ति के द्वारा अत्यधिक कोशिश करनी पड़ती थी। लोगों का सहारा लेकर भी, बस कुछ ही दूर चलने के बाद, वह थककर चूर हो जाते थे और उन्हें आराम की ज़रूरत पड़ जाती थी। यह स्पष्ट था कि उन्हें बहुत अधिक दर्द हो रहा था, लेकिन यह कभी उनके चेहरे से नहीं झलका। कभी–कभार मैंने उन्हें बहुत धीरे–धीरे गुजराती में बड़बड़ाते सुना था, "बाबा, इस सबका अन्त कब होगा।"

एक बार, जब वह कमज़ोर और थके–थके लग रहे थे, तो एक अन्तेवासी ने मज़ाक करते हुये उनका हाल पूछा। एरच ने उत्तर दिया, "मैं कैसा दिखता हूँ ?" अन्तेवासी ने कहा, "मैं नहीं जानता इसीलिए तो आपसे पूछ रहा हूँ।'' एरच ने उत्तर दिया, "मैं बहुत अच्छा–सचमुच बहुत अच्छा महसूस कर रहा हूँ।"

"अगर आप सचमुच अच्छा महसूस कर रहे हैं", अन्तेवासी ने कहा, "तो आइये मेहेराज़ाद रोड पर थोड़ी दूर दौड़ लगायें।"

एरच हँसे और बोले, "मैं तो अच्छा महसूस कर रहा हूँ लेकिन मेरे शरीर को अच्छा नहीं लग रहा है।"

अन्तेवासी बोला, "तो जब आपका शरीर कष्ट में है तो आपको कैसे अच्छा लग रहा है ?"

"अपने आपको अपने शरीर से अलग पहचानना सीखो", एरच का सीधा उत्तर था, "तुम शरीर नहीं हो। तुम दैवी सत्य के साथ एकरूप हो। यदि इसे याद रखोगे तो कष्ट का अन्त हो जायेगा।"

तब दूसरे अन्तेवासी ने उनसे पूछा, "बाबा कहते हैं कि कष्ट के लिए ईश्वर को धन्यवाद देना चाहिए। क्या यातना के क्षणों में धन्यवाद की भावना बनाए रखना संभव है ?"

एरच का सहज उत्तर था, "उसकी कृपा से मैं ऐसा कर सकता हूँ।" अन्तेवासी ने कहा, "मैं आपकी या मंडली के किसी सदस्य की बात नहीं करता। क्या कोई दूसरा व्यक्ति ऐसा कर सकता है ?"

एरच ठहरे, जैसे प्रश्न पर विचार कर रहे हों और फिर बोले, ''यह कठिन है, लेकिन जैसा कि मैंने हमेशा कहा है, 'उनकी कृपा से कुछ भी सम्भव है।' इसलिए निरंतर याद से उनकी कृपा को आमंत्रित करो। आरम्भ में तुम्हें उनकी निरंतर याद करने की कोशिश करनी पड़ेगी, परन्तु धीरे धीरे ऐसा समय आयेगा जब सृष्टि की हर वस्तु और घटना तुम्हें उनकी याद दिलायेगी। केवल अच्छाइयाँ और सौन्दर्य ही नहीं, बल्कि भद्दी और बुरी वस्तुऐं भी तुम्हें उनकी याद दिलाती रहेंगी। तब तुम्हारे ऊपर उनकी कृपा का अवतरण होगा और सारी समस्या उनके हाथ में होगी।''

• • •

lR; dh dYiuk djk

मंडली हाल में एक बार एक महिला तीर्थयात्री अपने अनुभव सुना रही थी। उसने बताया कि उसे मेहेरबाबा की याद करना कितना अच्छा लगता था। उसने बताया कि वह अपनी आँखें बंद कर लेती थी और यह कल्पना करती कि वह अपना शरीर नहीं, बल्कि मेहेरबाबा का शरीर है। एरच ने इस पर टिप्पणी की कि, ''ऐसा करना बहुत अच्छा है। किसी भी तरह से याद करना अच्छा है। इसे करती रहिए।''

इस पर, एक अन्य तीर्थयात्री ने आपत्ति की और कहा, ''लेकिन एरच जी, क्या इस प्रकार अपने को मेहेरबाबा मानकर आत्म–प्रवंचना (अपने को धोखा देना) में फँसना नहीं है ?''

एरच ने कहा, ''नहीं ! वास्तविकता तो यह है कि अपने आपको अपना शरीर, जिसका नाम 'जैक' या 'जिल' है, मानना आत्म–प्रवंचना है। वास्तव में तुम ईश्वर हो। इसलिए सत्य की कल्पना करना अधिक अच्छा है। क्योंकि एक दिन इससे तुमको यह अनुभव करने में सहायता मिलेगी कि तुम सत्य, अर्थात् ईश्वर हो और जो तुम सत्य समझ रहे थे–यह शरीर और यह संसार वास्तव में तुम्हारी कल्पना मात्र है।'' फिर उन्होंने सावधान किया, ''यदि कोई मेहेरबाबा होने का दिखावा करता है और अपने अनुयायी बनाने की कोशिश करता है तो यह निःसंदेह अनुचित और हानिकारक है क्योंकि इस प्रकार उसे अपने अनुयायियों के संस्कारों का बोझ ढोना पड़ेगा।''

• • •

dlkb

मनसारी देसाई यह कहानी हमें प्रायः सुनाती थीं। एक बार बाबा बड़े अच्छे मनोभाव (मूड) में अपने प्रेमियों से बातचीत कर रहे थे। उन्होंने उन सबसे पूछा, ''मुझसे अधिक दयालु किसी और व्यक्ति को जानते हो? मैं सबसे अधिक दयालु हूँ।'' किसी ने उत्तर न दिया। जब बाबा ने इसी प्रश्न

को कई बार दोहराया, तो करॉंची से आया एक बाबा प्रेमी खड़ा हुआ और बाबा से कहा, ''मैं जानता हूँ कि आपसे भी अधिक दयालु कौन है।'' बाबा ने पूछा, ''सच ? वह कौन है?''

उस व्यक्ति ने उत्तर दिया, ''कसाई ! कसाई आपसे अधिक दयालु होता है। वह अपने हथियार से एक ही वार में काम तमाम करके मार डालता है जबकि बाबा आप, पहले तो उस व्यक्ति के बाल नोचते हैं, फिर खाल उतारते है, तब माँस काट काटकर निकालते हैं और फिर आप उसे धीरे धीरे मारते हैं। निश्चय ही कसाई आपसे अधिक दया दिखाता है बाबा।''

बाबा सिर्फ़ हँस कर रह गये।

• • •

ryokjckth esa n{k 0;fä

मेहेरबाबा के बारे में अनजान कुछ पाठकों को मेहेरबाबा की मंडली और अन्तेवासियों के बीच परस्पर संबंधों की घटनाओं का वर्णन करना पागलपन प्रतीत हो सकता है। फिर भी, मैं आशा करता हूँ कि क्रैग द्वारा बताई गई इस कहानी से उन्हें इस ''पागलपन'' की सार्थकता और प्रासंगिकता समझने में सहायता मिलेगी।

दूर गाँव में रहने वाले एक नौजवान जापानी लड़के को तलवारबाजी में निपुणता प्राप्त करने की धुन चढ़ गई। उसने एक तलवारबाजी में प्रसिद्ध गुरु का नाम सुन रखा था जो एक मठ में रहते थे और जो केवल बहुत हिम्मत वाले प्रशिक्षुओं (शिष्यों) को स्वीकार करते थे। यह मठ घने जंगल में, जहाँ का मार्ग बहुत कठिन था, स्थित था। अधिकाँश लोग वहाँ पहुँचने की कोशिश करते परन्तु रास्ते की कठिनाइयों और ख़तरों से हारकर आधे रास्ते से ही वापस लौट आते। जो वहाँ पहुँच भी जाते थे वे भी अपना प्रशिक्षण (ट्रेनिंग) बीच में ही छोड़कर चले आते थे क्योंकि उन्हें प्रशिक्षण के दौरान होने वाली कठिनाइयाँ असहनीय हो जातीं। यह नवजवान और लोगों से कुछ अलग था और उसने उसी मठ में, उसी गुरु से तलवारबाजी

सीखने का निश्चय कर लिया। उसने बड़ी–बड़ी मुसीबतें झेलकर जंगल से होकर तलवारबाजी की शिक्षा मठ का रास्ता तय कर लिया और वहाँ पहुँचा। जब वह गुरु से मिला तो पहली भेंट में ही वह भ्रम में पड़ गया। गुरु ने उसे तलवारबाजी की शिक्षा देना स्वीकार कर लिया लेकिन उन्होंने तुरन्त उस नवजवान को पूरे मठ में झाड़ू–पोंछा का काम बता दिया।

बेचारा नवयुवक कई महीनों तक पूरे मठ की सफ़ाई करने में दिन भर व्यस्त रहता फिर भी उसे आशा थी कि एक न एक दिन गुरु उसे तलवारबाजी सिखाना आरम्भ करेंगे। छः महीने बीत गये और हिम्मत करके नौजवान ने गुरु से पूछने का निश्चय किया कि वह उसे तलवार चलाना कब सिखायेंगे। गुरु ने लड़के को आते देखकर पूछा, ''लड़के तुम्हें क्या चाहिए ?'' लड़के ने कहा, ''गुरु जी, मैं यहाँ छः महीने से झाड़ू पोंछा कर रहा हूँ। इतना समय बीतने पर भी तलवारबाजी की कोई शिक्षा मुझे नहीं मिली।'' गुरु बिगड़ गये और लड़के को फटकारने लगे। वे चीखे, ''जब तुम झाड़ू पोंछा जैसा साधारण काम ठीक ढँग से नहीं कर पाते हो तो फिर कुशल तलवारबाज बनने की आशा कैसे करते हो ?'' गुरु ने यह कहते हुए उसे भगा दिया कि अगर वह ऐसा ही नालायक रहा तो उसे वापस लौटना होगा। लेकिन लड़का भागा नहीं, और उसने मन लगाकर अच्छी तरह झाड़ू–पोंछा करना शुरू कर दिया, हालाँकि अब वह और अधिक भ्रमित हो गया था। यह सोचकर, कि उसने गुरु को अप्रसन्न कर दिया था, वह और दुखी हो गया। गुरु को प्रसन्न करने के उद्देश्य से, अब वह अतिरिक्त सावधानी और मनोयोग से, फर्श झाड़ने पोंछने लगा।

एक दिन जब वह फर्श पोंछ रहा था तो गुरु जी उसके पास टहलते हुए आये और अपनी छड़ी से नवजवान की पीठ पर मारा और चले गये। अगले दिन भी यही हुआ। फिर कई दिनों तक ऐसा ही होता रहा– वह फ़र्श पोंछ रहा होता था कि अचानक गुरु जी आकर छड़ी से उसकी पीठ पर, कभी सर पर, कभी कंधे पर मारकर चले जाते। नवजवान को गुरु के व्यवहार पर आश्चर्य हो रहा था। वह समझ नहीं पा रहा था कि उसे क्यों पीटा जा रहा था। इसलिए एक दिन उसने गुरु से पूछ लिया, ''गुरुदेव क्या आप मुझसे नाराज़ हैं ?'' गुरु ने कहा,''मेरे बच्चे, मैं तुमसे नाराज़ नहीं हूँ, परन्तु तुम क्यों पूछ रहे हो ?'' लड़के ने कहा, 'अगर आप नाराज़ नहीं

हैं, तो रोज़ मुझे छड़ी से मारते क्यों हैं ?'' गुरुजी हँसे और कहा, ''यह तुम्हारे प्रशिक्षण का हिस्सा है। अब से तुम मेरी छड़ी की चोट से बचने का दाँव सोचकर, उससे बचने की कोशिश करो।''

नवजवान और भ्रमित हुआ लेकिन गुरु के निर्देशानुसार अब वह गुरु की छड़ी की अप्रत्याशित और अचानक चोट से बचने का दाँव खेलने लगा। इसलिये अगले दिन जब वह ठीक ढ़ँग से फर्श पोंछने में, एकदम तल्लीन था, उस समय भी उसका ध्यान गुरु की छड़ी की चोट से बचने पर केन्द्रित था। गुरु उसी हाल से अंदर आये, जिससे इसके पहले आये थे, और लड़का उनके वार से बचने में सफल हो गया। कई दिन बीते और अब वह प्रायः हर बार गुरु की छड़ी की चोट बचाने में सफल होने लगा। अगले दिन गुरु जी एक नहीं, कई बार आये– वह भी तब, जब उनके आने की और मारने की आशा बिल्कुल नहीं होती थी, और लड़का उनका वार बचाने में सफल होने लगा। उसको अपने काम–फ़र्श को ठीक से पोंछना, और गुरु के आकस्मिक हमले, दोनों पर एक साथ अपना ध्यान केन्द्रित करने का अभ्यास हो गया था। यद्यपि लड़का गुरु के कुछ वारों से बच जाता था, लेकिन ज्यादातर उसको अच्छी मार पड़ती थी क्योंकि गुरु अपने दाँव लगातार बदलते रहते थे और उसी समय मारते थे जब वह असावधान होता था।

कई महीने बीत गये। अन्त में लड़का इतना सावधान हो गया कि वह गुरु के हर संभावित वार और योजना को भाँप कर, उनके वारों से स्वयं को बचा लेता था। लड़के को इस खेल में अब मज़ा भी आने लगा था क्योंकि वह समझ रहा था कि इससे गुरुदेव प्रसन्न हो रहे हैं। साथ ही फ़र्श पोंछने के रोज़ रोज़ के एक जैसे कार्य में, परिवर्तन होने से स्फूर्ति भी बनी रहती थी। इस पर भी नवयुवक हैरान था कि उसका मार खाने या उससे बचने की दिनचर्या से, तलवारबाजी प्रशिक्षण का क्या संबंध था।

शीघ्र ही शिष्य गुरु का वार बचाने में निपुण हो गया। गुरुदेव ने उसे बुलाया और निर्देश दिया, ''आज से मैं चाहता हूँ कि तुम मेरे वार से न बचो, बल्कि झाड़ू से मेरे वार को रोको। हाँ, तुम्हें यह भी बताना है कि अब तुम झाड़ू कुछ ठीक लगाने लगे हो लेकिन अभी उसमें और सुधार की ज़रूरत है।'' लड़के को गुरु की कार्यप्रणाली कुछ समझ में न आई, लेकिन वह उनके निर्देशों का पालन करता रहा।

गुरुदेव के वार को रोकना, वार से बचने से ज़्यादा मुश्किल लगा। इसलिए कुछ दिनों तक तो बेचारा शिष्य बड़ी मार खाता रहा। उसे फर्श की सफ़ाई और साथ ही गुरुदेव के अचानक प्रकट होने पर, उनकी छड़ी की मार को रोकने के लिए भी अपना ध्यान केन्द्रित करना पड़ता था। बड़ी मार खाने के बाद वह धीरे–धीरे अपनी झाड़ू से अपने आपको गुरु के वार से बचाने में सफल होने लगा। यह खेल कई वर्ष चला और अन्ततः एक दिन नवयुवक गुरु की हर चोट अपनी झाड़ू से रोकने में निपुण हो गया। अब वह गुरु के हर वार और पैंतरे को रोकना और बचाना सीख गया। गुरु ने पैंतरे बदल बदल कर वार किया परन्तु शिष्य की एकाग्रता इतनी बढ़ गई कि वह बंद आँखों से भी वार को तुरंत रोकने और बचाने में सफल होने लगा।

जब गुरुदेव ने समझ लिया कि शिष्य वार रोकने और बचने की कला में निपुण हो गया है तो एक दिन उन्होंने शिष्य को बुलाया और कहा, ''तुम्हारा प्रशिक्षण लगभग समाप्त हो चुका है और अब तुमको वापस जाना होगा।'' लड़का चक्कर में पड़ गया क्योंकि इतने दिनों तक उसने तलवार को तो हाथ भी नहीं लगाया था। उसने गुरु से शिकायत करते हुये कहा, ''लेकिन गुरुजी, मैं यहाँ तलवारबाजी सीखने आया था और इतने वर्षों में मैंने उसका एक पाठ भी नहीं सीखा है, और न ही हाथ में तलवार पकड़ी है।'' गुरु ने नवजवान पर करुणापूर्ण दृष्टि डाली और कहा, ''मेरे बच्चे, अब तो तुम एक निपुण तलवारबाज बन गये हो। लेकिन तुम्हें मेरी बात पर विश्वास नहीं है, इसलिये इसे पकड़ो।'' यह कहते हुए, गुरु ने एक तलवार उसकी ओर फेंकी। लड़के ने कुशलता से तलवार थाम ली। अब गुरु जी ने अपनी तलवार निकाली और आक्रमण करने को तैयार हुए। बिना कुछ सोचे लड़के ने गुरु का आक्रमण निष्फल कर दिया। गुरु ने दोबारा आक्रमण किया लेकिन लड़के ने गुरु के हर वार का सामना किया। झाड़ू से किया हुआ अभ्यास उसके काम आया। थोड़ी देर तक गुरु और शिष्य में इसी प्रकार युद्ध चला और अन्त में लड़का अपनी कुशलता पर स्वयं आश्चर्य से अभिभूत हो गया। अब वह समझा कि इतने वर्षों तक झाड़ू पोंछा लगाते लगाते तथा गुरु के साथ मार खाने का खेल खेलते हुये, उसका समय व्यर्थ नहीं हुआ था बल्कि वह बहुत कुशल तलवार बाज़ बन गया था।

• • •

अधिक जानकारी के लिए सम्पर्क करें–

रुस्तम बी. फ़लाहाटी

सी/२०१, किशान्त बिल्डिंग, गन पाउडर रोड,

मझगाँव, मुंबई–४०००१०

फोन (०२२)–२३७७६३१३, (०२२) २३७५५६०६

ई–मेल : yougoicome@rediffmail.com